शान्तिदूत

अमर बापू

लेखक—

सैयद कासिम अली
"साहित्यालकार"

प्रकाशक—
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय,
पो० बक्स न० ७०,
ज्ञानवापी बनारस सिटी।

प्रथम बार]

१९५३

[मूल्य २॥)

विषय-सूची

अध्याय	विषय	पृ० स०
१	बापूका जन्म-परिचय और बा	१
२	बापूकी अहिंसा और एकता	१८
३	परोपकारी बापू	२१
४	राजनीति और बापू	२६
५	नारी समाज और बापू	३०
६	सन्देशवाहक बापू	३६
७	कर्मयोगी बापू	४७
८	बापूका न बुझानेवाला प्रकाश	५८
९	अमरशहीद लिंकन और बापू	७३
१०	बापूकी अमर वाणी	७७
११	हृदय सम्राट बापू	८७
१२	बापूकी स्मृति	१०८
१३	बापूके पत्र	११२
१४	बापू की पुस्तकें	१२१
१५	बापू और गोरक्षा	१२२
१६	बापूके हत्यारे	१२६
१७	बापूका वियोग	१३१
१८	बापूकीहत्याका मुकद्दमा	१३७
१९	बापूकी जीवन-झांकी	१४०

बापू वाणी

अनुशासित और बुद्धियुक्त प्रजातन्त्र दुनियाँ की सर्वोत्कृष्ट शासन-प्रणाली है। दोषपूर्ण धाराओं, अज्ञान और नासमझी पर आधारित प्रजातन्त्र अन्त में विद्रोह का रूप लेकर अपने आप नष्ट हो जायगा। अत हमे जन-समुदाय को शिक्षित कर तैयार करना चाहिये। उनके हृदय में देश के प्रति उत्साह और लगन है और वे यह भी चाहते हैं कि उन्हे कोई शिक्षित करे तथा आगे बढाये। परन्तु इस कार्य के लिए बुद्धिमान कर्मठ कार्यकर्ता चाहिए ताकि इतना सगठन हो जाये कि समस्त राष्ट्र बुद्धिपूर्ण व्यवहार करे।

बन्धुत्व का यह आशय नही कि जो तुम्हारा बन्धु बने और तुमसे स्नेह करे, उसी के तुम बन्धु बनो और उससे स्नेह करो, यह तो सौदा हुआ। बन्धुत्व मे व्यापार नही होता और धर्म तो हमे यह सिखाता है कि बन्धुत्व केवल मनुष्य मात्र से ही नही, वरन प्राणीमात्र से होना चाहिए। यदि हम अपने शत्रु से भी स्नेह करने को तैयार नही हुए, तो हमारा बन्धुत्व केवल ढोंग है। दूसरे शब्दो मे यो कहे कि जिसने बन्धुत्व की भावना हृदयस्थ करली उसका कोई शत्रु ही नही।

जिसमें शुद्ध श्रद्धा है उसकी बुद्धि तेजस्वी रहती है, वह स्वय अपनी बुद्धि द्वारा जान लेता है कि जो वस्तु बुद्धि से बडी है, परे है, वह श्रद्धा है। श्रद्धा से आत्म-ज्ञान की वृद्धि होती है और हृदय शुद्ध हो जाता है। बुद्धि मस्तिष्क में उत्पन्न होती है, श्रद्धा हृदय में। जगत का यह अविच्छिन्न अनुभव है कि बुद्धि-बल से हृदय-बल हजार गुना अधिक है। श्रद्धावान को कोई परास्त नही कर सकता, बुद्धिमान को हमेशा पराजय का डर रहता है।

मैं ऐसे भारत में रहना चाहता हूँ जिसे गरीब से गरीब आदमी अपना देश माने, जिसके बनाने में, जिसकी उन्नति में हर ग़रीब की बात को सुना समझा जावे। उस भारत मे ऊँच-नीच का भेद न रहे, सब बराबरी के हकदार हो। उसकी सब जातिया प्रेम-प्रीति से हिली-मिली रहें। छुआछूत इस देश में टिक नही पायेगी, न नशे की चीजो के लिए जगह रहेगी। स्त्रियो तथा पुरुषो के एक-से हक होंगे। मैं ऐसे भारत का सपना देखता हूँ।

समर्पित—

इमामुलहिन्द मौलाना अबुलकलाम आजाद को

सैयद कासिमअली 'साहित्यालंकार'

शान्तिदूत

अमर बापू

बापूका जन्म, परिचय और बा

भारतने उस ऋषि को पाकर आजादी का दीप जलाया।
दुनिया ने इस विश्ववन्धु का अमर सन्देशा पाया॥

— ❀ —

धन्य है वह देश जिसमे जन्म लेकर महात्मा गान्धी ससार के महान् उपकारी सिद्ध हुए। उनका जन्म ता० २ अक्टूबर सन् १८६९ ई० मे काठियावाड के इलाके पोरबन्दर छोटी स्टेट में हुआ था। उनका बाल्यकाल का नाम केवल 'मोहन' था जो प्राइमरी स्कूल में मोहनदास के नामसे लिखा गया था। आपका कुटुम्ब तीन पीढी से काठियावाड़ की रियासतोमें प्रधान पदो पर अथवा प्रधान मत्री के स्थानो पर रहा है। इसलिये इस कुटुम्ब का प्रभाव गुजराती बनिया होते हुए भी अधिक था। आपके दादा भी पोरबन्दर स्टेट के दीवान थे जो कि राजभक्ति में विशेष अग्रसर रहते थे। आपके पिता काया गान्धी अथवा करम चन्द गान्धी राजकोट स्टेट के दीवान थे और उनकी चार पत्नियाँ थी। इनकी माँ का नाम पुतली बाई था और यह सबसे छोटे लडके थे, इनके भाई बहन आदि भी थे। आपकी माँ सनातन विचार की पूजा-पाठ, नेम-धर्म, व्रत आदि धार्मिक कार्यो मे सलग्न रहती थी. जिसका प्रभाव हमारे चरित्र नायक मोहनदास पर भी पडा। ७ साल के पश्चात् सन् १८७६ ई० मे आपको प्राइमरी स्कूल मे भरती कराया और धार्मिक शिक्षा का विशेष प्रबन्ध किया गया। मुश्किल से अभी आप १३ साल के हुए थे कि प्राचीन रूढी के अनुसार आपका विवाह सन् १८८३ ई० मे योग्य धनसम्पन्न कुटुम्ब की कस्तूरबा से कर दिया गया। किन्तु आपके शिक्षण मे कोई अन्तर न आया और आप काठियावाट राज हाई स्कूलमें पढने लगे। सन् १८८५ ई० मे आपके पिता

का देहान्त हो गया परन्तु धर्मपरायणा विधवा माँ ने शिक्षा का पूरा उत्तरदायित्व लेकर १८८७ ई० मे १७ साल की अवस्था मे इनसे मैट्रिकुलेशन पास कराया और उसी साल ये भावनगर साँवलादास कालेज मे भरती हो गये। आपको खेलकूद और शारीरिक शिक्षण आदिसे इतना प्रेम नही था जितना पढने लिखने और ससार के इतिहास, भूगोल और महान् पुरुषो के जीवन चरित्र आदि से था। आप पाठशाला मे सबसे जल्दी पहुचते और छुट्टी होने पर सीधे माँ के चरणो मे नमन करते थे। किन्तु उक्त कालेज मे आपको कई कठिनाईयाँ आईं जिससे चिन्तित हो गये परन्तु इनके मित्रो और चतुर माँ ने सोच विचार करके ४ सेप्टेम्बर १८८८ ई० मे बैरिस्टरी पढने के लिये इन्हे लदन भेज दिया। आप अपनी पूज्य माँ की खास शिक्षाओ को नोट करके विलासी वायुमडल मे पहुचकर विद्याध्ययन करने लगे।

विवाह के ५ वर्ष बाद इसी साल आपके पुत्ररत्न का जन्म हुआ। इगलैण्ड मे आपने क्या किया, किससे मिले और किस तरह जीवन व्यतीत किया यह आपने खुद विस्तार के साथ आत्मकथा मे लिखा है। कई कठिनाइया थी। निरामिष भोजन आदि असभव थे किन्तु हमारे मोहनदास करम चद गान्धी ने मातृभक्ति के आदेशो का अक्षर-अक्षर पालन करके शराब, मासभक्षण और परत्रिया गमन आदि से स्वरक्षा की। पहिले लदन की मैट्रिक परीक्षा पास की और अत्यधिक परिश्रम करके कानून का अध्ययन किया, साथ ही लैटिन और फ्रान्सीसी परीक्षाएँ भी उत्तीर्ण की। अग्रेज मित्रो की प्रेरणा से नाच और सितार बजाने की कला मे भी आप अग्रसर रहे। आपको मिसेज बेसेन्ट और मेडम ब्लाडस्की से परिचय करने के पश्चात् ईसाई धर्मका विशेष आकर्षण हुआ। प्रभु ईसा का वह जैतून पहाड़ी पर दिया गया भाषण आपको विशेष रुचिकर था, जिसमे बुराई का बदला भलाई से देने का सुप्रसिद्ध सिद्धान्त है। इसी के प्रतिरोध मे हिन्दू दर्शन और आध्यात्मिक पुस्तको, ग्रन्थो का मनन किया। केवल ६ मास के परिश्रम के पश्चात् आप जून १८९१ ई० में बैरिस्टरी पास करके केवल २ दिनके पश्चात् भारत को चल दिये। समुद्री जहाज से आप ७ जुलाई १८९१ ई० मे अपनी जन्मभूमि की सेवा मे उपस्थित हुए। सन् १८९२ ई० में आपने राजकोट में बैरिस्टरी आरभ कर दी, परन्तु रियासती

षड्यंत्रो के मुकद्दमो से आपको शान्ति न मिली इसलिये आपने बम्बई मे बैरिस्टरी शुरू की।

पोरबन्दर के शेख अब्दुल्ला की एक व्यापारिक ब्रान्च दक्षिण अफ्रीकामें थी और वहा के न्यायालय मे उसका मुकद्दमा था; उसने मिस्टर मोहनदास करमचद गान्धी को अपना वकील बनाकर अप्रैल १८९३ ई० में दक्षिण अफ्रीका भेजा। यह मुकद्दमा सबसे पहिला था। आपको यहा बहुत ही अच्छा मालूम हुआ। यहा के अग्रेज भारतीयो के साथ पशुवत् व्यवहार करते थे, आप जब नैटाल की कचहरी मे प्रवेश करने लगे तो डरबिन के मजिस्ट्रेट ने पगडी बान्धने पर रोक दिया इसपर आप बहिष्कार करके चले आये, इसी भाँति एक दिन आप प्रेटोरिया रेलमें फर्स्ट क्लास का टिकट लेकर के जा रहे थे कि आपको "काला आदमी" कहकर फर्स्ट क्लास मे बैठने से रोका गया। इस अपमान से आपमे देशभक्ति का वह बीज पडा जो कि भारत के कल्याणार्थ सफल होकर आजादी का वृक्ष फल देने लगा।

जब आप घोडा गाडी पर बैठते थे तो कोचवान के पास बैठना पडता था। यह देखकर आपने एक अर्जी तैयार की जिसमे १० हजार भारतीयो के दस्तखत थे। इसको नैटाल कौन्सिल मे पेश किया और लार्ड डर्बन मिनिस्टर के पास एक परिचयपत्र भी भेजा। अफ्रीकन अधिकारियो में हलचल मच गई और आपने वहा स्थायी रहकर सेवा करने का बीडा उठा लिया। सारे व्यापारी महात्मा गान्धी को वहाँ रहने के लिए विवश कर रहे थे, सबने आपको अपना वकील मानकर मुकद्दमो की फीस के रूप में आर्थिक सहायता देनेका निश्चय किया। आपने मई १८९४ ई० मे नेटाल काँग्रेस स्थापित की, जिसने हिन्दुस्तानियो के हकूक आदि की रक्षा ठोस की जा सके। आप ढाई वर्षतक रहकर ६ मास के लिए भारत आये। भारत मे आपने अफ्रीका के हिन्दुस्तानियो का दयनीय चित्र खीचकर अलख जगाया। २८ नवम्बर १८९६ ई० को आप फिर नेटाल चले गये और वहा के भारतीयो के नेता हो गये। सरकार ने आपसे बोअर युद्धके लिये १० अक्टूबर १८९९ ई० मे यथेष्ट सहायता प्राप्त की। इसी तरह अप्रैल १९०६ मे आपने जहलू विद्रोह मे सरकार को परिपूर्ण सहायता दी और दिलवाई। डरबिन के निकट एक शिक्षाकेन्द्र और आश्रम स्थापित किया। सन्

१६०१ ई० मे भारतीय कान्ग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन मे शामिल हुए और अपनी आवाज उठाकर फिर वापिस चले गये। पहली जनवरी १६०३ ई० मे अब्दुल्ला वाले मुकद्दमे मे प्रिटोरिया मे सफलता प्राप्त हुई। प्रिटोरिया के ईसाई पादरियो ने आपको ईसाई बनाने का प्रबन्ध किया किन्तु वह निराश हो गये। आपके प्रयत्नो से बडी कठिनाइयो के पश्चात् ब्रिटिश सरकार झुक गई और आपको अप्रैल १६०३ ई० मे सुप्रीम कोर्ट वना दिया। सन् १६०४ ई० मे ब्रिटिश इडियन असोसियेशनकी ट्रान्सवाल मे स्थापना की और वही से हिन्दी, तामिल, गुजराती, अंग्रेजी मे "इडियन ओपिनियन" अखवार निकलवाया। १६०६ को ब्रह्मचर्य जीवन की प्रतिज्ञाएँ हुई। सन् १६०६ ई० के सितम्वर मे अग्रेज सरकार अफ्रीका ने एक नया कानून हिन्दुस्तानियो के सीमित वन्धनो का स्वीकृत किया था। जिसका विरोध गान्धीजी ने तीन हजार साथियो के साथ किया जोहान्सवर्ग मे ११ सेप्टेम्बर १६०६ ई० को विरोधी सभाएँ हुई। इस काले कानून के विरुद्ध श्री अली सा० आदि का प्रतिनिधि मडल गान्धीजी की सरक्षणता मे २० अक्टूबर १६०६ मे लदन गया। परन्तु मदान्ध गौराङ्गो ने कुछ भी ध्यान न दिया। आपने फौरन सत्याग्रह का विगुल वजा दिया। १ जुलाई १६०७ ई० को इस काले कानून के विरोध मे वैरिस्टरी का त्याग करके निर्भीक सेवा कार्य मे जुट गये। गान्धीजी को ४८ घटे के भीतर ट्रान्सवाल छोडने का सरकारी आदेश मिला। किन्तु उन्होने साफ इनकार कर दिया। सन् १६०८ ई० मे आपको दो मास की सजा मिली। जोहान्सवर्ग के जेलखाने मे स्थानान्तर किये गये। जनरल स्मट्स के साथ समझौता तोड दिया जिससे आपने पुन सत्याग्रह आन्दोलन आरभ कर दिया। इसवार फिर दो मास की सख्त सजा दी गई और उन्हे कैदी की पोशाक मे पैदल प्रोटोरिया जेल पहुचाया गया। ८ फरवरी १६०८ ई० को समझौते के विरोधमे आप पर आक्रमण भी हुआ। जून सन् १६०६ ई० मे फिर इगलैण्ड गये और वहा अपनी आवाज पहुँचाकर नवम्बर मे आगये तथा हिन्द स्वराज्य का प्रणयन शुरू कर दिया और पहली वार टाल्सटाय को पत्र लिखा। सन् १६१० ई० मे जोहान्सवर्ग मे टाल्सटाय फार्म की स्थापना कराई। आपकी ही अध्यक्षतामे नैटाल के मजदूरो ने वहुत वडी हडताल की। इसमे सरकार और भारतीयो से समझौता कराने केपटाउन गये। समझौते की शर्तें तय हो गईं, सरकार ने अगले वर्ष काला

कानून उठाने का वचन दिया। इसी साल सन् १९१२ ई० मे आपने यूरोपियन वेषभूषा का सदैव के लिये परित्याग कर दिया। सन् १९१३ ई० में समझौते की शर्तें पूरी न करने पर सत्याग्रह आरंभ किया। आन्दोलन ने सामूहिक सत्याग्रह का रूप धारण किया। कस्तूरबा गान्धी को भी सजा हुई। आपको फाउन्टेन की जेल में रखा गया। वहा सभी सत्याग्रही कैदियो के साथ अनुचित व्यवहार किया गया। पहली बार आपने अपने आश्रम मे आश्रमवासियो के आचरणसे क्षुब्ध होकर उपवास रखा। सन् १९१४ ई० मे फिर आश्रमवासियो के निमित्त १४ दिन का उपवास रखा। सरकारने आपकी शर्तें मान ली और आपको सफलता मिली। इसी वर्ष आप फिर भारत आये और इगलैण्ड भी गये, उस समय महान् युद्ध के बादल चहुँ ओर मँडरा रहे थे। जनवरी १९१५ ई० में भारत आगमन पर स्वर्गीय कवीन्द्र रवीन्द्र ने पत्र लिखकर आपको "महात्मा जी" की उपाधि मे सम्बोधित किया। २५ मई १९१५ मे आपने अहमदाबाद में साबरमती आश्रम की स्थापना की।

सन् १९१६ ई० मे आपने देशव्यापी दौरा किया; बर्मा भी गये और लखनऊ काग्रेसमे प० मोतीलाल नेहरु से भेंट की। मजदूरो के सुधारो का विशेष प्रयत्न किया। आप सन् १९१७ ई० मे बिहार गये। वहाँ डा० राजेन्द्र प्रसाद से भेंट करके चम्पारन आन्दोलन प्रारम्भ कराया। सन् १९१८ ई० मे दिल्ली गये और लार्ड चेम्सफोर्ड से मिले। महायुद्ध सम्बन्धी सेवाए प्रदान करके रगरूट भरती कराये। फरवरी में मजदूरो की माग की पूर्ति के लिये तीन दिन का उपवास किया। सन् १९१९ ई० बडी सुविख्यात है। एक तो मान्टेगू चेम्सफोर्ड की सुधार आदि की घोषणा और इडियन नेशनल काँग्रेस पर महात्माजी का अटल प्रभाव का होना। काँग्रेस का उद्देश्य अब पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करने का था। मौलाना मुहम्मद अली और शौकत अली आदि मुस्लिम लीडर आपके साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर चल रहे थे। २४ नवम्बर १९१९ को आपने दिल्ली मे खिलाफत कान्फ्रेन्स की अध्यक्षता करके खिलाफत आन्दोलन मे पूरा हिन्दू-सहयोग भर दिया। रौलेट एक्ट बना, उसके विरुद्ध अप्रैल मे हडताल हुई और अमृतसर मे जलियान वाला बाग का वह हत्याकाण्ड हुआ, जिसमे बेकसूर दीन हीन, अनाथ बूढे, बच्चे, अबलाएँ पेट के बल रेंगाये गये और नन्हें-नन्हे बच्चे गोदियो और झूलो पर से झूलते हुए गोली के शिकार हुए। यह आततायी आक्रमण जनरल डायर और लार्ड चेम्सफोर्ड मान्टेगू के शासन मे हुआ।

देशमे इस हत्याकाण्ड से धाँय-धाँय करके आग लग गई। महात्माजी को इसीलिये पंजाब जाने से रोका गया। असहयोग आन्दोलन का जन्म हुआ, देशभर मे हडतालें हुईं। कलकत्ता कॉग्रेस ने असहयोग का प्रस्ताव महात्माजी की प्रेरणा से ही पास किया। सितम्बर १९१९ ई० मे अहमदाबाद से 'नवजीवन' गुजराती और अक्टूबर से 'यंग इंडिया' अंग्रेजी साप्ताहिक पत्रो का सम्पादन शुरु किया। देश में हडतालें हुईं और रेलवे मे झगडे-फिसाद, मार काट भी हुई इसलिये महात्मा जीने ३ दिन का उपवास भी रखा और देशको शान्त रहने तथा कार्य करने का उपदेश दिया। सारे देशमे तिलक के बाद आपका स्थान उच्च हो गया।

सन् १९२० ई०के अगस्त मे कलकत्ता कॉंग्रेस से असहयोग आन्दोलन पास होकर इतना देशव्यापी हुआ जिसमे लगभग ३० हजार आदमी जेल गये। उधर दक्षिण मे मोपला मुस्लिम विद्रोह भडक उठा। गान्धीजीने चर्खा और खद्दर की आवाज बुलन्द की और कांग्रेस मेम्बरो को अनिवार्य कर दिया। विदेशी चीजो का बहिष्कार, शराब पीने का विरोध भी किया गया। नवम्बर मे गुजरात विद्यापीठ की स्थापना की गई और दिसम्बर मे नागपुर कांग्रेस मे पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पास हुआ। ज्योंही हंटर कमेटी की रिपोर्ट महात्माजीने देखी उनकी आँखें खुल गईं। जुलाई १९२१ ई० मे विदेशी बहिष्कार का आन्दोलन देशव्यापी हुआ। प्रिन्स आफ वेल्सके भारत आगमन परअ सहयोग और बहिष्कार स्वरूप आन्दोलन से देश भडक उठा। बम्बई मे विद्रोह हो गया हरिपुरा मे कत्ल और अग्निकाण्ड हुए, जिससे महात्मा जी को नवम्बर मे ४ दिन का अनशन व्रत रखने को विवश होना पडा। महात्मा गान्धी ने असहयोग को रोक दिया किन्तु १९२२ ई० में हरदुई मे फरवरी मे गिरफ्तार कर लिये गये, आप को ६ वर्ष की सजा अहमदाबाद कोर्ट ने देकर पूना के पास बेजवाडा जेल भेज दिया गया। हजारो आदमी जेल गये। चौराचोरी काण्ड के कारण फिर आपको असहयोग स्थगित करना पडा। अपने एक मित्र की पुत्री का अनुचित प्रेम सम्बन्ध का हठ देखकर आपको उपवास करना पडा। इसीसाल कुछ पूंजीपतियो ने कॉंग्रेस कार्य के लिये अपनी तिजोरिया भी खोल दी। सेठ जमनालाल बजाज ने वर्धा से एक लाख रुपया उन वकीलो की सहायता के लिये दिया जिन्होंने अपनी वकालत कांग्रेस के लिये छोड दी थी। हजारो विद्यार्थी कालेज आदिसे अलग हो गये। देशभर में कॉंग्रेस

का ठोस नियमत प्रचार हो गया। हर एक के हृदय मे गुलामी का कलंक खटकने लगा।

जनवरी १९२४ ई० मे आप को जेल से छोड दिया गया, क्योंकि आपकी आंत का आपरेशन हुआ था। आप वैकोम, त्रावनकोर गये जहां हरिजन कार्य सम्पन्न किया। बेलगाव कॉंग्रेस के अध्यक्ष होकर कौंसिल प्रस्ताव पास हुआ। हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए दिल्ली में २१ दिन का उपवास किया। २४ नवम्बर को साबरमती आश्रम में आश्रमवासियो की करतूत पर ७ दिन का फिर उपवास किया। सन् १९२५ मे अखिल भारतीय चर्खा सघ की स्थापना की, सन् १९२७-१९२८ ई०मे सायमन कमिशन का भारत भरने बहिष्कार किया। मद्रास मे नील्स की मूर्ति हटाने केलिए और १२-२-२८ ई० को बारडोली गुजरात में सत्याग्रह आन्दोलन छेड़ा गया। सन् २९ ई० मे लार्ड इर्विनने गोलमेज कान्फ्रेन्सकी घोषणा की, आपने विरोध किया। आपको विदेशी वस्त्र की होली जलवाने पर जुर्माना भी हुआ। सन् १९३० ई० मे सत्याग्रह सचालन के लिये काग्रेस के अधिनायक नियुक्त होकर १२ मार्च को दडी यात्रा पैदल चल करके एक जोश भर दिया। २०० मील की यात्रा ७९ स्वयंसेवको के साथ समुद्र के किनारे की। अनेक स्थानों पर गोलियां चली। बगाल फरमान फिर जारी हुआ। असहयोग आन्दोलन और विदेशी बहिष्कार का गांवोमें घर-घर प्रचार हुआ। ५ मई ३० को दडी नमक कानून तोडने के अपराधमें आप गिरफ्तार कर लिये गये और यरवदा जेल भेज दिये गये। मार्च ३१ ई० में सिरसी कर्नाटक मे लगानमें छूटके लिये सत्याग्रह किया। ४ जनवरी ३१ को बम्बई में गिरफतार हो फिर यरवदा जेल भेज दिये गये। वहाँ से ८ मई १९३३ को छोड़े गये। ३१ दिसम्बर ३१ ई० को देशव्यापी आन्दोलन हुआ, एक लाख व्यक्तियों ने एक साल तक जेलो को भर दिया, जगह-जगह हड़तालें, खूनखच्चर हुए। अप्रैल मे चटगाँव के सरकारी शस्त्रालयपर हमला किया गया, मई में विद्रोह बढ गये। सबसे भयानक हत्याकाण्ड शोलापुरका था। लार्ड इरविन से समझौता हो गया। ३१ मार्च को कराची में काग्रेस अधिवेशन हुआ जिसमें महात्माजी दूसरी गोलमेज कान्फ्रेन्स के भारत भरमें प्रमुख प्रतिनिधि चुने गये। जनवरी में सभी राजनैतिक कैदी मुक्त हो चुके थे। इसी वर्ष भगतसिंह को फासी दी गई जिससे देशमे अशान्ति फैल गई। आपने हिन्दू मुस्लिम एकता का नारा लगाया, किन्तु कानपुरमे साम्प्रदायिक

झगडे हो गये। इसी समय सरहद के अब्दुलगफ्फार खाँ गान्धी का लाल कुर्तीदल सामने आया और यू० पी० के किसानो मे आन्दोलन बढ गया। फिर भी महात्मा जी लार्ड वेलिन्गटन द्वारा शान्ति और समझौते पर बढते रहे। लार्ड इरविन चले गये थे।

गोलमेज कान्फ्रेन्स

ब्रिटिश सरकारके निमत्रण और प्रेरणा पर कई भारतीय नेता लदन गये, उनमे महात्मा गान्धी भी गये। सन् १९३० ई० मे कायदे आजम मुहम्मद अली जिन्ना, मालवीयजी, सरोजिनी नायडू और अली वन्धु मौलाना मुहम्मद अली, शौकत अली आदि गये। स्वर्गीय मौलाना मुहम्मद अलीने खिलाफत और काँग्रेस दोनो का प्रतिनिधित्व किया। नवाव सी० भोपाल भी गान्धीजी के साथ ही गए थे और उस समय की भक्ति पर वडे सुविख्यात हुए थे। हा, तो मौलाना मुहम्मद अलीने खुले शब्दो मे पूर्ण स्वतन्त्रता की गर्जना करते हुए घोषित किया था कि या तो मैं स्वराज्य की चावी लेकर के जाऊँगा अथवा अपने प्राण यही दे जाऊँगा। अभाग्यवश ब्रिटिश सरकार से कोई निर्णय न हुआ और भारतकी आजादी पर उसका लाडला सपूत मुहम्मद अली कुरवान हो गया। इस तरह गोलमेज परिषद पर मुस्लिम नेता का वलिदान अमर हो गया। महात्मा जी वापिस आ गये। ४ जनवरी ३१ ई० को महात्माजी बम्बई ही मे गिरफ्तार कर लिये गये और यरवदा जेलमे नजरवद कर दिये गये। ८ मई, ३३ को रिहाई हुई। सन् १९३२ ई० मे काँग्रेस गैरकानूनी कर दी गई। अगस्त १९३२ ई० मे कम्यूनल अवार्ड प्रकाशित हुआ। आपने अछूतो को हिन्दुओ मे ही मिलाने के लिए अनगन उपवास का व्रत यरवदा जेलमे प्रारभ किया जिससे अछूत सीटो का मिश्रण भी पूना-पैक्ट के रूपमे सशोधित होकर स्वीकृत हो गया। सन् १९३३ ई० की ३१ जुलाई को यरवदा जेल मे नजरवदी हुई और ४ अगस्त को रिहाई हो गई। ४ अगस्त को फिर एक साल की पूनामे सजा हुई और २३ अगस्तको हरिजनो के सुधारार्थ २१ दिनका उपवास करने के कारण शीघ्र रिहाई हो गई। ११ फरवरी १९३३ ई० मे "हरिजन" अखवार का सप्ताहिक सस्करण अहमदावाद से शुरू हुआ। आपने जुलाई मे फिर सत्याग्रह विघटन किया और हरिजन उद्धार के लिये देशव्यापी दौरा किया। एक और उपवास आपने किया। इसी साल

कांग्रेस से उत्तरदायित्व लेकर आपने वाइसराय से समझौता करना चाहा किन्तु वाइसरायने इन्कार कर दिया।

अनशन पर श्रद्धा

सन् ३३ ई० ही मे यरवदा जेल से छूटने के पश्चात् सेप्टेम्बर मे श्री० ए० टी० हिंगोरानी के एक प्रश्न के उत्तर मे महात्माजी ने अनशन और मृत्यु पर एक उपदेश देकर कहा कि "इस तरह मैं कभी नही मर सकता, मुझे वीर गति पसंद है जो कि फासी या गोली लगनेसे ही प्राप्त होती है और ईश्वरने चाहा तो मैं इसी तरह मरुगा। (यह घोषणा उनकी सत्य हुई) सन् ३४ ई० मे केवल हरिजन कार्य आपका प्रमुख रहा। १४ दिसम्बर को अखिल भारत ग्राम उद्योग संघ की स्थापना कराई। हरिजनो के लिये ७ दिन का वर्धा मे अनशन किया। अक्टूबरमे बम्बई कांग्रेस अधिवेशन मे आपने कांग्रेस से नियमानुकूल अलग होने का फैसला किया। पूना मे महात्मा जी की ट्रेन उलटने की असफल चेष्टा हो गई। कुछ लोगो की धारणा मे सुभाष बाबू की अध्यक्षता के प्रति संकेत है। ३० अप्रैल १९३६ ई० में वर्धा मे ही निवास स्थान निश्चित किया और सेवाग्राम का स्थान आश्रम के रूपमे सुविख्यात किया। अक्टूबरमें महात्माजी कलकत्ता आकर बीमार हो गये परन्तु बंगाल के राजनैतिक कैदियो को मुक्ति दिलाने मे सफल हुए। विद्या-मंदिर और वर्धा शिक्षा सम्मेलन आदि को प्रोत्साहन मिला। सन् १९३९ ई० मे रियासत राजकोट मे शासन सुधार सम्बन्धी व्रत रखा। दूसरे महायुद्ध की घोषणा के समय सन् १९४० ई० मे वाइसराय से कई मुलाकाते की। ३० दिसम्बर ४१ ई० को आप काग्रेस के नेतृत्वसे मुक्त हो गये।

सन् ४२ ई० की क्रान्ति

देशकी विकट समस्या देख-सुनकर आपको कांग्रेस नेतृत्व सुशोभित करना पडा। क्रिप्स योजना अस्वीकृत कर देनी पडी। वर्धा मे कार्यसमिति ने "भारत छोडो" प्रस्ताव पास किया। सरकारने चुनौती का प्रबन्ध किया। ८ अगस्त को कांग्रेसने बम्बई में "भारत छोडो" पास किया और ९ अगस्त को सभी नेता और कार्यकर्त्ता

गिरफ्तार कर लिये गये। देश भरमे एक क्रान्ति पैदा हो गई। कई जगह सरकारी कचहरी थाने, रेलवे खजाने लूटे गये, इमारते और पदाधिकारी जलाये गये। दगे-फिसादो का तूफान उठ वैठा। उघर यूरोप मे लडाई और इघर भारतकी क्रान्ति ने एक आश्चर्य कर दिखाया। १८५७ के बाद यह दूसरा गदर विद्रोह नही सच्ची आजादी की राष्ट्रीय क्रान्ति थी।

महात्माजी गिरफ्तार करके पूना के आगाखाँ महल मे नजरवद कर दिये गये। ६ मई १९४४ ई० को वीमारी के कारण रिहा किये गये। १० फरवरी ४३ ई० को आगाखॉ महल मे आपने महान् अनगन किया जिससे ब्रिटिश साम्राज्यकी नीव हिल गई, क्योकि भारतीय सरकार ने "तोड-फोड ४२" का दोष काग्रेसपर क्षेपा था। २२ फरवरी को आगाखा महल ही मे नजरवदी काल मे आपकी पत्नी श्रीमती कस्तूरवा का देहान्त हो गया। सारे देश मे प्रतिशोध, रोष और शोक की मात्राएँ दौड गई। जगह-जगह उनकी स्मृति स्वरूप काँग्रेसने स्तभ, लायब्रेरी, सडको और मुहल्लो के नाम रखे और एक निधिसे कस्तूरवा-आश्रम स्थापित किया गया जिनमे कई वहने सेवा करने की ट्रेनिङ्ग ले कार्य कर रही है। आप वीमारी के कारण रिहा कर दिये गये। फिर आपने हिन्दू मुस्लिम समझौते की प्रेरणा से कायदे आजम मुहम्मद अली जिन्ना से वम्वई मे भेट की किन्तु उसमे भी सफलता न मिली। सन् १९४५ ई०मे नेताओ की रिहाई हो गई। लार्ड वेविलने समझौते के प्रयत्न किये। सन् ४६ ई० मे कलकत्ता मे फिसाद हो गया, इसलिये महात्माजी नोआखाली मे पैदल घूमे। सन् १९४६ ई० मे केविनट मिशन की घोपणा और दिल्लीमे सरकार द्वारा राजनैतिक पार्टियोका सम्मेलन हुआ। चूँकि ब्रिटिग साम्राज्यके प्रधान मत्री मि० एटलीने भारतके भाग्यका निर्णय कर दिया था इसलिये २२ जनवरी ४७ ई० को विधान का पौधा लगा और २ सिप्टेम्वर को पहली हिन्दू-मुस्लिमो की सयुक्त राष्ट्रीय सरकार स्थापित हुई। आपने साम्प्रदायिक झगडो को मिटाने के लिये कलकत्ता, नोआखाली और विहार मे दौरा किया। कलकत्तामें ५ सिप्टेम्वर को महात्माजीने अनगन करके वहा शान्ति पैदा की थी। २० फरवरी ४७ ई० को मि० एटली की घोपणा के अनुसार हिन्दुस्तान पहले जून ४८ ई० मे स्वतन्त्र हुआ और फिर १५ अगस्त ४७ ई० को विभाजन कर पाकिस्तान वना दिया गया। लार्ड माउन्टवेटिन ने २६ मार्च को ही

निमन्त्रण दे दिया था। और १३ मार्च को बहुत बड़ी अपील महात्मा जी तथा मुस्लिम लीग के कायदे आजम जिन्ना ने शान्ति की निकाली थी।

जुलाई ४७ ई० मे महात्माजी कश्मीर गये, वहा शान्ति का मार्ग बतलाया और १५ अगस्त को अंग्रेज हट गये, देश स्वतन्त्र हो गया परन्तु इस स्वतन्त्रताकी खुशी मे पाकिस्तान और हिन्दुस्तान सरकारो ने जनता की सुख शान्ति नही प्राप्त की। २७ अक्टूबर को एशियाई सम्मेलन हुआ। इधर साम्प्रदायिक मनोवृत्तियो ने अग्निमे घी डालकर देश को धाँय धाँय कर के भस्म करना शुरू कर दिया। काँग्रेस शासन को हिन्दू राज्य और पाकिस्तान को मुसलिम राज्य समझनेवालो ने लूटपाट, आग लगाना, स्त्रियोको पकडना तथा निरपराध बच्चे बूढोका निर्ममता से वध करना शुरू कर दिया। मानवता का रूप पशुता ने ले लिया। गाँव के गाँव उजाड हो गये, हजारो धनी निर्धनी हो गये। अमीर फकीर बन गये और गुन्डागिरी का वायुमडल छा गया। अभागे सन् १९४८ ई० मे महात्मा जी को दिल्ली के सैकडो मुस्लिमो के घरो की अग्नि, उनकी लाशो, उनकी मसजिदो, उनकी औरतो का वह वीभत्स काण्ड न देखा गया तभी तो उनको अनशन का अतिम शस्त्र लेना पडा। १२ जनवरी से १८ जनवरी तक उन्होने "मुस्लिम भी भाई है और मनुष्य है" के हितार्थ उपवास किया। परन्तु महारथियो ने अपना सर्वस्व अर्पण करने का प्रणकरके उनको सेवाएँ अर्पित कर दी थी। ज्योही महात्माजीने व्रत तोडा और अपनी ७ शर्ते मुस्लिम-प्रेम की पेश की कि मस्जिदो की वापिसी व रक्षा, ख्वाजा सा० का मजार, भागे मुस्लिमो के घर और जायदाद वापिस करो तथा उनको भाई समझकर मनुष्य समझो। किन्तु साम्प्रदायिक सत्ता की भूखी सस्थाके एक मदनलाल ने ता० २० जनवरी को दिल्लीकी प्रार्थना सभा में उनपर बम फेंका, परन्तु वह महापुरुष बाल-बाल बच गये। किन्तु ३० जनवरी को ठीक ५ बजे प्रार्थना सभामे नाथूराम विनायक गोडसे की पिस्तौल की ३ गोलियो से महात्मा जी का यह नश्वर शरीर उनकी वीरगति की प्रतिज्ञा या घोषणा को सार्थक करते हुए निर्जीव हो गया। दूसरे दिन उसी बिडला भवन से उनका मृत्यु शव एक जुलूस के साथ जमुना की रेती मे चिता बनाकर चदन की १५ मन लकडियो में भस्म हो गया। सारा देश क्या, सारे जगत मे एक हूहल्ला मच गया। अहिंसाके पुजारी की हिंसासे उसी की हिन्दू

जाति के एक पशु ने हत्याकर के हिन्दू ही क्या हिन्द पर कलक का टीका लगा दिया। उनके साथी और अनन्य भक्त जो "बापू" कहकर प्यार करते थे, को बेबापू कर दिया। बापू शहीद हो गये। अब उनका चलता फिरता शरीर नही है, परन्तु उनकी आत्मा हमे सन्मार्ग, प्रेम, सत्य, अहिसा, विश्व मानव-भक्ति की प्रेरणाएँ दे रही है। बापू चले गये अब उनके षड्यन्त्रकारियो को कुछ भी हो परन्तु बापू सचमुच एक अवतारी भगवान थे। जबही तो ससार की सत्ताओ ने उनके शोकमे भाग लेना सौभाग्य समझा था।

महात्मा जी के बडे लडके मणिलाल गान्धी अफ्रीका मे व्यापार करते है और वहाँ राजनीति मे प्रमुख भाग लेते है। दूसरे लडके रामदास गान्धी नागपुर से एक अखबार निकालते है। और देवदास गान्धी दिल्ली से हिन्दुस्थान टाइम्स आदि पत्र निकालते है। यह आचार्य राजगोपालाचारी गवर्नर जनरल के दामाद है। और श्री०हीरालालजी गान्धी, जिनका देहान्त बम्बईमे अभी जुलाई ४८ ई० को हुआ है।

माता कस्तूरबा

यद्यपि वीराङ्गना दुर्गावती और लक्ष्मीबाईकी तरह कस्तूरबाने तलवार नही उठायी, अहल्याबाईकी तरह सिंहासनपर बैठकर राज-कार्य नही चलाया, फिर भी उनमे अपार शोर्य और साहस था और वे गुण विद्यमान थे, जो गाँधीजी-जैसे नर-रत्नकी धर्मपत्नीके लिये आवश्यक थे। वे राष्ट्र की सच्ची सेविका थी, धरतीके टुकडोपर नही, देशके मानव-मात्रके हृदयोपर उनका राज्य था। उनकी सत्ता महल और झोपडीपर समानरूपसे थी।

उन्नीसवी सदीका अन्तिम चरण गुलामी और विदेशी शासनकी बेडीसे जकडा हुआ था। भारतवर्षके लिये यह महान् सकटका समय था। भारतीयोको पराधीन बनाये रखनेकी बडी-से-बडी चाल चली जा रही थी। इसी समय भारतके भाग्य-गगनमे कुछ दिव्य नक्षत्र उदय हुए, पुण्यसलिला भागीरथीके तटपर तीर्थ-राज प्रयागमें हिंदूधर्मके भूषण महात्मा मालवीयजीका जन्म हुआ। स्वाधीनता की स्वच्छ ज्योत्स्ना अँगडाई लेने लगी। सयोगकी बात है, इसी परिस्थितिमें गाँधीजी और उनकी धर्मपत्नी कस्तूरबाबाईने पोरबन्दरमे एक ही समय दो-चार मास आगे-पीछे सन् १८६९ ई० मे जन्म लिया। दोनोंके पिता एक दूसरेके

घनिष्ठ मित्र थे । कस्तूरबाईके पिता गोकुलदास मकनजी एक प्रसिद्ध व्यापारी थे और माताका नाम वृजकुँवरि था । 'बडे बापकी बडी बेटी' होनेसे उनका लालन-पालन बहुत अच्छी तरह हुआ । कस्तूरबाईके माता-पिता कट्टर वैष्णव थे और धार्मिक विचारोमे उनकी दृढ आस्था थी । तेरह सालकी ही अवस्थामे कस्तूरबाईका विवाह गाँधीजीसे कर दिया गया । गृहस्थाश्रम-प्रवेश सरस और सुखपूर्ण था । यद्यपि गाँधीजी पत्नीके प्रति कुछ कडे थे, फिर भी दाम्पत्य-जीवनकी स्निग्धता और मार्दवसे दोनोके दिन सानन्द बीत गये । कस्तूरबाईका चरित्र इतना विशाल और गौरवपूर्ण था कि महात्मा गाँधीका एकपत्नीव्रत अक्षुण्ण रहा । अठारह सालकी अवस्थामे ही कस्तूरबाईको माता बननेका सौभाग्य मिला ।

गाँधीजीकी जीवन-यात्रा कस्तूरबाके साथ आरम्भ हुई । गाँधीजी को यही सनक लगी रहती थी कि उनकी पत्नी आदर्श पत्नी कहलाये । बाल्यावस्थामे कस्तूरबाको पर्याप्त शिक्षण नही मिला था । गाँधीजीकी प्रेरणासे उन्होने गुजराती भाषाका थोडा-बहुत ज्ञान प्राप्त कर लिया । गाँधीजी पातिव्रत्य धर्म-पालन पर बहुत जोर देते थे । उनकी स्वाभाविक इच्छा थी कि पत्नी उनके कठोर नियन्त्रणमे रहे । विवाह होनेके कई साल बादतक गाँधीजी हाईस्कूलमे पढते थे, परन्तु पत्नीके साथ घरपर रहकर सुखपूर्वक गृहस्थ-जीवन बितानेमे उन्हे किसी अडचनका सामना नही करना पडा । गाँधीजीको बैरिस्टरीका प्रमाणपत्र प्राप्त करनेके लिये विलायत जाना पडा । इस अवकाशमे कस्तूरबाको सयम, नियमन और सहिष्णुताका अच्छा अवसर मिल गया । पतिकी दक्षिण अफ्रीका-यात्रामे तो उन्हे साथ जाना पडा । वे गाँधीजीने उनकी योजनाओमे सहमत हो जाया करती और विदेशमे उन्होने आदर्श हिंदू-महिलाकी तरह पतिके चरण-चिह्नोका अनुगमन किया । कस्तूरबाको गृहस्थ-जीवनका आनन्द और सुख अफ्रीकामे ही मिल सका । तपोमय जीवन-यज्ञमे स्वार्थोकी आहुति कर पतिके सुख-दु खमे हाथ बँटाना ही उनका कर्तव्य हो गया । वे एक महान् सत्याग्रहीकी जीवनसगिनी बन गयी । अफ्रीकाका जीवन उनके लिये अग्नि-परीक्षा था । गाँधीजीने अपने 'सत्यके प्रयोग' ग्रन्थमे लिखा है कि 'अपने अत्याचारो और कठोर नियमोसे जो दु ख मैंने अपनी पत्नीको दिया है, उसके लिये अपने आपको कभी क्षमा नही कर सकता ।' एक हिन्दूपत्नी ही ऐसे अत्याचारों को सहन कर सकती है । बा सहनशीलताकी अवतार थी । कस्तूरबामे जहाँ

स्वाभिमान था, वही कष्टसहिष्णुताकी अपरिमीम शक्ति भी थी। अफ्रीकामे गाँधीजीका जीवन एक प्रयोगशाला वन गया। उन्होने वाको कपडे धोने, वर्तन मॉजने आदिकी भी शिक्षा दी थी। एक वार कस्तूरवा दक्षिण अफ्रीकामे असाध्य रोगसे पीडित थी, डाक्टरोने मासका झोल (रसा) देनेका निश्चय किया, परन्तु वा ने अति दृढतासे भगवान्के भरोसे अस्वीकार कर दिया। सरकार द्वारा विवाहो-की रजिस्टरी कराये जानेका कानून स्वीकृत होनेपर आशका उठ खडी हुई कि वहुत-से भारतीयोका विवाह अवैध ठहरा दिया जायगा और विवाहिताएँ रखेल समझी जायँगी। गोरी सरकार इस तरह भारतीयोकी सम्पत्तिपर हाथ साफ करना चाहती थी। इसपर गाँधीजीके नेतृत्वमे आन्दोलन चलाया गया और वे कुछ सत्याग्रहियोके साथ जेलमे वन्द कर दिये गये। पतिकी अनुगामिनी कस्तूरवाने वहाँकी महिलाओमे घूम-घूमकर सत्याग्रहका शङ्ख फूँका और स्मट्सकी सरकारने उन्हे भी जेलमे वद करनेमे ही अपनी सुरक्षा समझी। इस अग्निपरीक्षामे गाँधी-दम्पति सफल हुए। सत्याग्रहके सेनानी और उसकी पत्नीकी यह एक असाधारण विजय थी। जीवनका एक अध्याय अफ्रीकामे ही पूरा हो गया।

सात्विकता और सादगी वा के जीवनकी वहुत वडी निधि थी। गाँधीजीके भारत लौटनेपर वा को विकट-से-विकट और सघर्षपूर्ण परिस्थितियोका सामना करना पडा। गाँधीजीने चम्पारन-सत्याग्रहके समय देहातके किसानोको धैर्य देने और देहातोकी सफाई आदिकी व्यवस्था करनेका काम वा को दिया। श्रीमती कस्तूरवाने घर-घर जाकर चम्पारनके दीन-हीन और निर्धनताके कारण मलिन रहनेवाली स्त्रियोको सफाईसे रहने तथा प्रतिदिन नहाते रहनेकी सीख दी।

कस्तूरवा सयम और धैर्यकी सजीव प्रतिमा थी। उन्होने अपने शिष्ट और मधुर व्यवहारसे गाँधीजीकी महत्ताके मन्दिरके कपाट खोल दिये। गाँधी-दम्पतिका जीवन अत्यन्त पवित्र और प्रेमपूर्ण था। सन् १९०६ ई० मे महात्माजीने ब्रह्मचर्य-व्रत ले लिया, इस समय वा की अवस्था पैंतीस सालकी थी। उन्होने एक साध्वी और सती पत्नीकी तरह वासनाओका त्याग कर गाँधीजीके लिये एक आदर्श महापुरुष वननेका मार्ग परिष्कृत कर दिया। गाँधीजीने एक स्थलपर लिखा है—"जिस दिनसे ब्रह्मचर्यका आरम्भ हुआ, हमारी स्वतन्त्रता भी आरम्भ हो गयी। मेरी पत्नी स्वामी और पतित्वके नियन्त्रणसे मुक्त हो गयी, मै भी उस तृष्णाकी दासतासे मुक्त

वह कभी पूरा नही हो सकेगा ।' हिंदूधर्ममें आस्था रखनेवाली बा की इच्छानुसार उनकी अस्थियाँ प्रयागराज त्रिवेणी पहुँचायी गयी ।

कस्तूरबा एक श्रद्धालु पत्नी और स्नेहमयी माता थी । महामना मालवीयजीने समवेदना प्रकट करते हुए कहा था—'ईश्वरको धन्यवाद है कि वे सौभाग्यवती होकर गयी, जिस पदको पानेके लिये भारतीय महिलाएँ प्रार्थना किया करती है ।'

२

बापू की अहिंसा और एकता

जुग जुग जीवित रहे अहिंसा, घर घर एकता का अभिमान।
चिरंजीवी भारत में होवे, बापू के वह दृढ़ वरदान ॥

जिस तरह ससारमे शस्त्र शक्तिके लिये ऐटम वमका आतक छा गया है, इसी भाति महात्मा गाँधीकी अहिसाके आत्मसयमी शक्तिके शस्त्रने चक्र सुदर्शनकी भाति अपना ऐतिहासिक प्रभाव विश्व पर छा दिया है। वडे वडे वैज्ञानिक और दार्शनिक इस मौलिक शक्तिको आश्चर्यकारी समझ रहे है। सर्वप्रथम ईसाने इस अहिसाकी शिक्षा दी थी कि "तेरे एक गालमे कोई तमाचा मारे तो तू दूसरा गाल बतला दे", यही नही उन्होने अन्धे, लगडे, लूले, कोढी मानवाकी भी सेवा इसी नीति पर की थी, किन्तु उनके भक्त आज उसके विरुद्ध ही है। जैनी और बुद्ध धर्मोमे भी अहिसाके प्रचारार्थ किसी चिउँटी तकको मारनेकी निदा की गई है, और कई सिद्धान्तवादी मुह ढॉककर रखते है, नगे पैर चलते है और रातको भोजन तक नही करते, किन्तु पूँजीपति लोग व्याज और उधारीके नामपर हजारो गरीबोकी जमीन, जायदाद व मवेशी लेकर उनके नन्हें २ बच्चो, बूढोको जवरन बेकारी और भूखकी ज्वालामे ढकेल देते है। इसी तरह पैगम्वर इस्लामने कभी किसी विरोधी या महान् आतताई दुश्मनको अपशब्द तक नही कहा और न उसके विरुद्ध अशुभ कामना ही की है। वल्कि (१) भाई चारा, (२) शरावका वहिष्कार, (३) व्याज खाना पाप, (४) स्त्री सम्मान, (५) दीन हीन सेवार्थ ४०वॉ भाग दान स्वरूप देना इस्लामने ससारके सामने पेश करके अपना विश्वव्यापी अहिसक आदर्श दिया, वलिक पैगम्वरके नवासे हजरत इमाम हुसेनने नैतिक शिक्षाके लिये अपना वलिदान करके मुस्लिम धर्ममे शहादतका पद सर्वश्रेष्ठ कर एक आदर्श दिया है। लेकिन आज इसी धर्म के अनन्य भक्त कई जघन्य कार्य करनेसे नही चूकते। परन्तु हमारे पूज्य

महात्मा गाँधीने केवल धार्मिक शक्तिके लिये ही नही,ऐतिहासिक उदाहरण पेश करने के लिये भारतकी आजादी इसी अहिंसाके बलपर दिला दी । जो कि सब धर्मों और सबसे महानता प्रकट करती है । वह अहिंसाके सच्चे शारीरिक और मानसिक पुजारी थे । उनके लेखो, भाषणो और वादविवादोमें अहिंसाको एकता, सत्यता, शान्ति, प्रेम और एकाग्रताके मनोबन्धनमे प्रविष्ट किया है । वह निर्भीकता और वीरताका शस्त्र भी अहिंसा बतलाते हैं । एक बार एक बछिया को अधिक बीमार अथवा मरणासन्न देखकर उन्होंने शीघ्र उसका अन्त करा दिया था। जिसपर जैन समाजने नहीं मालूम क्या-क्या कहा था ? स्त्री जाति के शत्रुका मुँहतोड मुकाबिला करनेकी प्रेरणा देकर कहते थे कि कायरता अहिंसा के विपरीत है । यदि कोई शेर, साप या आततायी तुमपर हमला करे तो तुम मुह न छिपाओ और उसका मुकाबिला करो यही अहिंसा है । उनकी अहिंसाका अर्थ है कि किसी भी प्राणी को दुख न दो बल्कि उसको सुख शान्ति-सन्मार्ग बतलाओ । सच्ची अहिंसा मनुष्यमें जबही उदय हो सकती है कि वह साहसी, पराक्रमी हो परन्तु उसमे आत्माभिमान और आत्मबल परिपूर्ण हो । महात्माजीकी अहिंसाकी सफलता भारतकी उस स्वतत्रतासे है जिसको भारतने सहज ही आत्म-साधनाके प्रयोगो और आत्म-ताडनाके बलपर प्राप्त कर ली है ।

दूसरा सबसे बडा हथियार उनका 'एकता' का था । सब राजनीतिके विद्यार्थी .ानते है, कि हिन्दुस्तानमें अब एक धर्मका राज्य स्थायी नही रह सकता ।

हिन्दू-मुस्लिम एकता

भारतमे विदेशी सत्ताका अस्तित्व ही हिन्दू-मुस्लिम अनैक्यका परिणाम रहा । निरन्तर सम्प्रदायवादी शक्तियोको प्रोत्साहन देनेकी नीतिने इस एकताको सदैव दूर रक्खा । किन्तु गाँधीजीकी दूरदर्शिता और प्रयत्नने सन् १९२१ में जिस हिन्दू-मुस्लिम ऐक्यका उदाहरण दिया वह इतिहासमे बेजोड है । लेकिन हमारे दुर्भाग्यने फिर साम्प्रदायिकता उभडी और पृथक् निर्वाचनकी ब्रिटिश पद्धतिने इस समस्याको अत्यधिक उलझा दिया । साम्राज्यवादी सरकारके सतत् प्रलोभन और प्रचारने इस खाईको भी न भरने दिया । गाँधीजीने कितने ही प्रयत्न किये परन्तु प्रतिक्रिया-वादी शक्तियोकी वृद्धि होती गई । अततोगत्वा धार्मिक विद्वेषकी आग फैलाकर ब्रिटिश नीतिने भारतको विभाजित कर डाला । गाँधीजीने किसी भावी आशाके

लिये इस दारुण क्लेशको भी सहा । विद्वेषकी आग दिनोदिन प्रज्वलित हुई। इसी विभीषिकामें महान् गाँधी अकेला दर-दर घूमा और भाईका खून भाईको दिखाता फिरा—इस अद्‌भुत कार्यने जादू सा कार्य किया । घोर अन्धकारके बीच तापसी गाँधीको प्रकाशकी रेखा दिखाई पडने लगी जिसके लिये वे दिनोदिन प्रयत्नशील होते गये । अपने जीवनकी वाजी लगाकर नोआखाली, कलकत्ता, विहार तथा देहलीमे जो दैवी सफलता प्राप्त की उसे हिन्दू सम्प्रदायवादी फासिज्म सहन न कर सका और दैवात् उस प्रकाशकी अविकसित ज्योतिको बुझाकर ही दम लिया । यह ज्योति व्यक्ति—गाधी नही रह गया था किन्तु वह अमर महामानवीय शक्ति वन चुकी थी, जिसकी पूजा और अर्चना यह अभागा देश ही नही वरन् सारा विश्व करेगा जिसके अभावमे आज कोने-कोने से सन्तप्त पुकारे सुनाई पड रही हैं ।

विश्वकी मानव क्राति और एशियाके मुसलिम राज्य भी यह कभी सहन न कर सकेंगे । महात्मा गाँधी मुगल-शासनकी प्रभाको परख चुके थे, फिर एक हजार सालकी मुसलिम हुकूमतने भारतको परिपूर्ण ही किया है, भारतीय खजाना भारतके लिये ही खर्च हुआ है । उनके भवन, मजार, महल, किले, मसजिदे और स्मृतिया हिन्दू समाजमे विद्वेष नही पैदा करती वल्कि अपने एक मिलापका वैभव वतलाती है । तथा आजादीकी लडाईमे मुसलमानोने भी जेल जाकर, अपनी जायदादे वर-वाद करके और अपनेको मिटाकर दूध-पानीकी तरह मिला कर इन्कलाव, क्रान्ति का बिगुल बजाया था । इसलिये हिन्दू-मुसलिम एकताकी अति आवश्यकता है । विना एकताके कभी भी कॉग्रेस या हिन्दुस्तानकी हुकूमतका भला नही हो सकता । और न आजादीका स्थायी प्रकाश ही रह सकता है । पाकिस्तान भी अगर ऐसा करे तो उसे भी कठिनाईका सामना करना पडेगा । महात्माजीने इसीलिये गो रक्षा और हिन्दी प्रचारको कानूनी रूप नही होने दिया । यदि महात्माजीकी एकताके विपरीत कदम उठाया गया तो यह खेल मिट्टीमे मिल जायेगा और महात्मा जीकी आत्मा खुद एकताके दुश्मनोको घृणा करके धिक्कारेगी और शाप देगी ।

—o—

पर उपकारी बापू

तनमन धनसे कीजिये, निसदिन पर उपकार ।
यही सार नर देह में, वाद-विवाद विसार ।।

महापुरुप कृष्णके गीता वाक्य 'सम्भवामि युगे युगे'के अनुसार प्रत्येक युगमें प्रत्येक जातिके जागरणका इतिहास कितना आश्चर्यजनक हुआ करता है । जातिके जागरणका यह इतिहास ही मानव सभ्यताका रूप धारण करता है । इस जागरणके मगलमय शुभ मुहूर्तमे जब मनुष्यका अन्तरशायी नारायण अपनी विराट् महिमाको लेकर जागृत हो उठता है, जिस समय उसका धूलिधूमिल किरीट स्वर्णाभ सूर्यकी किरणोसे उज्ज्वल होकर दिग्दिगन्तको आलोकित कर देता है; मनुष्यकी अन्तरात्माका उत्साह उल्लसित हो उठता है । और तव वह नवसृष्टिके निर्माणका अनुभव करने लगता है । यह अनुभव स्पर्श उसके लिये कितना आनन्दप्रद होता है, वही जान सकता है ।

महामानव के रूप में बापू

भारत वहुकालीन पराधीनताके कारण प्रमादग्रस्त एव जड वन गया था उसकी प्रगति पगु हो गई थी । हम अपना आत्मवल एव आत्मविश्वास खो वैठे थे । इस घोर निराशामय अन्धकारके बीच एक महामानव प्रेमकी दीप-शिखा हाथमें लेकर हमारे समक्ष आया, वह था महामानव महात्मा गाधी, तप पून कृषकाय सन्यासी एव सर्वस्व त्यागी । उसके स्पर्श मात्रसे ही भारतकी मानवात्मा पुनरुज्जीवित हो उठी । उसके प्रेमके प्रोज्वल प्रकाशमे जातिको अपने लक्ष्यका सन्धान मिला । कोपीनधारी सन्यासीके कम्वु कठसे जागरणका गण सिंहगर्जन कर उठा । उसके इस गर्जनसे अत्याचारियोके प्राण कांप उठे, उनके रोम-रोममे भयकी सिहरन

होने लगी और वे अपने विनाशकी अन्तिम घडिया गिनने लगे। ऐसा था यह जाति का जागरण। यह जागरण केवल देहका ही नही आत्माका भी जागरण-काल था, तभी तो एक-एक आत्माने सारी जातिके साथ अपनी अखडताको अनुभूत करते हुए एक-एक स्फुलिंगके रूपमे जातिको तेजोमय कर दिया।

महान् क्रान्तिकारी ऋषि के रूप मे

भारतके उत्थानके अर्थ इस महान् क्रातिकारी ऋषिने अपनी अन्तरात्माके समस्त आवेगको लेकर जातिकी पुजीभूत वेदनाका अनुभव किया। उसके कठसे प्रेमका नवमत्र उद्घोषित हुआ। वह प्रेम जो अपनी जातिके लिये आत्मदानके साथ सर्वस्व त्याग कर देनेमे अणुमात्र भी कुठाका वाध नही करता। वह प्रेम जो अपने को असह्य तीव्र तापमे दग्ध करके मृत्युन्जयी वना डालता है। जाति इसी प्रेमकी प्रतीक्षामे थी। सव सम्पत्तिके होते हुए भी हम इस प्रेमके अभावके कारण ही अव तक अकिंचन वने हुए थे। नवयुग के इस ऋषिने हमारी आँखोमे अँगुली डालकर हमे वताया कि हमारी सारी दुर्वलताओके मूलमे जो कारण काम कर रहा है वह प्रेमका अभाव है। मनुष्यसे किस प्रकार प्रेम किया जाता है यह हमने अव तक जाना ही नहीं। इस प्रेमके विना हमारा जप तप, हमारी पूजा आराधना सव कुछ व्यर्थ सिद्ध हुई और हम अपनेको पराधीनताके पाशसे मुक्त करनेमे असमर्थ रहे। जातिको, अपने समग्र देश-वासियोको अपने सम्पूर्ण मन प्राणसे प्यार करना सीखो। तुम्हारे जो भाई नग्न, दरिद्र, दलित और अछूत है, उन्हे आत्मीय समझकर गले लगाओ, देखना—सारा-दैन्य दुख, उसकी सारी दुर्वलताएँ उसी प्रकार नष्ट हो जायेगी जिस प्रकार सूर्यलोकके प्रथम स्पर्शसे अन्वकार।

आत्मबल की महत्ता

पशुवलके औद्धत्यके विरुद्ध आत्मवलकी तेजोद्दीप्त वाणी लेकर महात्मा गान्धीने जातिका नेतृत्व किया। मनुष्यके मनुष्योचित अधिकारोंके लिये उन्होने देशवासियोमे एक अदम्य प्रेरणा भर दी। मनुष्यताकी प्रतिष्ठाके लिये पराधीनता के वन्धनोको छिन्न-भिन्न करना ही होगा। यह सुदृढ सकल्प देशके कोने कोनेमे गूँज उठा। आसुरी शक्तिने दीन दरिद्र भारतके इस अर्धनग्न साधकके सकल्पका उपहास किया। उसकी महान् शक्तिकी उपेक्षा की। यह उपहास. उपेक्षा, दमन

और निर्यातन पशुबलकी रुद्र मूर्ति, सभी उस शान्त क्रान्तिके अग्रदूतको पराजित करनेमें असफल सिद्ध हुए। मुखमण्डलपर सौम्य भाव, अधरोंपर स्नेहसिक्त स्मित रेखा और अन्तरमें शान्तिका अपूर्व स्रोत। राग और द्वेषसे ऊपर उठकर उसने अपनेको सत्य पर प्रतिष्ठित कर लिया था। वह मृत्युका इस जीवनमें अतिक्रम कर चुका था। अगाध मानव-प्रेमकी अनुभूतिसे जो अन्तर्ज्योति बन गया था, वह आत्मनिष्ठ एवं अन्तराराम था। क्या घर, क्या बाहर, क्या राजद्वार और क्या कारागार, सर्वत्र उसकी अभ्यर्थना और चरणवन्दना होने लगी। भारतका वह हृदयसम्राट् बना, सबके अन्तरतलमें उसकी मंगल मूर्तिकी प्रतिष्ठा हुई और उसकी साधना यथार्थ सार्थक हो उठी। समस्त विश्वने आश्चर्य-मिश्रित नेत्रोंमें इस शान्ति और अहिंसाके देवदूतका विजयाभिमान देखा और उसकी मंगलमय मूर्ति देखी। कितनी चमत्कार पूर्ण थी यह साधना! और कितना तप पूत था यह साधक! युग-युगके शृंखलित पुरुष मरणके भयको भूल गये और नारी भूल गयी कर्म कठोर जीवनकी विभीषिकाएँ। मुक्तिके आनन्दमें दलके दल स्त्री-पुरुष भावावशमें विभोर होकर चल पड़े उस विजयाभियान के सैनिक बन कर। कितना उल्लास था उनके अन्तर में। कारागारका भय उस उल्लासको कुण्ठित नहीं कर सका। स्वजन-परिजन का स्नेह-बन्धन उस जय-यात्राकी गतिको रुद्ध नहीं कर सका। दमन और उत्पीड़न, दुःख और अपमानकी मात्रा जितनी ही बढ़ती गयी, जातिके अन्तरका आवेश, उसकी गतिका तरंगवेग उतना ही बढ़ता गया। पशुबलकी स्पर्धा जितनी ही बढ़ती गई उतनी ही जाति की संकल्पशक्ति अजेय बनती गयी। उन्होंने प्राचीन भारतके सत्यद्रष्टा ऋषिकी तरह जातिको सत्य पथपर अडिग रहने और अहिंसाके अमोघ अस्त्रको ग्रहण करनेका उपदेश दिया। उन्होंने कहा—आक्रमण-कारीके प्रति किसी प्रकारका आक्रोश या घृणा मनमें धारण न करके और सब प्रकार के हिंसात्मक कार्योंसे अपनेको विरत रखो। अहिंसाके अमोघ बलमें अपनी आत्मा को बलवान बनाओ और उसे प्रेमामृतसे अभिषिक्त करो। उसने कहा—मोहग्रस्त, आत्म-विस्मृत, मरण-भयभीत इस जातिको अहिंसाके अमृतका आस्वादन कराकर मैं मृत्युंजयी बना डालूँगा। प्रचण्डसे प्रचण्ड पशुबल भी उसके आत्मतेजको म्लान नहीं कर सकेगा। अहिंसा द्वारा हिंसाका, प्रेम द्वारा द्वेषका प्रतिरोध करके मैं दिखा दूँगा कि अहिंसा ही मानव धर्म है और हिंसा पशुधर्म है और यह मानवधर्म पशुधर्मके

सामने कभी पराजित नही हो सकता। भारतकी राजनीतिमे, उसके राष्ट्रधर्ममें इस सत्यकी प्रतिष्ठा करनेके लिये महाप्राण गांधी इस देशमे अवतीर्ण हुए थे। इस सत्यकी प्रतिष्ठा करके ही उन्होने अमरपद लाभ किया है।

सत्य एव अहिंसाकी उनकी साधना अखण्ड भारतमे आजीवन चलती रही। यह साधना जीवनके किसी विशेष क्षेत्रको लेकर नही थी वल्कि मानव जीवनके सव पहलुओके साथ इसका अविच्छेद सम्बन्ध था। क्या धर्म, क्या राजनीति क्या समाज नीति, सवमे मानव धर्मकी प्रतिष्ठा करना उनके जीवनका लक्ष्य था। वह जानते थे कि उनकी मानव धर्मकी यह साधना सर्वाङ्गीण रूपमे सिद्ध नही हुई है। इसलिये देशके स्वाधीन हो जानेपर भी उनकी दुष्कर तपस्या निरन्तर चलती रही। अपनी इस तपस्यामे उन्होने कभी भी क्लात एव भ्रातिका वोध नही किया। मानव कल्याणव्रतमें लीन इस तपोधनकी तपस्याकी अग्नि देशके एक प्रान्तसे दूसरे प्रान्तमे— कभी विहारमे, कभी दिल्लीमे और कभी पजावमें निरन्तर उद्दीप्त होती रही। जीर्ण शरीर और भग्न स्वास्थ्य होनेपर भी उनका मनोवल अक्षुण्ण वना रहा। हिंसा-प्रतिहिंसा, भीषण नर-सहार एव रक्तपातके दिगन्तव्यापी घोर अन्धकारके वीच उनकी दृष्टि कभी धूमिल नही हुई, यह अन्धकार उनका गतिरोध करनेमे समर्थ नही हुआ। अन्तर्ज्योति जो थे वह! अपने अन्तरके आलोकमे अकुतो-भय वनकर निरन्तर चलते रहे। गीताके शव्दोमे वह अनपेक्ष, शुचि, दक्ष, उदासीन और गतव्यथ थे। सुख, दुःख, लाभ-अलाभ, जय-पराजय उनके लिये समान थे। उनके जीवनमे व्यर्थता जैसी कोई वस्तु थी ही नही, पराजयकी ग्लानि उनके जीवनको स्पर्श नही कर सकती थी। वह तो जानते थे कि भगवानके कार्य-साधनके लिये निमित्त वनकर वह इस धराधाम पर आये है—'निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन्'। भगवानका कार्यसाधन उनके द्वारा हो रहा है, यही न उनके लिये परम आत्मसन्तोषका विषय था। वह आजीवन एकाकी वनकर अपने पथपर चलते रहे। उनकी दृष्टि वरावर स्वच्छ एव अनाविल वनी रही। सनातन सत्यकी प्रचण्ड चेतना उनके प्राणोको अहर्निश स्पन्दित करती रही। अमोघ अस्त्र धारण करके उन्होने कार्य किया और इस निर्वीर्य जातिमे वीर्यवलका उद्वोधन किया। कामराग-विवर्जित वलकी प्रतिष्ठा करके उन्होने क्षत्रियत्वकी प्रतिष्ठा की। व्यथित भारतकी आत्माने उनमें रूपपरिग्रह किया

था। भारतीय सभ्यता एव संस्कृतिमे, भारतीय धर्म एव आदर्शमे जो कुछ श्रेष्ठ, जो कुछ महान् एव जो कुछ महिमाशाली है, उन सबके वह मूर्तिमान स्वरूप थे। अपने जीवनको सच्चे मानव धर्मके पालनमे उत्सर्गकर भारतवर्षको विश्वमे जो स्थान उन्होने इस युगमे प्रदान कर दिया है वह उसके इतिहासमे स्वर्णाक्षरोमे अकित रहेगा।

राजनीति और बापू

बापू आज नही हो! पर है जग जीवन पर छाप तुम्हारी।
महाकाल के चक्रो पर भी अंकित जीवन माप तुम्हारी।।

भारतवर्ष मे कभी धर्मतन्त्र (सङ्गठित धार्मिक सङ्घ के आचार्य अथवा अध्यक्ष का शासन) की स्थापना नही हुई। फिर भी इस देश के राजनीतिक विचारको ने प्राय इस बात को स्वीकार किया था कि राजनीति धर्म के सिद्धान्तो पर आधारित होनी चाहिए और उसको दर्शन का प्रकाश मिलना चाहिए। कौटिल्य जैसे राजनीतिज्ञ ने भी, जिसको कूटनीति का आचार्य माना जाता है, इस सिद्धान्त को प्रतिपादित किया था कि दण्ड नीति (राजनीति) आन्वीक्षिकी (दर्शन), त्रयी (धर्म-शास्त्र) और वार्ता (अर्थशास्त्र) से सम्बद्ध होनी चाहिए–(आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति विद्या। अथर्व २, १, १) उसने अपने ग्रन्थ अर्थशास्त्र मे कुछ अपवादो का भी उल्लेख किया है, । जैसे मानव सम्प्रदाय के राजनीतिज्ञ अन्तिम तीन, वार्हस्पत्य सम्प्रदाय के अन्तिम दो और शुक्राचार्य के अनुयायी केवल अन्तिम (दण्ड नीति) को ही राजशासन के लिए आवश्यक मानते थे। परन्तु कौटिल्य का निश्चित मत था कि राजनीति को दर्शन और धर्म से अलग नही किया जा सकता।

धर्म का अर्थ किसी सम्प्रदाय विशेष से नही था। इसका मन्तव्य देश मे सामान्यत स्वीकृत धार्मिक भावना, सामाजिक व्यवस्था, न्याय विधान तथा नैतिक आचरण से था। फिर भी यह मानना पडेगा कि व्यवहार मे धर्म का स्वरूप सस्थात्मक हो जाता था। और इसका स्थान प्रथा अथवा परम्परा ले लिया करती थी। देश के भीतर राजशासन मे इसी अर्थ मे धर्म का प्रयोग होता था। दूसरे राष्ट्रो मे धर्म का प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध-परक प्रथा अथवा कानून अर्थ में होता था। युद्धावस्था मे 'धर्मयुद्ध' और 'धर्म विजय' के रूप में धर्म का प्रयोग होता था। पहले

का अर्थ है, स्वीकृत नियमो के अनुसार युद्ध करना, दूसरे का अर्थ विजित राज्य मे आधिपत्य स्वीकार करा कर उसे पुन. प्रतिष्ठित करना, उसका अपहरण अथवा शोषण न करना। इसके विपरीत 'असुर विजय' (पर-देशापहरण) और लोभ-विजय (लूट और शोषण) को भारतीय राजनीति अनुचित समझती थी।

महाभारत के पूर्व भगवान् कृष्ण ने धर्म, वर्ण, स्वधर्म, नीति आदि पर व्याख्या की और उनके सार्वभौम रूप को जनता के सामने रखा और सामाजिक तथा राज-नैतिक जडता को दूर किया। यही प्रक्रिया श्रीमद्भागवदगीता मे अकित है। तत्कालीन धार्मिक दुरुहता और कर्मजाल को देखते हुए महाभारतकार व्यास ने धर्म का साराश सीधे सादे शब्दो मे बतलाया —

श्रूयतां धर्मसर्वस्व श्रुत्वा च अवधार्यताम्।
आत्मन प्रतिकूलानि न परेषा समाचरेत्॥

महाभारत के बाद दूसरी जडता भगवान् बुद्ध के समय उत्पन्न हुई। उन्होने धर्म की शुद्ध वैज्ञानिक और दार्शनिक व्याख्या की। मीमासक अर्थ का तिरस्कार कर और उसके नैतिक स्वरूप पर जोर देकर मानवी व्यवहार का उसे आधार बतलाया, इससे प्रमाणवाद, अदृष्ट कर्मकाण्ड और जातिगत अहकार नीचा हुआ तथा नीति और मानव का स्वर ऊँचा उठा। भगवान् बुद्ध की यह नीति प्रधान धर्म थी। उनका सम्बन्ध जनसाधारण से था और उस समय की राजनीति पर भी उनका काफी प्रभाव था।

सम्राट् अशोक ने कुछ शताब्दियो पश्चात् भगवान् बुद्ध के इस नीतिप्रधान 'सद्धर्म' को अपने शासन और राजनीति का आधार बनाया। उसने राष्ट्र का उद्देश्य उसके निवासियो के नैतिक धरातल को ऊँचा करना और उनको सुख पहुँ-चाना रखा। मनुष्यके जीवनमे जितने सम्बन्ध हो सकते है उन सबपर नैतिक उपदेशो को स्थायी शिलाओ और प्रस्तरस्तम्भो पर लिखवा कर प्रवर्तित किया। उसने परराष्ट्र नीति मे सशस्त्र 'दिग्विजय' के स्थान मे 'धर्म विजय' का अनुसरण किया।

अशोक के पश्चात् दूसरा कोई भी सम्राट् नही हुआ जिसने इन आदेशो को राजनैतिक जीवन मे प्रतिष्ठित किया हो। हर्षवर्धन ने अशत उनका पालन किया। भारत की राजनीति परम्परागत और सस्थात्मक धर्म के आधार पर चलने लगी। बारहवी शताब्दि मे मुस्लिम आधिपत्य और अठारहवी शताब्दि मे ब्रिटिश आधि-

पत्य भारतवर्ष मे स्थापित हुए। और इस देश का धर्म राजनीति का आधार न रहा अपितु इस्लाम और ईसाई धर्म राजधर्म हो गये। जिनसे देश का कोई सास्कृतिक सम्पर्क न था। १९ वी शताब्दिमे देश मे राजनैतिक जागरण हुआ। उसके पीछे देशमे सास्कृतिक और धार्मिक चेतना जागृत हो चुकी थी।

राष्ट्रीय महासभा कॉंग्रेस की स्थापना हुई परन्तु शुद्ध राजनैतिक क्षेत्र में पश्चिम का ही अनुसरण हो रहा था। लगभग १९१५ तक राजनैतिक आन्दोलन की यही अवस्था थी। इसी समय देश की राजनीति मे महात्मा गॉधी का आगमन हुआ। महात्मा जी एकातिक राजनैतिक पुरुष नही थे। उनकी प्रेरणा का मूल-स्रोत धर्म और नीति थे। धर्म अपने सकीर्ण साम्प्रदायिक अर्थ मे नही किन्तु अपने व्यापक अर्थ ईश्वर और उसकी कल्याणकारिणी शक्ति मे विश्वास था उनके दैनिक स्वाध्याय मे गीता अनिवार्य थी। ऐसे तो उन्होने स्पष्ट नही कहा है परन्तु बौद्ध, जैन और वैष्णव नीति और आचारका उनके ऊपर गहरा प्रभाव था। जन्मत, स्वभावत और विश्वासत वे सच्ची भारतीय परम्परा मे थे किन्तु वे ससार के सभी ऊँचे आदर्शो और प्रभावो का आदर करते थे। बाह्य प्रभावो मे ईसा, टालस्टाय, रस्किन और मूल इसलाम की सादगी और पवित्रता के वे कायल थे। इन सस्कारो और प्रभावो को लेकर वे राजनीति मे अवतीर्ण हुए। राजनीति केवल उनके लिए विदेशी सत्ता से मुक्ति और भौतिक समृद्धि न थी अपितु मनुष्य को परवशता, परतन्त्रता और उसकी निजी मानसिक और नैतिक गुलामी से मुक्त कर सच्चा मानव बनाना था। राजनैतिक क्षेत्र की प्रधानता इसलिए थी कि भारत गुलाम था और विना गुलामी नष्ट किये मनुष्यका नैतिक स्तर ऊचा नही हो सकता था। महात्माजी ने स्पष्ट रूपसे राजनीति का आधार धर्म और नीति स्वीकार किया, देश के शासन मे उनके पहले भी ये तत्व स्वीकार किये गये थे। अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार मे भी अशोक ने यह तत्व स्वीकार किया था। व्यक्तिगत उद्देश्यो की सिद्धि के लिये भी प्राय इनका अवलम्बन किया जाता था। परन्तु राजनैतिक समस्याओ के हल मे साम, दाम और भेद आदि नीतियो के असफल होने पर दण्ड का ही सहारा लिया जाता था। महात्माजी की मौलिकता यह थी कि उन्होने राजनैतिक जीवन मे धर्म और नीति के क्षेत्र को विस्तृत किया। उनके लिए सम (सहनशीलता और शान्ति) प्रथम और अन्तिम साधन था। वह अन्य तीन साधनो का पूरक नही, उनका

एक ही अस्त्र था—सत्याग्रह । उनका जीवन राजनैतिक स्वतन्त्रता प्राप्त करना, उसकी रक्षा करना और राष्ट्रीय एव अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहार मे सत्याग्रह ही उनका माध्यम था ।

महात्माजी का निधन इस बात का द्योतक है कि ससार उनके उच्चतम आदर्शों के अपनाने मे समर्थ नही है । परन्तु इसमे आदर्श का दोष नही, ससार का दोष है । ऐसा मालूम होता है कि मनुष्य न तो देव है और न पशु किन्तु दोनो का मिश्रण । पशुत्व की वृद्धि मे ससार का विनाश होता है, देवत्व की वृद्धि से उसका उत्थान । देवत्व की वृद्धि ही हमारी साधन और प्रयास का उद्देश्य है । इस प्रकार की साधना मे महात्मा जी का आदर्श मानव जाति का अनुप्राणन करता रहेगा ।

— ० —

नारी समाज और बापू

देख चुकी पुरुषार्थ पुरुष का, अब नारीत्व दिखाना होगा ।
अपनी उन्नति करने को, अपना बलिदान चढ़ाना होगा ॥
सोया हुआ वही पुश्तैनी, अपना तेज जगाना होगा ।
मातृभूमि के शुष्क कणों में, रक्त सलिल पहुँचाना होगा ॥

ससार के इस सर्वश्रेष्ठ सन्त ने अपनी सारी सद्भावनाओ तथा सारे सद्गुणो का श्रेय नारी को दिया । बापू एक नारी की देन को सम्पूर्ण नारी जाति की देन मानते हुए सदैव उसका आभार मानते रहे और भारतीय नारी को उसका पुराना गौरव, मान-सम्मान, महत्ता दिलवाने मे प्रयत्नशील रहे । जीवन मे कितनी बार उन्होने दोहराया है, लिखा है और शायद पल-पल स्मरण किया है—'मुझे जो कुछ प्राप्त हुआ है वह मेरी जननी की देन है जो एक अशिक्षित भारतीय हिन्दू नारी थी ।'

गाधी जी की प्रगति का युग जबसे भारत मे प्रारम्भ होता है, जिसे गाधीयुग के नाम से पुकारा जाता है, उसी युग के साथ भारतीय नारी की प्रगति का युग प्रारम्भ होता है । जो भारतीय नारी समाज शताब्दियो से परदे की बेडियो में जकडा अधोगति को प्राप्त हो रहा था, अपना मान-सम्मान, सत्ता सभी कुछ खोकर अज्ञानता की चरम सीमा को पहुँच चुका था, अधिकारो को खोकर पराधीनता मे सन्तप्त जीवन व्यतीत कर रहा था, केवल मूर्खा, अबला मात्र उसके विशेषण शेष रह गए थे, जिसकी करुण कराहे सुनने का समाज को अवकाश नही था ; उसी नारी समाज को नारी के इस सच्चे सपूत महात्मा गाधी ने चमत्कारपूर्ण प्रगति के क्षेत्र मे लाकर खडा कर दिया । उनसे नारी की यह परावीनता देखी नही गई—उनके हृदय पर नारी की इस दुर्दशा से मार्मिक चोट पहुँची और अपने पराक्रम से उन्होने

नारी समाज पर होने वाले इस जघन्य अन्याय के प्रति समाज को सचेत किया और शताब्दियों की रूढिया छिन्न-भिन्न करके इन अबलाओ का बल बनकर स्तम्भ रूप मे हमारे बीच मे खडे हो गए और उन्हे सहारा दिया। भूले हुए आत्म-सम्मान को अपने पुनीत आत्मबल मे अंकित करके उन्हे प्रगति के मार्ग का अनुसरण कराया। राजनैतिक स्वतन्त्रता की क्रांति उत्पन्न कर दी। नारी प्रगति का आन्दोलन देश की आजादी के आन्दोलन के साथ प्रारम्भ हुआ तथा राष्ट्रीय प्रगति के साथ ही नारी-समाज की प्रगति मे भी चमत्कार उत्पन्न कर दिया। सन् १९३० मे कांग्रेस के आन्दोलनके साथ ही उन्होने भारतीय नारी समाजके परदे का बहिष्कार कर दिया। उनकी पुकार पर कितनी ही नारिया राजनीति के क्षेत्र में आकर खडी हो गई। बापू के बल से भारतीय नारियो को राजनीति मे भाग लेने का अवसर मिला। समाज में, ससार मे, हमारी ख्याती हुई। हमे गौरव प्राप्त हुआ। देश ने अनुभव किया नारी जाति की प्रगति की अनिवार्यता को।

आज बापू के प्रताप से हमारे देशकी नारियो ने, जो कुछ काल पूर्व केवल चौके-चूल्हे तक ही सीमित थी, समाज मे अपना एक सम्मानपूर्ण स्थान प्राप्त कर लिया। वही नारी समाज जो प्रगति मे ससार से शताब्दियो पीछे था, आज तुलना मे किसी भी सभ्य देश के नारी समाज मे पीछे नही है। हमारे देश की नारिया प्रात गवर्नर बनी, आजाद सरकार की गवर्नर थी, आजाद सरकार की मन्त्रिणी के रूप मे योग्यता से कार्य कर रही है, रूस जैसे देश में राजदूत है। राष्ट्र सङ्घ जैसी सस्था में उन्होने योग्यता का परिचय देकर भारतीय नारी की महत्ता को बढाया है। किन्तु इसका सारा श्रेय भारतीय नारी समाज के सम्बल विश्ववन्द्य बापू को है। यह महान् देश उन्ही की देन है, यह ख्याति उन्ही का प्रसाद है। यदि ईश्वर ने नारियो को ऐसा बापू प्रदान न किया होता तो नही मालूम आज भारतीय नारी समाज की क्या दुर्दशा होती। जिस प्रकार शताब्दियो की गुलामी ने इस देश की सभ्यता, संस्कृति को छिन्न-भिन्न कर दिया था, यह देश अपनी महत्ता को भूल कर दूसरो की नकल उतारने मे सलग्न था और अपने देश, अपने समाज, अपनी सभ्यता, अपनी भाषा, अपनी वेशभूषा, सभी को घृणित समझकर पतन की ओर अग्रसर था, उसी प्रकार भारतीय नारी समाज भी अपना सब कुछ भूलकर भारतीयता की इतिश्री कर देता। किन्तु महात्मा

गाँधी ने उसे अनुकूल कल्याणकारी मार्ग का दिग्दर्शन कराया। स्वतन्त्रता सग्राम के क्षेत्र मे लाकर सेवा, त्याग, बलिदान की भावना फूँकी और नारी को उच्च आदर्शों की ओर चलने की प्रेरणा दी। विद्युत् गति सी शक्ति प्रदान करके भारतीय नारी को पुन अबला से सबला बना दिया।

कितनी ही ऐसी नारियो को भी, जिन्हें गँवार कहा जाता था, देश को स्वाधीन कराने का श्रेय प्राप्त हुआ। उन्ही भीरुता की प्रतिमूर्ति नारियो ने कर्मठ वीरता से जेल की यातनाओ को सहन किया। हँसते-हँसते लाठी गोलियो के प्रहारो को ग्रहण किया। ममतामाया, जो भारतीय नारियो की विभूति है, उसे भी ठुकराकर साहस से अपने पुत्रो को फासी के तख्तों पर झूलते देखा। भयङ्कर दरिद्रता का मुकाबला किया, किन्तु अपने पति-पुत्रो को उनके कर्त्तव्य से विमुख नही होने दिया। जिसके फलस्वरूप आज भारतीय नारी को यह गौरव प्राप्त हुआ है। भले ही यह क्षेत्र सीमित हो किन्तु इसी सीमित क्षेत्र के त्याग, तपस्या से ससार मे भारतीय नारी समाज का मस्तक ऊँचा है।'

किन्तु जहा से ये वैभव की रश्मिया हमे प्राप्त हुई वह प्रकाशमान सूर्य हमारे बापू ही थे, जिनके प्रति अनन्त काल तक भारतीय नारियाँ श्रद्धा तथा कृतज्ञता से अपना मस्तक नत करती रहेगी। राम कृष्ण की उपासना की भाति घर-घर उनकी उपासना होगी। समय बतायेगा, इतिहास स्पष्ट करेगा, जाने कितनी दीन-हीन नारियो की कहानिया प्रकाश मे आयेगी। जिन्हे पतिता कह के समाज ने दुरदुरा दिया। जो विवश होती जीवन भर अपमान की ठोकरे खाती। पिताओ की ममता अपने हृदय मे बटोर कर इस पिता ने उन्हे स्नेह से सराबोर कर दिया। अपने पुनीत हृदय के पट उनके लिए खोल दिए। उनसे विलग होकर आज कोई अवलम्ब, कोई सहारा ऐसा दृष्टिगोचर नही होता। कोई पिता ऐसा प्रतीत नही होता जो दीन-हीन निर्धन दु खित, पीड़ित, पतिता नारियो को भी हृदय से लगाकर उनके लिए सरल स्नेह के कण बिखेर देता, सहानुभूति सात्वना का श्रोत बहा देता। मन भटक कर चारो ओर भागता है, किन्तु कोई ऐसा महापुरुष दृष्टिगोचर नही होता जो भारत की नारियो के इस अभाव की पूर्ति करेगा।

बापू की बनाई हुई कई विभूतियाँ ऐसी है जिनपर राष्ट्रकी आखे लगी हुई है। आशा है वे उनके पथ का अनुसरण करके देश को वैभवशाली बनायेंगे तथा देश-

वासियो को सन्मार्ग दिखायेगे। बापू के उत्तराधिकारी पडित जवाहरलाल नेहरू राजनैतिक नेता की कमी पूरी कर देगे, परन्तु इन नारियो के लिए पल-पल चिन्तन कौन करेगा? इनके अधिकारो के लिए कौन प्रयत्नशील होगा? शोषित नारी-समाज की महत्ता का ध्यान करके कौन यह नारा बुलन्द करेगा—'मेरा वश चले तो मै स्वतन्त्र भारत का गवर्नर जनरल एक हरिजन कन्या को बनाऊँ?' 'पतित पावन सीताराम' का राग झँकृत करते हुए कौन वास्तव मे पतित पावन बनकर पतिताओ का उद्धार करेगा?

इस स्थान पर कल्पना निरुत्तर हो जाती है। हृदय रोकर कहता है, सब कुछ नष्ट हो गया, सब कुछ विलीन हो गया, भारतीय नारी-समाज का एकमात्र अवलम्ब टूट गया।

सम्भव है अभी समस्त भारतीय नारियो ने इस घटना के कारण पर पूरी तरह विचार न किया हो, इस हानि को और महाभयङ्कर पाप के परिणामो को अनुभव न किया हो, किन्तु यदि सभी गम्भीरतापूर्वक बुद्धिमानी से विचार करे तो उनके हृदय काँप उठेंगे।

कुछ दिनो से हमारे देश मे साम्प्रदायिकता की लहर बह रही है जिससे इस प्रकार की हत्याओ तथा पापो के लिए मानव को प्रेरणा मिल रही है। मानवता की भावनाएँ नष्ट हो रही है तथा पशुता की भावनाएँ जागृत हो रही है। देश मे आज एक समुदाय है जो कि हिन्दू धर्म की दुहाई देकर हिन्दू धर्म का सत्यानाश करने को तत्पर है। हिंसा, क्रोध, हत्या जिसे हिन्दू धर्म ने जघन्य पापो के नाम से पुकारा है, उसी क्रोधानल को अबोध बालको तक के हृदयो मे प्रज्वलित करके उन्हे हिंसक बनाया जा रहा है तथा इस पाप को, इस कायरता को वीरता के नाम से पुकारा जा रहा है। इसका जहर हमने प्रत्यक्ष देख लिया है और यदि इस जहर को कुछ दिन और हमने फैलने दिया तो हमारे देश का, हमारी जाति का, सभ्यता का, सस्कृति का विनाश निश्चय है।

बापू ने आगे प्रवचन मे कहा था—"कृष्ण के बाद यादव लोग परस्पर ही लडकर समाप्त हो गए थे। यदि इस देश की भी यही दशा होनी है तो उसे देखने को मै जीवित क्यो रहूँ?" यदि हिंसा की प्रवृत्ति इसी प्रकार बढती रही, हमारे बच्चे, देशके नवयुवक इसी हलाहल का पान करते रहे, जिसे पीकर एक हिन्दू नवयुवक

ने इस रामकृष्ण की भूमि पर हिन्दू धर्म के सबसे बडे अनुयायी की निर्मम हत्या की है, तो अवश्य ही बापू की यह शङ्का सत्य होकर रहेगी कि हमारा सब कुछ नष्ट हो जायगा, हिन्दू धर्म, हिन्दू सस्कृति का नाम-निशान मिट जायगा, देश अधोगति की चरम सीमा पर पहुँच जायगा।

भारतीय महिला-उत्थान

सामाजिक कार्यों की विविध प्रवृत्तियो मे यह कार्य विशेष महत्वपूर्ण रहा। गाँधी जी की श्रद्धा और भक्ति भारतीय नारी के प्रति अटूट रही है। 'नारी शक्ति तथा श्रद्धा की स्वरूप है। समाज की जननी तथा कल्याण की मूर्ति है।' उन्होने देखा कि भारतीय समाज में नारी का निम्नतम स्थान है। इसे वह एक क्षण भर सहन न कर सके। उन्होने लाखो विरोध होने पर भी भारतीय नारी के उत्थान का प्रयत्न किया। जिन साधनो का उन्होने आश्रय लिया उनमे उन्हे समाज की सकीर्ण विचारधाराओ से कडी टक्कर लेनी पडी। उनका भयङ्कर विरोध होने पर भी वे हिमालय की भाँति अटल रहे। उन्होने साहस से—'पर्दा प्रथा हमारे भारतीय जीवन के लिए घातक है'—'नारी समाज में समान अधिकारिणी है।'—'बाल विवाह घातक है, विधवा विवाह (स्वेच्छया) प्रत्येक अवस्था में कल्याणकारी है।'—'बहु विवाह समाज में घोर अपराध है।' —'स्त्री को समाज में पगु बना देना महान् अन्याय है, शिक्षा तथा सेवा में वे समान अधिकार की पात्री है'—'धातुओ के आभूषण के स्थान पर सरलता और शुद्धता उनका आभूषण है'—आदि सफल उद्‌गारो तथा इन नियमित साहसिक कार्यों द्वारा उन्होने भारतीय समाज में क्रान्ति का मन्त्र फूँक दिया। सहस्रो नारियो ने आजादीके युद्धमें सक्रिय भाग लिया। गाधीजी के सतत् प्रयत्नो से कितनी ही कुरीतिया तथा कुप्रथाओ में क्षीणता आई। महिला जगत में एक नवीन जागृति का प्रकाश फैला। महिलाओ के स्वतन्त्र सङ्गठन स्थापित हुए। कतिपय वर्षो मे ही—कस्तूरबा, श्रीमती सरोजनी नायडू, मीराबेन,कमलादेवी चट्टोपाध्याय,श्रीमती सेन, राजकुमारी अमृतकौर, श्रीमती विजयलक्ष्मी पण्डित आदि महिलाओ का जागृत-दल देश के सम्मुख आया जो गाँधीजी के आदेशो से प्रेरित रहा है और जिस महिला दलको पाकर कोई भी देश आज गर्व कर सकता है। अतएव हम देखते है कि इस क्षेत्र मे गाधी जी

के प्रयासो का अपूर्व प्रभाव हुआ है। यह जन-जागरण दिनो-दिन वृद्धि पा रहा है।

वापू का बलिदान हमे सावधान कर गया है। अब भारतीय स्त्री जाति का जिसने सदैव हिन्दू धर्म की रक्षा की है, परम कर्त्तव्य हो जाता है कि अपने बालको को इस हलाहल का पान करने से रोकने मे अपनी सारी शक्ति लगा दे और अपने धर्म की रक्षा करे।

ईश्वर अपना कर्त्तव्य पालन करने की हमे सुबुद्धि दे, हमें बल दे कि हम अपनी संतति को बापू के प्रकाश के सहारे उनके बताए पवित्र मार्ग पर चला सके जिससे हमारे देश का कल्याण हो और बापू की आत्मा का प्रकाश फिर एक बार घर-घर में चमक उठे।

—.o—

सन्देश-वाहक बापू

चरण चिन्ह जो छोड़ गये तुम, आने वाला जग चूमेगा ।
इस धुरी पर एक हिन्द ही, नही विश्व सारा घूमेगा ।।

कोई स्वर्ग मर कर देखना चाहता है और कोई स्वर्ग की कल्पना दुनियाँ मे करता है। स्वर्ग की कल्पना की मनोरम लोल लहरियो पर थिरकते हुए यात्रा आरम्भ करता है। इस सफर मे बहुत सी मंजिले पडती है। कभी रेगिस्तान सामने आ जाता, कभी ऊँची-कठोर चट्टान आकर खडी हो जाती है और कभी छोरहीन अगाध महासमुद्र सभी लोगो को अपने मे विलीन करता दिखाई पडता है। जो अपनी यात्रा रेगिस्तान के किनारे किसी वृक्ष की शीतल छाया मे, चट्टान के मूल मे और महासमुद्र की गरजती लहरो के सुहावने रूप के निरखने मे तोड देता है, उसकी यात्रा अधूरी समाप्त हो जाती है। वह अपने जीवन के अन्तिम अध्याय को बन्द कर देता है। लेकिन जो उत्तुग चट्टानो को मार्ग का रोडा, रेगिस्तान को सडक की धूल और महासमुद्र को पथ का छलकता गड्ढा समझकर अग्रसर होता है, दुनिया उसके सम्मुख मस्तक झुका देती है, दुनिया उसके पीछे दौड पडती है। दुनिया उसके हाथ का खिलौना हो जाती है। वह दुनिया को मुस्कराता, पलटता, बदलता, उठाता और करवट देता रहता है।

दुनिया मे कोई अपनी जीवनश्री सूत्रो की रचना मे, दर्शनो की उडान मे, हथियारो की झङ्कार मे, धर्मो के निर्माण मे, देवोपासना मे, कला के पूजन मे, प्रकृति के विवेचन मे अथवा तत्वो के अन्वेषण मे बिखेरता है। उसके बिखेरने मे उसे मिलती है मानव जीवनश्री की सुरभि।

सुहावनी प्रकृति मे कोई भूल जाता है, माया मे कोई झूलता धीरे-धीरे सोता रहता है, गौरव की वाह्य गरिमा के चमकते प्रकाश मे कोई चकाचौंध होकर अपने

को खो देता है, प्रसाधनो के बीच कोई अपने शरीर के सुख मे आनन्द को ढूँढता चक्कर लगाता है और कोई मानव-श्रम के आधार पर अपना आसन जमाकर सब कुछ अपने लिए ही समझता है। लेकिन कोई अपना सब कुछ देकर भी इसलिए नही अघाता कि वह अपना कुछ समझता ही नही। वह जानता है कि वह न तो कुछ लेकर आया है और न कुछ लेकर जायगा। अतएव उसका इस दुनिया मे है ही क्या ?

/जुल्म सहना, मुसकराकर गाली सुनना, हँस कर आक्षेपो का सहन करना, मारने वाले को अपना मित्र समझना, कातिल के सम्मुख प्रेम से नमस्कार कर मृत्यु का आलिङ्गन करना, उसे भी भगवान का मानव का, एक प्राणी जानकर घृणा न करना ही मानव जीवन की जीवनश्री है।/

मानव अपनी अबोध अवस्था मे बन्धनहीन था, निर्मल था सकुचित धर्म, सस्कृति, सभ्यता, व्यवहार से बहुत दूर था। उसके हाथो मे शक्ति न थी। वह अपने पैरो पर खडा न हो सकता था। उस समय उसका रूप सुहावना था, वह प्रियदर्शी था, उसे सभी गोद मे लेकर चूमना चाहते थे। लेकिन दुनिया की छाया में ज्यो-ज्यो वह बढने लगा, दुनिया उसे दूर खीचती गई, उस पर अपना रङ्ग चढाती गई और उसका रूप इतना भयावना होता गया कि लोग उससे डरने लगे। और वह स्वय बन्धनहीनता-निर्मलता के लिए चिल्लाता-चिरलाता मर गया जिसके साथ वह एक दिन पैदा हुआ था। जो सकुचित धर्म, सस्कृति-सभ्यता, व्यवहारादि के दूषित बन्धनो को तोडकर बाहर निकल कर निर्मल रूप का पुन दर्शन करना चाहे, दुनिया ने उसे उनके जीवनकाल मे नही पहचाना। उन्हे गलत समझने की ही कोशिश की गयी। उसे ठुकराया गया। उसकी सज्जनता का उन्हें दण्ड दिया गया। उन्हें परेशान कर, उन्हे कष्ट देकर, उनकी हत्याकर, उन्हें जलाकर, उन्हे सूली चढा कर, उन्हें खौलते तेल की कडाहियो मे तलकर उन्हे अनोखी पाशविकता का शिकार बना कर समझा गया कि दुनिया का उनसे पिंड छूट जायगा। लेकिन हमेशा बात हुई उल्टी। सताने वालो को लोग थूकने लगे। और जो एक दिन मानव द्वारा ही अपराधी समझा गया था, सताया गया था वह हो गया आदर्श। ईसा, मुहम्मद, गुरु गोविन्द सिह आदि का जीवन इसी की सृष्टि करता है।

महात्मा जी एक सन्देश देने आये थे। उन्होने अपनी यात्रा समाप्त की और

ठीक समय पर समाप्त की। जिस मानव सहृदयता को हम भूल वैठे थे, शायद उसका दर्शन अव हम कर सकेगे। कॉग्रेसजनो मे फैला भ्रष्टाचार, द्वेष, अराजकता शायद अव दूर हो, जिसका वह स्वरूप देख रहे थे। महात्मा जी की हत्या भारतीय जीवन मे पहली राजनीतिक हत्या कही जायगी। उनकी हत्या द्वारा जिस फल की आशा हत्याकारी ने की थी वह फल नही मिला—हा, भटकती दुनिया की, गर्व से चूर कुछ काँग्रेसजनो की, भ्रष्टाचार के आधार पर पनपे और पले लोगो की, राजसूत्र शक्ति के आधार पर लेने वालो की आखे अवश्य खुली है। उन्हे महात्मा जी ने एक मौका दिया है कि वे अपना सुधार कर ले अन्यथा दुनिया उन्हे शायद क्षमा न करेगी। दुनिया वदलेगी, वह पलटा खायेगी, लेकिन उस समय जव वदलने वाला, पलटा खिलाने वाला अपनी जीवनश्री विखेर चुका है।

महात्मा गाँधी जादूगर थे, चमत्कारी महापुरुष थे, इसकी सचाई अनेकवार प्रकट हो चुकी है। जहा भी इस महापुरुषका चरण-निक्षेप हुआ है वहा नया इतिहास लिखा गया है। गत ७, ८ और ९ दिसम्बर को मालूम होता था कि भारत की राजधानी दिल्ली आग की लपटो मे समा जायगी। नयी दिल्ली भी आग की लपटो की आच से नही वची थी। कनाट प्लेस और कनाट सर्कस गोली के धुए से भरे हुए थे ओर गोली का निशाना वने लोगो के खून से सडके जहा-तहा लाल हो गयी थी। प्रधान मन्त्री नेहरू जी की तत्परता, कर्त्तव्यपरायणता और साहसी वृत्ति और सरदार पटेल की दृढता व सघठन-कुशलता इस वढती आग को रोकनेमे पूर्ण सफल नही हो रही थी। मालूम होता था कि दिल्ली के वारह-पन्द्रह लाख निवासी दिल्ली छोड जायेगे या यहा दम घुटकर मर जायेगे। राशन का मिलना कठिन हो गया था। दूध अदृश्य हो गया था। सब्जियो का तो आज भी अकाल है। कोयला और नमक की दुर्लभता आज भी विख्यात है। पर इसके अलावा चौवीस घण्टे के कर्फ्यूके कारण जीवन भार हो गया था। गाडियो का आना-जाना वन्द हो गया था। भगवान कृष्ण वन्दीगृह मे पैदा हुए। उनका जन्मदिन दिल्लीवासियो ने स्वय घरो मे वन्दी होकर मनाया। ऐसे समय कलकत्ता में अपना अद्भुत चमत्कार दिखा कर, शाति स्थापित कर मानव समाज का त्राता गाँधी अपनी वही ईर्ष्या योग्य मनोमुग्धकारी मुसकराहट के साथ प्रकट हुआ। राजधानी पुलकित हो उठी। एक नूतन विश्वास और आशा का उदय हुआ।

हवा वहने लगी। लपटें शांत हो गई। नया जीवन आया, खुलकर सांस लेने का मौका मिला। 'डेली एक्सप्रेस' और 'टाइम्स'ने लिखा था कि ६ लाख उपद्रवी दङ्गे में भाग ले रहे हैं और सारा दिल्ली शहर आग की लपटों मे है। इससे स्थिति की भीषणता का कुछ अनुमान किया जा सकता है।

नादिरशाह की लूट-पाट के बाद दिल्ली ने ऐसा दृश्य कभी देखा था, इसमें शक है। पर गाँधी जी के आगमन ने सारा नकशा ही बदल दिया। कल तक जो मुसलमान पाकिस्तान जाने को व्यग्र थे, वे दिल्ली छोडने को अब तैयार नहीं। जो भारतीय सेना पर स्टेनगनों और ब्रेनगनों से अन्धाधुन्ध गोली वर्षा कर रहे थे, उन्होंने अपने अपने शस्त्र 'विश्व के त्राता' के चरणों में उसी प्रकार रख दिये जैसे कलकत्ता में शान्ति, प्रेम और सद्भाव स्थापित होने के बाद दुबारा उपद्रव करनेवालों ने प्रभु के ध्यान में लीन गाँधी जी के चरणों मे रख दिये थे। /

जनता के साथ

पिछले तीस साल से भारतीय जनता पर महात्मा गाँधीका प्रभाव है, इतना कि उनकी सहमति और उनके आशीर्वाद के बिना किसी आन्दोलन का सफल होना सम्भव नही था। १९४६ मे डाकियों ने हडताल करने से पूर्व गांधीजी का आशीर्वाद प्राप्त करना आवश्यक समझा। यह सच है, जब गांधी जी के मनोरथ पूरे नही हुए, उनके स्वप्न अधूरे ही रह गए। /भारत स्वाधीन हुआ, पर खण्डित होकर, अखण्ड भारत का स्वप्न ही रह गया। हिन्दू-मुसलिम एकता का भी इसके साथ अन्त हो गया। पर इन विफलताओं के बाद भी गांधी जी का जनता पर अद्भुत प्रभाव आज भी विद्यमान है। इसका कारण क्या है?

लार्ड माउण्टबेटन ने गांधी जी के प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पण करते हुए कहा था—"आर्कीटेक्ट आफ इण्डियन फ्रीडम"। भारतीय स्वतन्त्रता को साकार रूप मे साक्षात् कराने का श्रेय यदि किसी को है तो गांधी जी को है। इसमें दो मत नही हो सकते। भारतीय स्वतन्त्रता-मन्दिर की एक-एक ईंट इसी महान् व्यक्ति ने अपने पुरुषार्थ से चुनी है पर जब उसके पूर्ण होने का समय आया, जब उसका उत्सव मनाने का समय आया, जब सारा राष्ट्र उसका अभिनन्दन करने और उसको श्रद्धांजलि अर्पित करने को उत्सुक था तब १५ अगस्त को गाँधी जी नई दिल्ली

छोडकर कलकत्ता पहुँचे हुए थे और धर्मान्ध और उन्मत्त जनता की पत्थरो और ईंटो की वर्षा सहने के वाद भी प्रेम का मन्त्र दे रहे थे। दिल्ली के शरणार्थी कैम्पमें गाँधी जी अकेले ही जाते थे। वे निडर और निर्भय रहे है। क्योकि जनता के साथ उन्होंने अपने को सर्वतोभावेन आत्मसात् कर दिया था। उन्होंने अपने को दरिद्र जनताका,नगी और भूखी जनता का,सच्चा प्रतिनिधि बनने के लिये अपने लिये एक-मात्र वस्त्र लगोटीको चुना। यह अर्द्धनग्न फकीर भारतीय जनता की नाडीको जिस अच्छी तरह समझता रहा है और कोई दूसरा व्यक्ति नही समझता है। उनकी वोलचाल, उनका नपा तुला वोलना, कुछ वातो मे जनता के आग्रह पर भी समझौता न करना, यथा–प्रार्थना में कुरान का पाठ लोकप्रियता की परवाह न करके अपनी अन्तरात्मासे करते जाना—जैसे घरो को छोडकर भागे मुसलमानो को पुन घरो मे वसाने का उनका आग्रह,—उनके कार्य करने का ढग, ये सब वातें उनको जनता से अलग करती है। मगर इसके वावजूद भी वे जनता के आदमी है, इससे इन्कार भला कोई कैसे कर सकता है!]

१९३१ मे दूसरी गोलमेज कान्फ्रेन्समे गाधीजी लन्दन गये थे। घर या गाँव से वाहर जाने पर प्रत्येक व्यक्ति अपना वेश और परिधान वदल देता है, पर गाधीजी अपने सदा के वेश मे गये। वहा की सर्दी और वर्षा मे भी वे उसी वेश मे रहे जिसमे यहा रहा करते थे। यही नही, सम्राट् जार्जपंचम से वे मिलने भी उसी वेश मे गये। उन्होंने दरवारी पोशाक पहनने से इन्कार कर दिया। जान हैनेज होलमून ने लिखा है कि यदि गाँधी जी लन्दन मे इसके सिवाय और किसी पोशाक में आते तो वे भारतीय किसानो के प्रतिनिधि न रहते। इस वेश मे उनका आना इस वात का प्रमाण था कि भारतीय किसान—ब्रिटिश साम्राज्यवाद से शोषित, उत्पीडित और दलित किसान उपस्थित है। यही कारण है कि गाधी जी भारतीय नवजागरण के अग्रदूत रहे है, भारतीय पुनर्निर्माण के सूत्रधार है और स्वतत्र भारतके पथप्रदर्शक और भाग्य विधाता है। [डिक्टेटर न होकर भी वे डिक्टेटर अधिनायक थे। विभिन्न विरोधी तत्वो का गाँधी जी में एक अद्भुत मिश्रण था। क्योकि भारतीय समाज और जनता भी विभिन्न विरोधी तत्वो का एक मिश्रण है। भारतीय जनताकी साकार और सजीव प्रतिमा यदि वनती हो, तो वह 'गाधी' से भिन्न और उत्तम दूसरी नही हो सकती।]

विजेता गांधी

गाधी जी आज भी विजेता है। भारतपर आज यूनियन जैकको जगह तिरगा फहरा रहा है। गाधी जी ने कभी पराजय स्वीकार नही की, दुनिया ने जब उनको असफल माना उस समय भी वे अपने को सफल और विजयी मानते थे। क्योकि सत्याग्रही कभी पराजित नही होता। महात्मा जी ने विपक्षी और प्रतिपक्षी से लडने के लिये जो हथियार चुना था, उसको बरतते हुए कभी हार सम्भव नही है। गाँधी जी हिंसा और घृणा मे विश्वास नही करते। वे अहिंसा और प्रेम के शस्त्रो से लडते थे। वे अपने कट्टर मे कट्टर शत्रु का स्वप्न में भी अहित नही चाहते। अग्रेज भारत छोड गये। मगर कोई अग्रेज नही मारा गया। यह गाँधी जी का ही पुण्यप्रताप है कि साम्प्रदायिक दगो के लिये जिम्मेदार होने पर भी कोई अँग्रेज नही मारा गया। गाँधी जी का मार्ग 'आत्मनोद्धरेम् आत्मनम्' का था। वे परनिर्भर न रहकर स्वावलम्बी और आत्मनिर्भर बनने के लिये कहते थे। काँग्रेस का सूत्र गाँधी जी के हाथ मे आते ही लन्दन की काँग्रेस कमेटी का अन्त हो गया। नि शस्त्र भारत सशस्त्र प्रतिकार द्वारा स्वाधीनता प्राप्त नही कर सकता और यदि इस मार्ग से करेगा, तो वह टिकेगा नही, अत नि शस्त्र प्रतिरोध और अहिंसा तथा सत्याग्रह द्वारा भारत को स्वाधीनता प्राप्त करनी चाहिये। यह गाधीजी का सदेश था, जो उन्होने भारत का भाग्य सूत्र हाथ में लेते ही घोषित किया। भारतीय राजनीति में गाधी जी का प्रवेश उपवास और प्रार्थना के साथ हुआ। ६ अप्रैल १९२९ को भारतीय राजनीति के सूत्र गाधी जी के हाथमे आये और इस दिन भारतने उनका नेतृत्व स्वीकार किया। इस दिन का आरम्भ उपवास और प्रार्थना से हुआ। सारा दिन हडताल रखी गई और शाम को सभा की गई। भारतीय राजनीति ने इसके साथ-साथ नया जीवन और नया रूप और रग धारण किया। राजनीति और उपवास का यह सम्बन्ध आज कायम है। इसके साथ भारतीय राजनीति का नया अध्याय आरम्भ हुआ। इस गाधी-युग के साथ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति मे एक नया पृष्ठ लिखा गया।

गाधी जी के भारतीय राजनीति मे प्रवेश करने से भारत से सशस्त्र क्रान्ति के विश्वास करने वाले दलो का अन्त हो गया। आतकवाद का आन्दोलन निस्तेज हो गया। गाधी जी अकेले व्यक्ति है, जिन्होने अगस्त १९४२ मे घटित घटनाओ की प्रशसा मे एक शब्द नही कहा, और न उन्होने नेताजीकी आजाद हिन्द फौज के

सगठन का समर्थन किया। लोकप्रियता का ख्याल न करके और समय की आवश्यकता का विचार न करके उन्होने गुप्त रूप से अगस्त आन्दोलन को चलाने वालो को आत्मसमर्पण करने की सलाह दी।

गाँवी जी यदि चाहते तो वे भी नेहरू जी के समान अगस्त क्रान्ति के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करते हुए निराशा में आशा और जीवन का सचार कर सकते थे। पर सिद्धान्त और आदर्श का त्याग करके गाँधी जी को यह करना पसन्द न था।

गाँधी जी ने इसी प्रकार व्रिटेन को १९४० में यह सलाह देने का साहस किया था कि वह जर्मनी का नि शस्त्र प्रतिकार करे और अहिंसा और सत्याग्रह के शस्त्रो द्वारा हिटलर का सामना करे। गाँधी जी को इसके कारण खपती समझा गया, उनका उपहास किया गया, उनको धुरी राष्ट्रो का समर्थक कहा गया, पर उन्होने इसकी चिन्ता नही की कि दुनियाके एक वडे भागके उपहासको सहनेका साहस और सामर्थ्य अकेले गाँधी जी ही मे थी। भगवान नीलकण्ठ शकर के समान विषपान करने का साहस और शक्ति अकेले गाँधी जी मे ही थी। इसलिये वे विजेता है और अद्वितीय विजेता है। जव अजस्र विनाश लीला जारी हो, जव महानाशकी तैयारी हो रही हो, जव भस्मासुरके समान अणुवम दुनिया को खाक मे मिलाने की तैयारी कर रहे हो, उस समय भी जो इनके वीच अडिग है, अपने पथ पर अविचल भावसे चल रहा है, जिसका आदर्श एक क्षण के लिए भी धूमिल नही हुआ, जिसका प्रण शिथिल नही हुआ, जिसका सकल्प अटल है, और भी वरावर अपने लक्ष्य और उद्देश्य की ओर वढ रहा है, क्या उससे भी वढकर कोई दूसरा व्यक्ति विजेता हो सकता है? यदि इस कारण इस अद्वितीय विजेता के चरणो मे मानव समाज का मस्तक नत हो, तो क्या आश्चर्य?

युग-प्रवर्तक

१९१९ से पहले भारत की दृष्टि अन्तर्मुखी न होकर वहिर्मुखी थी। कई अमर-हुतात्माओ के प्रयत्न इस प्रवृत्ति को वदलने मे समर्थ नही हुए। डा० एनी वेसेण्ट भी इस धारा को वदल नही सकी। भारत के पुजीभूत गौरव को गाँधी जी के रूप में मूर्तरूप देखकर भारत ने अपने को पहचाना और उसकी दृष्टि अन्तर्मुखी हुई। उसने अपने प्राचीन साहित्य, इतिहास, कला और शिल्प में गौरव अनुभव किया।

भारत और एशिया से प्रकाश पश्चिम को गया है। यह एक बार गांधी जी ने पुनः सिद्ध कर दिया। महात्मा जी पहले भारतीय हैं, राजनीतिक नेता हैं, जिन्होंने यूरोप की उच्चता मानने, उसके विचारों को ग्रहण करने से इन्कार कर दिया। पश्चिम के रंग पर भारतीय संस्थाओं का निर्माण हो, यह उनको असह्य मालूम हुआ। पश्चिम और मेकाले के साथ अंगरेज आशा करते थे कि भारत यूरोप की संस्कृति और वेश-भूषा-पोशाक को स्वीकार करेगा। मगर गाँधी ने चप्पल और गाँधी टोपी चलाकर और खद्दर पहनना गौरव बताकर पश्चिम की इस धारणा पर भारी आघात किया। इस कारण गाँधी यूरोप और पश्चिमी जगत् के लिए अजेय और रहस्यमय पुरुष हो गये।

समस्त एशिया में नया युग

पश्चिम का अनुकरण करनेमे इन्कार करके गाँधी जी ने न केवल भारतमें बल्कि समस्त एशिया में एक नया युग आरम्भ किया है। भारत जगद्‌गुरु था और भविष्य मे भी होगा, यह गाँधीने अपने जीवन और कार्योंसे घोषित करके विश्वको चकित कर दिया। इससे पहिले एशियाके जिन देशोमे स्वाधीनता, जनतन्त्र और प्रतिनिधि-शासन का आन्दोलन चला, उनके संचालक और सूत्रधार योरोपियन शिक्षा-दीक्षामे दीक्षित और योरोप के पथ का अनुसरण करने वाले थे और हैं। डाक्टर सनयात सेन, चांग काइशेक, डाक्टर सुकर्ण, फिलिपाइन के स्वर्गीय और वर्तमान प्रेसीडेन्ट इसके कुछ उदाहरण हैं। अकेले गाँधी ने पश्चिम को गुरु मानने और उसके आगे मस्तक झुकाने से इन्कार कर दिया। गांधीजी की परिदृष्टा दृष्टि ने देखा कि पश्चिम का अनुसरण करने और उसको गुरु मानने का वही परिणाम होगा, जो जापान का हुआ है, और उन्होंने भारत को प्रत्यावर्तन करने का आदेश दिया और योरोप आज जिस विनाश के गर्त में जा रहा है उससे समय रहते भारत को बचा लिया।

चर्खा

पश्चिम और योरोपकी भौतिकवादी सभ्यता मे आत्मा का कोई स्थान नहीं है। गाँधी जी मशीन और यान्त्रिक सभ्यता के द्वारा किये गये सब मानवीय चमत्कारो के विरुद्ध थे क्योंकि मशीन ने मनुष्य को अपना गुलाम और दास

वना लिया है। मनुष्य यन्त्रो का मालिक न होकर उनका अनुचर वन गया है। गाँधी जी ने इसके प्रति अपना तीव्र विरोध वैदिक युग के पुराने चर्खे को अपनाकर प्रकट किया है। आत्मा और मानव के तीन महान् शत्रु गाँधी जी की नजरो में है, भौतिकवाद, यान्त्रिकवाद और सैनिकवाद। इनसे वचाव का उपाय वे आत्मिक शक्ति मे पाते है, जो गाँधी जी के शव्दो मे 'सत्य' है। चर्खा गाँधी जी के मनमे सत्य का शाश्वत् और अनादि सत्य का प्रतीक है और वह इसका जयघोष कर रहा है—

'धिग् वलं क्षत्रिय वल व्रह्म तेजो वल वलम्।'

यही कारण है कि गाँधी जी ने कहा है कि जिस भारतीय पुण्य पताका मे चर्खा अकित न होगा उसके सामने उनका मस्तक नत न होगा, उसको उनकी भक्ति और श्रद्धा प्राप्त न होगी। सर्वग्रासी पश्चिम से पूर्व की ओर और उसके द्वारा मानव समाज को वचाने के लिए गाँधी जी सर्वदा व्यग्र रहे, और उसका प्रतीक चर्खा है और इसी उद्देश्य से 'भारत छोडो' (क्विट इण्डिया) का आन्दोलन गाँधीजी ने उठाया था।

अहिंसा

महात्मा जी अपने देश पर प्रतिपक्षी का आक्रमण होनेपर भी सशस्त्र प्रतिकारके विरोधी रहे है। वे आन्तरिक शान्ति के लिए भी पुलिस और सेना के व्यवहार के विरोधी रहे है। यही कारण है कि जव काँग्रेस ने स्वदेश रक्षार्थ और व्रिटेन की सहायता मे शस्त्र ग्रहण का निश्चय किया, गाँधी जी काग्रेस से अलग हो गये, उसके अधिनायक भी नही रहे। मानव समाज की स्थापना का आधार हिंसा नही है, अहिंसा है, यह गाधी जी का दृढ भाव और विश्वास था। पर हम देखते है कि व्यवस्था और सुरक्षा का आधार शक्ति और सेना है। दो देशो के विवादो का अन्तिम निर्णायक-साधन सेना है। इस प्रकार सारी समस्या और समस्त सस्कृति का आधार शस्त्र और भौतिक-शक्ति है। मगर गाँधी जी सदियो से अनुसृत मार्ग पर चलने वाले नही थे। वे किसी भी हालत मे हिसा और शस्त्र-मार्ग को ग्रहण न करते। उन्होने इसकी जगह इससे भी अधिक प्रभावशाली शस्त्र अहिंसा का शस्त्र पकडा था। वे हमारी शव्दावलि और परिभाषा मे नही सोचते, वरन् उनकी अपनी शव्दावलि और परिभाषा थी। उन्होने अपने अहिसात्मक शस्त्रसे व्रिटिश सरकार को भारत छोडने के लिये वाध्य किया है।

सन्त गांधी

गाधी जी केवल राजनीतिक ही नही। वे राजनीतिक नेता होने के साथ-साथ एक सन्त भी थे। भारतके मध्य युगके सन्तोके समान गाधीजी रहते थे, उनके समान अपना जीवन रखते थे, और खान-पान, रहन-सहन मे वे वैसे ही थे। उनका कठोर आत्म-सयम, उनकी कठोर तपस्या, उनकी सरलता, शुद्धता और पवित्रता उनको अनायास सन्त वनाये रही थी। तुलसीदास के समान उनकी वाणी पवित्र रही है। गगाजल के समान उनका जीवन मुक्तिप्रद था। उनकी आत्मा विशुद्ध और पवित्र थी। सेवा के वे प्रतीक थे। कोढी की सेवा के लिए वे क्रिप्स मिशन और दिल्ली को भी छोड सकते थे। उनके विनयी और विनम्र स्वभाव और सेवा-परायणता का इससे वढकर और दूसरा क्या उदाहरण हो सकता है?

ऋषि गांधी

गाधीजी जार्ज वाशिगटनके समान सदा स्मरण किए जावेगे। भारतके वे मुक्ति-दाता और स्वाधीनता दिलाने वाले है। अब्राहमलिकन के समान उन्होने ६ करोड हरिजनो को मानवके स्तर पर पहुँचाया था और सदियो के वन्धनो और अपमानता तथा निरादर से मुक्ति दिलाई थी। पर वे इनसे भी अधिक महान् थे। उन्होने स्वाधीनता पाने के लिए भी शस्त्र ग्रहण नही किया था। भगवान वुद्ध और जैन तीर्थकरो ने अहिंसा का उपदेश किया पर वह पशु-हिंसा और वैयक्तिक हिंसा तक सीमित थी। भगवान वुद्ध ने यज्ञ मे वलिदान होने वाले वलि-पशुओ की रक्षा की। ईसाने प्रेम का उपदेश दिया। जार्ज फाक्स और लियो टाल्सटाय ने भी अहिंसा को स्वीकार किया। यह एक अमोघ अस्त्र है। मगर यह वैयक्तिक जीवन और धार्मिक आचार-विचार की सीमा से परे नही गया। गाँधी जी पहले व्यक्ति थे जिन्होने राष्ट्र की मुक्ति और स्वाधीनता के लिये आत्मिक शक्ति को चुना है और उसके सहारे विश्व की सर्वाधिक महान् शक्ति को चुनौती दी और उसमे सफल हुए। अव विजेता और अत्याचारी तथा उत्पीडक के प्रतिरोध के लिये अन्तिम शस्त्र तलवार था, गाँधी जी ने इस शस्त्र को वदल दिया। उन्होने इस भयानक शस्त्र के मुकावले सत्याग्रह या नि शस्त्र प्रतिरोध का आविष्कार किया। यह त्रस्त और निराश मानव समाज के लिये आशा का केन्द्र है। इससे

मानव समाज के इतिहास मे एक नये अध्याय का आरम्भ हुआ। इस नवीन युग के प्रवर्तक गाधीजी इसके लिए ऋषि है, "ऋषियो यथा दुस्तर" उन्होने एक नया मत्र सिद्ध किया था, और वे मानव समाज के त्राता थे।

जीवन के स्रोत और केन्द्र गाधी जी ही हैं। उनके आगे भारत का ही नहीं, विश्व का मस्तक आज नत है।

वस्तुत, हम भाग्यशाली है कि गाँधी के देश के हम देशवासी हैं और विश्व के एक महान् पुरुष के समसामयिक भी। प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्वर्गीय एच० जी० वेल्स ने ससार के इतिहास मे वुद्ध, अशोक, ईसा, अब्राहम लिकन को महापुरुष माना है। यदि आज वेल्स जीवित होते तो नि सन्देह इन लोगो से ऊपर और पहला स्थान गाँधी जी को देते। मानव सस्कृति और मानव सभ्यता के इस सर्वोत्कृष्ट प्रतीक का अब हमारे बीच पार्थिव शरीर नही रह गया। आज कोटि-कोटि कण्ठो से आवाज निकल रही है कि हमारा वापू कहाँ चला गया! जिसके गौरव से हम गौरवान्वित है, जिसके तेज से हम तेजस्वी है, जिसकी प्रभा से हम दीप्त हैं, उसके यश कार्य को हमारा शत-शत नमस्कार। आइये, राष्ट्र के इस अनमोल चमकते उज्वल रत्न के आदर्श-उपदेश के प्रकाश मे हम उसका स्मरण करते हुए इस अवसर पर अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करे।

-o-o-

७

कर्मयोगी बापू

ग्रन्थ पन्थ सब जगत के, बात बतावत तीन।
राम हृदय मन में दया, तन सेवा में लीन ।।
कर्म है मानव का कल्यान, कर्म में बसते है भगवान।
कर्म से प्राणीजन का त्राण, कर्म पर हो जावे बलिदान ।।

बापू अमर हो गये !

वे इतिहास के पृष्ठो की निधि बन गये। उनमें महात्मा बुद्ध का सौहार्द, ईसा का धैर्य और हजरत मुहम्मद की दृढता थी। उनमें श्री राम की साधना-शक्ति तथा श्रीकृष्ण का योगबल था। वे आदर्श, भव्यता एव भारतीयता के प्रतीक थे।

जो उनके साथ वर्षों रहे,जिन्होने उन्हें अपनी भावनाग्रो और कार्यों को सम्पन्न करते देखा, जिन्होने उनके रहस्यको मापना चाहा, वे कभी भी उन दो बडी उज्वल मार्मिक आँखो के पीछे कौनसी अमोघ शक्ति कार्य कर रही है, न जान सके। वे हमें अक्सर भुलावे में डाल देते थे, यद्यपि उनकी बातें देखने में कभी कभी बडी भ्रामक जान पडती थी और हम उन्हें नही समझ पाते थे, उनसे तर्क करने लगते थे और कभी तो हम उद्विग्न भी हो उठते थे। परन्तु शीघ्र ही हमारा रोष दूर हो जाता था, और हम लज्जित होते थे, अपनी ही जल्दबाजी और नासमझी पर।

बुराई के बदले भलाई

१६३६ का आरभ था, सुभाष बाबूके विरुद्ध डाक्टर पट्टाभि सीतारमैय्या की हार को गाँधीजी अपनी हार की सज्ञा दे रहे थे। मतभेद था, काग्रेसके सचालन के विषयमें फेडरेशन के प्रश्न पर हरप्रकार से समझौता नीति बरती जाय, अथवा छः महीने का अल्टीमेटम देकर युद्धकी तैयारी की जाय ? गाँधीजी और उनके अनुयायी

शान्ति समझौते द्वारा समस्या हल कर लेना चाहते थे। अभिप्राय यह कि विपत्तिमे पडे हुए शत्रु से तनिक लाभ उठाने की वृत्ति का प्रवेश भी महात्माजी के मन में न हो सकता था। सब सकटो का सामना वे हँस-हँस कर कर सकते थे किन्तु अपने सिद्धान्त का त्याग नही। इस प्रकार गाँधीजी के सरल देव-हृदय ने शत्रु को भी आपत्तिकाल मे तग करना, सत्य और अहिंसा के विरुद्ध समझा।

'यह तो बुराई का जवाब बुराई से ही देना हुआ या यो कहो, बुराई के साथ सहयोग करना हुआ। हमे तो उससे असहयोग करना चाहिये, बल्कि उसके विपरीत कार्य करना चाहिये। हमारा यह अवरोध अथवा अहिंसक विरोध ही हमारा एक-मात्र शस्त्र है।'

एक महान् राष्ट्र के लिय जो कि शस्त्र ग्रहण नही करना चाहता, उसके लिये यही उत्तम एव मान-मर्यादा के अनुरूप मार्ग है। 'बुराई का बदला भलाई' एक ऐसा शस्त्र है जिससे कोई भी साधारण पुरुष अथवा स्त्री, बडे-से बडे विरोध का वीरता से सामना कर सकता है। आज ससार की दुर्दशा इसलिए हो रही है कि शोषक और शोषित, दोनो वर्ग एक दूसरे से असहयोग कर रहे है। यदि ये दोनो इस कुकार्य से अपना हाथ खीच ले, तो सब कुछ ठीक हो जा सकता है। परन्तु इसके लिये पहिले शोषित वर्ग को त्याग एव स्वार्थहीन कष्टभोग से शोषक वर्ग का हृदय-परिवर्तन करना होगा। यही सत्याग्रह का 'सत्य' मार्ग है।

सच्चे कर्मयोगी

सत्याग्रह तथा असहयोग की भावनाएँ गाँधीजी के सस्कारो मे बचपन से ही गुथ गई थी। वैष्णव भजन और प्रह्लाद, हरिश्चन्द्र आदि की कहानियो, जो कि उनकी माता सदैव उन्हे सुनाया करती थी, आगे चल कर टालस्टाय के 'भगवान् का साम्राज्य तुम्हारे ही हृदय मे है' और 'भगवद्गीता, ने एक नई गहराई पैदा कर दी। उनमे भगवान् के प्रति अविचल निष्ठा थी—ससार के सारे जड और चेतन मे वे उसी का प्रतिबिंब पाते थे, और उसीकी प्रेरणा से जगती का सारा कार्य होना वे मानते थे। उनके समक्ष मनुष्य उस विशाल ईश्वरीय सृष्टि का एक अग मात्र था, जिसे कि उसके अन्य अगो के प्रति सहानुभूति एव सेवा का भाव रखना

चाहिये। यह सेवा और स्नेह का मार्ग आत्मशुद्धि का मार्ग है, जिससे सत्य की प्राप्ति हो सकती है और सत्य की खोज ही ईश्वर की खोज है।

ससार के विभिन्न धर्म एव धर्म पुस्तिकाएँ ईश्वर प्राप्ति के विभिन्न मार्ग बताते रहे है, भगवद्गीता ने अनेक मार्गो मे से एक मार्ग जीवमात्र की निष्काम सेवा बताया है। गाधीजी ने सच्चे कर्मयोग की भाँति इसी मार्ग को अपनाया। जन-सेवा और उसके द्वारा आत्मशुद्धि, जिससे कि इस लोक मे स्वराज्य की प्राप्ति, अथवा परलोक के लिये मोक्ष की प्राप्ति हो सके, गाँधीजी ने अपना रास्ता बनाया। और ऐसा करते हुए भी वे स्वार्थ, ईर्ष्या एव कटुता से दूर रहे, इसी मे तो सत्यान्वेषक मनुष्य की महानता भी है।

'असहयोग' विदेशी शासक से सत्ता हस्तान्तरित कराने का कभी भी हिसक मार्ग नही हो सकता। यह तो प्रेम और सत्य की असभ्यता और घृणा पर हृदय परिवर्त-नात्मक विजय होगी।

सच्चे समाजवादी और किसान के त्राता

वे अपने को समाजवादी कहना ही केवल गरीब किसानो और मजदूरो के प्रति अपना उत्तर-दायित्व नही समझते थे और न उनमें कुछ आज के वामपक्षियो की भाति असन्तोष फैलाना ही उनकी समस्याओ का समाधान मानते थे। मनुष्य में मानवता जागृत कर, प्रत्येक को राष्ट्रीय सम्पति का उचित भागीदार बनाना ही उनके जीवन का ध्येय था। प्रत्येक नागरिक की पचावश्यकताओ—भोजन, वस्त्र निवास, शिक्षा तथा स्वास्थ्य रक्षा—की पूर्तिका अधिकार मानते हुए भी, वे व्यक्ति स्वातन्त्र्य के पक्षपाती थे--परन्तु इस स्वातन्त्र्य का मानुषिक होना भी वे आवश्यक बतलाते थे। वे ऐसे व्यक्ति-स्वातन्त्र्यके समर्थक थे,जो दूसरो के शोषणपर निर्धारित न होकर, अपने पराक्रम पर आधारित हो, जिसमे देश की समृद्धि तो हो ही,मानवता की अपनी मर्यादा की भी रक्षा हो सके। मनुष्य के सारे परिश्रमो को वे सुवर्णमुद्रा से ही मापना नही पसद करते थे, उसका उचित माप तो समाजहित और उससे प्राप्त होनेवाली कृतज्ञता है।

इस सत्य तथा सेवा की भावना में ही, गाँधीजी की महत्ता रही है। यहा तक कि जिस कांग्रेस के वर्तमान रूप के वे जन्मदाता थे, जिसके विघटन के विचार से ही

नेतागण क्षुव्व हो उठते है, उसे भी उन्होने अपना कार्य-विस्तार समेट लेने के लिये सम्मति दी। उन्होने कॉंग्रेस को गाँवो मे घूम-घूम कर शिक्षा, स्वास्थ्य-रक्षा आदि जनहित कार्य करने वाली टुकडियो का सगठन वनाने के लिये सलाह दी—जिन टुकडियो के नेताओ द्वारा निर्वाचित अध्यक्ष को ही, उन्होने काग्रेस अध्यक्ष मानने को कहा। यह उस महान् आत्मा का काग्रेस और उसके नेताओ के लिये अन्तिम इच्छा पत्र है। क्या इस ओर उनके उत्तराधिकारी ध्यान देगे ? वस्तुत भारत का इसी मे कल्याण है।

गाँधीजी एक ऐसी विभूति थे, जिनके नेतृत्व मे रूस और अमेरिका के श्रमवाद एव पूँजीवाद मे होनेवाले अन्तर्द्वन्द्व से त्रस्त ससार की जनता त्राण पा सकती थी, परन्तु हम उस दैविक नेतृत्वके योग्य न अपने को वना सके, और न उसका पूर्णत अनुसरण ही कर सके। काश अव भी हम वापू के वताये हुए मार्गका अनुगमन कर देश तथा देशवासियो को कल्याण पथ पर अग्रसर करते!

गाँधीजी जन्मजात नेता थे। युग-निर्माण का दायित्व लेकर इस पृथ्वी पर वे अवतरित हुए थे। यही कारण है कि सारे ससार के विरोध का सामना करने के लिये भी वे सदैव तत्पर रहते थे। दुर्गा सप्तशती मे एक आख्यान है कि दानवो के अत्याचारो से पृथ्वी को मुक्त करने के लिए जव महादुर्गा का अवतरण हुआ तो उसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग में सव देवताओ ने अपने-अपने तेज का सञ्चार किया था और इस प्रकार महादुर्गा इस ब्रह्माड के सारे तेज को लेकर अवतरित हुई थी। गीता के विराट् रूप मे भी इमी प्रकार चराचर-व्याप्त सारी विभूतियो का केन्द्रीभूत तेज था। अलौकिकता पर आधारित इन आख्यानो को वैज्ञानिकता की कसौटी पर कसना उनके अन्तर्भूत उद्देश्य का उपहास करना है—लौकिक मानदण्डो द्वारा उनका परीक्षण अनुचित ही नही, अन्यायपूर्ण भी है। वे तो लौकिक अभिव्यक्ति में अन्तरात्मा के रूप हे। उस अन्तरात्मा को ही हमें शिरोधार्य करना है। इस स्तर का स्पर्श करने की क्षमता विज्ञान मे अभी तक नही आ पाई है। यदि विज्ञान की सूक्ष्म दृष्टि मे इतनी सामर्थ्य होती तो महात्मा गाँधी के व्यक्तित्व के सम्मुख सिर झुका कर आज के विश्व का सवसे वडा वैज्ञानिक आइन्स्टीन ये उद्गार क्यो प्रकट करता —

'आने वाली पीढिया कठिनाई के साथ विश्वास करेंगी कि कभी ऐसे शरीर-धारी ने इस पृथ्वी पर पदार्पण किया था।'

गाँधीजी का व्यक्तित्व भी विराट् था। ससार का सारा सत्य तेजोरूप बनकर उनके अन्त करण मे केन्द्रीभूत हो गया था।

महानता का रहस्य

इसका अभिप्राय यह नही है कि हम गाँधीजी को ऐसी अलौकिक विभूति के रूप में स्वीकार करे जो हमारी नश्वर लौकिकता के पार्थिव स्पर्श से पूर्णतया परे हो। यह भावना तो उनके निरादर के समान होगी। गाँधीजी की महानता का रहस्य यह नही है कि वे दैवी तत्वो से बने थे। उन्होने स्वय कभी ऐसा दावा नही किया था। वे तो लौकिक मे भी परम लौकिक थे। इसी त्रिगुणात्मक पृथ्वी पर आविर्भूत होकर वे इसी की रज मे सत्यान्वेषक बन पाये थे और हमारे जैसे सामान्य जन-समुदाय की भ्रातृत्व-शृखला की एक कडी थे। जो दिव्य तेज और मनस्विता उन्होने प्राप्त की थी, वह हमारे ही बीच मे जीवनयापन करते हुए प्राप्त की थी। अत उनको हमारे मन स्पर्श से परे मानकर अपनी दुर्बलताओ पर आवरण डालना गाँधीजी के प्रति हमारी उपेक्षा ही होगी। उनके कार्य-कलापो को ईश्वरत्व के तेज की परिधि से आविष्ट करके हम अपने नैतिक दायित्वसे कायरतापूर्ण पलायन की जो चेष्टा करते हैं, यह उनके देशवासी होने के नाते हमारे लिए कभी शोभनीय नहीं हो सकती। गाँधीजी की तेजस्वी भावना का भी मूल्याकन इस मनोवृत्ति के द्वारा सही-सही नहीं हो सकता। हमें तो बार-बार अपने को यह स्मरण दिलाना होगा कि इस लौकिक जीवन में रहकर गाधी जी के अलौकिक व्यक्तित्व अर्जित करने का मूल रहस्य यह है कि उन्होने आजीवन मनुष्यत्व के व्यापक आदर्शो को अपने दैनिक जीवन में चरितार्थ करने की निर्भीक भावना की है और इस पथ मे आने वाले प्रत्येक कष्ट को सहर्ष स्वीकार किया है।

नरसिंह की अहिंसा

गाँधीजी ने अहिंसा का जो पथ अपनाया था और अपने अनुगामियो को भी जिस पर अग्रसर होने के लिए उन्होने आदेश दिया था, उसके भीतर दुर्बलता या साहसहीनता की प्रेरणा नही थी। इतिहास साक्षी है—उनके समान साहसी पुरुष ससार में कितनी बार पैदा हुआ है ? अहिंसा को अपना जीवन-दर्शन स्वीकार करने के भीतर मूल प्रेरणा यह थी कि शारीरिक शक्ति और अहिंसा उनके दृष्टिकोण मे व्यर्थ और मानवीय गौरव के प्रतिकूल थी। उनके अन्त करण में यह धारणा अचल

रूप से बद्धमूल हो गई थी कि हिंसा और नर-संहार मानवीय विद्रूपताएँ है और व्यर्थ होने के साथ-साथ वे प्रकृति के भूकम्प या विस्फोट जैसे उद्गारो की भाति स्वाभाविक एव अनिवार्य नही है। वे प्रकृत न होकर हमारे अनेक सृजनो की भाति पूर्णतया मनुष्य-कृत है। गाँधीजी युद्धो को मानवीय विकृतियो के परिणाम मानते थे और इसी तर्क से यह सिद्ध करते थे कि उनको रोकने की शक्ति भी मनुष्य मे ही है। अपने प्रसिद्ध लेख 'तलवार का सिद्धान्त' मे उन्होने अहिंसा के मूलभूत तत्वो का बडा सुन्दर और ओजस्वी निरूपण किया है और हिंसा को पशुत्व की प्रेरणा सावित करते हुए यह स्पष्ट कर दिया है कि मनुष्य का एकमात्र जीवन-दर्शन अहिंसा है। वे लिखते है—'बर्बर की आत्मा प्रसुप्त रहती है और शारीरिक शक्ति के सिवाय वह दूसरा कानून नही जानता। किन्तु मानवीय गौरव के लिए उच्चतर कानून चाहिए और वह है आत्मिक शक्ति।'

राजनीतिक परिमार्जन

गाँधीजी की अहिंसा की परिधि सीमित नही थी। सारी मानवता के दोषो का प्रक्षालन करने के लिए उन्होने सत्यान्वेषण का पथ अङ्गीकार किया था। गेरीवाल्डी, वाशिंगटन या कमालपाशा के साथ उनकी समता नही की जा सकती, क्योकि उनका कर्मक्षेत्र गाँधीजी की अपेक्षा काफी सकुचित था। वे केवल एकमात्र राष्ट्रीय नेता, सुधारक और सेनापति ही नहीं थे। उनके कर्म के तन्तु तो सारी मानवता तक फैले हुए थे। यही कारण है कि भारत का स्वातन्त्र्य-सग्राम अन्य देशो के स्वातन्त्र्य-सग्रामो की भाति साधन एव साध्य के प्रति उदासीन नही रहा है। गाँधीजी ने साधन और साध्य को एकरूपता के स्तर पर प्रतिष्ठित करके आधुनिक राजनीति के कलुष का परिमार्जन किया है। यूरोपीय सभ्यता के आडम्बरो के कारण राजनीति व्यवसाय ही नही बन गई थी, वरन् वह भद्रता के स्तर से नीचे उतर कर छल-छद्म एव पाखण्ड का सजीव रूप हो गई थी। राजनीति से परिचालित जीवन पर इसका प्रभाव कितना भयानक पड सकता है—आज के ध्वस्त यूरोप के देश इसके ज्वलत प्रमाण है। भारतीय स्वातन्त्र्य-आन्दोलन मे भी राजनीति के इस रूप का प्रवेश होता जा रहा था। किन्तु गाँधीजी को वह सहन नही हो सका। सत्यान्वेषण के प्रयोग में प्राणो की वलि चढा देने वाला सत्यवीर गाँधी विकृति के साथ कैसे समझौता कर सकता था? सिद्धान्त

की रक्षा के सामने उन्हें बडी से बडी राजनीतिक पराजय भी शिरोधार्य थी। राजकोट और गाँधी-इरविन पैक्ट में उन्होने राजनीतिक उद्देश्य की उपेक्षा करते हुए नैतिक सिद्धान्त की ही रक्षा की है।

कर्मभूमि की अभिव्यक्ति

मनुष्य के प्रकृत गौरव की रक्षा के लिए किया गया यह साहसी प्रयत्न अन्धकार-ग्रस्त मानवता के लिए ऐसा ज्योतिर्मय मम्वल है, जिसकी किरणे अन्तकाल तक मनुष्य को पशुत्व के सामने सिर ऊँचा करके निर्भीक खडा रहने का साहस देती रहेंगी। यह अमर दीप है और इसके साथ गाँधीजी भी शत-शत पीढियो तक अमर बने रहेंगे। मानवीय गौरव और मनुष्यत्व की रक्षा के लिए कब-कब आवश्यकता अनुभव नही हुई है? अपना निरादर कब-कब मनुष्य ने जहर के घूंट की तरह नहीं पिया है। मनुष्यत्व के मूलभूत तत्वो मे विश्वास जमाने के लिए गाँधीजी से पूर्व और उनके समय में भी कितनी सिफारशें की जाती रही है? किन्तु गाँधीजी की सिफारिश सबसे भिन्न थी। मन का विरोध वाणी तक ही सीमित रहकर निश्चेष्ट नही हो गया। हिंसा एव अन्याय के प्रतिकूल नैतिक विरोध की अभिव्यक्ति करके ही वे मौन रहने वाले व्यक्ति नही थे। पत्र-पत्रिकाओ मे लम्बे वक्तव्य प्रकाशित कराके ससार की हलचल से परे भाग कर एकान्तवास में सन्तोष खोजने वाले दार्शनिक भी वे नही थे। वे तो दूसरी ही मिट्टी के साबित हुए। उनके मन का प्रतिरोध वाणी में व्यक्त हुआ और वाणी स्तर से नीचे उतर कर कर्म के रूप मे मूर्त हुई। अन्त करण में समाई सारी दुनिया उनकी कर्मभूमि मे अवतरित होकर साकार हो गई। अपने सारे जीवन को उन्होने मन, वचन और कर्म के ऐक्य का मच बना दिया।

यूरोप में एक बार गाँधीजी के महत्व को गिराने की दिशा में प्रचार की एक लम्बी हिलोर उठी थी और उन्हें अन्य शान्तिवादी सुधारको की श्रेणी में रख कर अकर्मण्य साबित करने का दुराग्रह किया गया था। किन्तु मिथ्याके आवरण में सत्य की आभा कब तक अवगुंठित रहती? स्वय यूरोप में उसका प्रतिरोध प्रारम्भ हो गया। यूरोप के मनीषी, लेखक, विचारक और दार्शनिक रोम्या रोला ने इस कलुषित प्रचार के विरुद्ध अपनी आवाज उठाई। उन्होने गाधी जी को युग का एकमात्र कर्मयोगी सिद्ध करते हुए दु साहसी प्रचारको को अपनी कुचेष्टाएँ समेटने

की चेतावनी दी । रोम्या रोला ने गाधी जी को 'वाणी का देवता' न कह कर 'कर्म का देवता' कहा है ।

वे लिखते हैं—'नो वन हैज ए ग्रेटर हौरर ग्राफ पैस्सीविटी, दैन दिस फीयरलैस फाइटर, हू इज वन ग्राफ दि मोस्ट हीरो इन इनफारमेशन्स ग्राफ ए मैन हू रेजिस्ट्स दि सोल ग्राफ हिज मूवमैण्ट इज दि एक्टिव फोर्स ग्राफ दि लव, फेथ ऐण्ड सेक्रिफाइस ।'

'किसी को भी निष्क्रियता का इतना ग्रधिक भय नही रहा है,जितना इस निर्भीक योद्धा को है । पाप का विरोध करने वाले मानव-ग्रवतारो की परम्परा मे उनका शौर्य्य सबसे महान् है । प्रेम, विश्वास ग्रौर त्याग की सक्रिय शक्ति उनके ग्रान्दोलन की ग्रन्तरात्मा है ।'

रोम्या रोला के इन उद्‌गारो ने गाँधीजी की ग्रोर से उदासीन कई भारतीयो का भी नेत्रोन्मीलन किया था ।

विन्दु से सिन्धु तक

मानवता के इतिहास मे गाधी जी का नाम महात्मा बुद्ध एव ईसा से भी ग्रधिक ग्रादरणीय रहेगा, क्योकि उन्होने जीवन के सर्वाङ्गीण क्षेत्र मे ग्राध्यात्मिक मान्यताग्रो का प्रकाश फैलाया है । मानव-जीवन का कोई पक्ष उसके तप से ग्रस्पृश्य नही रहा है । युग-पुरुष तो वे थे ही, साथ ही पूर्ण पुरुष भी थे । किन्तु इतने ग्रलौकिक होते हुए भी वे हमारी लौकिकता के पोषण से ही महान् बने थे । भारत के कोटि-कोटि दरिद्रो के सामने ग्रपने ग्रन्त करण का करुणालय उडेल कर ही वे दरिद्रनारायण बने थे । वे उनके ग्रभावो की मूर्ति ही नही थे, बल्कि उनकी पूर्ति भी थे । लेकिन निम्नतम स्तर पर ग्रसहाय पडी जनता के लिए वे जितने बडे ग्राश्रय थे, बडे से बडे राष्ट्रीय नेता के लिए भी वे उतने ही बडे सम्बल थे । स्वय नेहरू जी ने लिखा है—

'ग्रौर तब गाधी जी का ग्राविर्भाव हुग्रा । मानो जीवनदायिनी वायु का एक प्रबल प्रवाह हमारे बीच मे ग्रा गया जिसमे हम ग्रपने ग्रापको विस्तीर्ण कर सकते थे ग्रौर विश्वास की सास ले सकते थे—मानो प्रकाश की एक बौछार हमारे ऊपर पडी हो जिसने ग्रन्धकार को बेध दिया हो ग्रौर हमारी दृष्टि के क्षितिज को प्रका-

शित कर दिया हो। उनका आगमन एक भयकर ववण्डर की भाति था जिसने अचलता को कम्पा दिया था और हमारे सब के निश्चयो को झकझोर दिया था।'

गाँधीजी की महानता का क्षितिज इतना असीम है। क्या काल का अपर्याप्त माप दण्ड उसे माप सकेगा ?

मनुस्मृति ने अपने 'एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मन । स्व स्व चरित्र शिक्षेरन् पृथिव्या सर्वमानवा । इस श्लोक द्वारा इस भारतवर्ष को जगद्गुरु वताया था । परन्तु इसका यह रूप इसकी सहस्राविक वर्षो की दासता ने ऐसा छिपा दिया था कि यह श्लोक उपहास-सा प्रतीत होता था । परमात्मा की कृपा से दासता के इन्ही दिनो मे एक ऐसा मनुष्य जन्मा जो वास्तव मे मनुष्य था और जिसने उसका सिर ऊँचा ही नही किया, उसे जगदगुरू सिद्ध भी कर दिया । आज ससार को भारत फिर शिक्षा देने मे समर्थ हुआ । उस महा-मानव ने परर्मीप वसिष्ठ की भाति ब्रह्मबल से क्षत्रिय वल को परास्त किया और इस प्रकार नास्ति को अस्ति करके दिखा दिया । इसीलिए लोग महात्मा गाँधी के पार्थिव शरीरके नाशपर दु.ख और शोक प्रकट करते है, यद्यपि भगवान् श्रीकृष्ण का यह वचन जानते है कि 'जातस्य हि ध्रुवो मृत्युध्रुवो जन्म मृतस्य च ।'

महात्मा गाँधी शोचनीय नही थे । शोचनीय तो वह है जिसने उनके पार्थिव शरीर का अन्त करने मे ही भलाई समझी । और वास्तव में भलाई हुई भी, पर यह भलाई उसकी सोची भलाई से भिन्न हुई । गाँधीजी ने आकर जितना भला नही किया उतना मर कर किया । राम, कृष्ण, बुद्ध आदि की कहानिया जैसे रह गई है वैसी गाँधी-गाथा भी रह गई और रह जायगी । कुछ लोग शका करेगे कि उनके मरने से तो हानि ही हुई, लाभ नही हुआ, इसलिए भला क्या हुआ ? परन्तु पर-मेश्वर के कार्यो का समझना कठिन होता है और सब लोग समझ नही पाते कि किस अभिप्राय मे वह क्या करता है । सन् १९०८ मे जब बम्बई हाईकोर्ट के स्पेशल जूरी ने लो० तिलक को राजद्रोह का अपराधी ठहराया था, तब उन्होने कहा था कि और उच्चतर शक्तिया है जो वस्तुओ के भाग्य का सञ्चालन करती है और परमेश्वर की यह इच्छा हो सकती है कि जिस कार्य का मै प्रतिनिधित्व करता हूँ वह मेरे स्वतन्त्र रहने की अपेक्षा वद्ध रहने मे अधिक अग्रसर होगा । गाँधीजी यदि कुछ कह पाते तो कदाचित् यही कहते कि 'इस शरीर से जो नही हो सका, परमात्मा की इच्छा है कि इसके नाश से वही कार्य हो ।—'

महात्मा गाँधी शान्तिप्रिय थे । वह मारकाट से अत्यन्त व्यथित हो रहे थे, इसलिए १२५ वर्ष जीवित रहने की इच्छा भी त्याग चुके थे । वह अहिंसा द्वारा हिंसा का अन्त करना चाहते थे, पर हिंसा से ही उनका अन्त हुआ । देखा गया है कि प्लेग से लोगो की रक्षा करने वाले भी उसके शिकार हो जाते हैं । महात्मा गाँधी हिंसा से लोगो की रक्षा करने का उद्योग कर रहे थे, पर वह भी हिंसक के हाथ से मारे गए । यदि गाँधीजी की इस लोक की यात्रा इस ढङ्ग से समाप्त न हो जाती तो जिस सस्था द्वारा उन्हे मारने का षड्यन्त्र रचा गया था उसका रूप इस प्रकार प्रकट भी न होता और उसका अन्त करने को सरकार वद्ध-परिकर भी न होती । गाँधीजी ने मर कर देश का यह उपकार किया । यदि वह स्वाभाविक मृत्यु से मरते तो देश का यह उपकार न होता । जैसे महर्षि दधीचि ने देवताओ को वज्र वनाने के लिए अपनी हड्डिया दे दी थी, गाँधीजी ने देश की इस अराजकता को दूर करने और उससे साम्प्रदायिक विष निकाल कर फेक देने के लिए ही मानो अपना शरीर दे दिया ।

जिस सस्था के वाहरी कार्यो को देखकर हमी नही, सरदार वल्लभ भाई पटेल जैसे नेता भी उसकी सराहना करते थे, वह 'विष रस भरा कनक घट' है यह महात्मा जी की मृत्यु से सिद्ध हो गया । हत्यारे ने सोचा होगा कि मैं गाँधीजी को मार कर हिन्दू हितो की रक्षा कर रहा हूँ । परन्तु जव वह देखेगा कि उसका फल विपरीत हुआ तव अपने कार्य पर पश्चात्ताप करेगा । गांधी जी की हत्या गोवध के समान ही हुई । जैसे गाय किसी का अहित नही करती वैसे वह भी अहित नही करते थे । हित ही करते थे वह । ऐसी दशा में उनको मारना आत्मघात ही कहा जायगा । समझ मे अन्तर का भेद होना स्वाभाविक है, परन्तु मतभेद दूर करने के लिए हत्या करना अत्यन्त निन्दनीय है । इसके लिए कोई हत्यारे की प्रशसा नही कर सकता ।

महात्मा गाँधी के मर जाने से उनकी वनाई कांग्रेस नही मरी । इसके विपरीत कांग्रेस और सवल हो गई । उससे जिस किसी का किसी विषय पर मतभेद था, उसके दूर करने का वह उपाय नही था । ससार मे जव इस प्रकार से दूसरे का मत वदलने का कभी यत्न हुआ है तव वरावर ही विफल हुआ है । इतिहास वताता है कि जिस किसी ने अपने मत के कारण प्राण दिये है उसका मत उसकी मृत्यु के वाद विशेष चमका है । सुकरात, ईसामसीह आदि कई ऐतिहासिक पुरुष इसके प्रमाण

है । महात्मा गाधी को पुराने लोगो का यह मत 'अक्कोहेन जिने कोहे असाधु साधुना जिने' बहुत प्रिय था । यह बौद्धो का सिद्धान्त न था । महाभारत मे भी 'अक्रोधेन जयेत् क्रोधं असाधु साधुता जयेत्' कहा गया है । गाँधीजी में यह विशेषता थी कि वह जिसको सिद्धान्त रूप से ग्रहण करते थे, उसे कैसी भी विपरीत अवस्था क्यो न हो, त्यागते नही थे ।

८

बापू का न बुझने वाला प्रकाश

कुकर्मी जब हो भाई शान्ति का प्रचार क्यों कर हो।
अभागे भंवर से भारत की नैया पार क्यो कर हो ।।

"अजो नित्य शाश्वतोय न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।"

शरीर के मारे जाने पर भी वह नही मरता, कारण वह अजन्मा, नित्य और शाश्वत है । गीता के उपर्युक्त श्लोकार्द्ध का यही अर्थ है । वह पुराना होने पर भी सदा नवीन है । यह उक्ति भगवान् श्रीकृष्ण की है, जो वास्तविक अर्थ मे पुरुषोत्तम थे, नर शरीर में ही नारायण । शरीर तो उन्हे भी त्यागना पडा, भगवान् रामचन्द्र को भी त्यागना पडा । जो शरीर अमर है वे भी तो लुप्त हो गए है, प्रकट नही होते । उनके शरीर के नष्ट न होने का प्रमाण यही है कि रजाकारो ने उन्हे नष्ट होते नही देखा । इससे इस नियम मे वाधा नही आती कि जो जनमा सो मरा, जो फरा सो सो झरा, जो वरा सो वुता । वापू के जीवन का मूल्याकन अभी नही किया जा सकता । हम उनके इतने निकट रहे है कि पूरा देख ही न सके । उनके लिए हमारे हृदय में श्रद्धा है, भक्ति है और कृतज्ञता, उसी प्रकार कुछ लोग और कुछ समूह उनसे घृणा भी करते थे । इसका प्रमाण एक तो यह है ही कि उनका वह पवित्र शरीर एक हत्यारे के हाथ से नष्ट किया गया । सूक्ष्मदर्शी पाठको के ध्यान मे यह वात भी आ गई होगी कि महात्मा गाधी की मृत्यु से व्यथित होकर प्राय. सब बडे-बडे देशी और विदेशी राष्ट्रो के नायको ने गाधी जी को श्रद्धामय पुष्पाजलि अर्पण की पर एक वडा देश इसमे अपवाद हुआ । इसमे आश्चर्य की कोई वात नही है । किसी अत्यन्त प्रचलित दोष के निवारणार्थ ही विभूतिया जन्म लेती है, अवतार होते है या पैगम्बर भेजे जाते है । उनके उपदेशो से वे चले जाते है जो उस दोष को ही धर्म समझते है तथा महापुरुषो को धर्मद्रोही । ऐसे लोग इस देश में भी है, अन्य देशो

मे हो तो कोई आश्चर्य की बात नही, जो अहिंसा और समदर्शिता को सामूहिक धर्म नही मानते । बहुतो ने अपने इस अन्तरङ्ग भाव को छिपाकर केवल मुह मे प्रशसा की है । कुछ ऐसे है जो इस तत्व को अनावश्यक समझते है । वे चुप्पी मार बैठे है । गाधीजी के व्यक्तित्व का महत्व तो यह है कि किसी ने खुलकर उनकी निन्दा नही की । किसी ने यह कहने का साहस नही किया कि सत्य और अहिंसा ढोग है । गाधीजी के भक्तो मे भी बहुत से, हमारे मत मे अधिकाश, ऐसे है जो अहिंसा को समयानुकूल नीति समझते रहे है, त्रिकालाबाधित सत्य नही ।

एक और बात है जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है । परमाणु बम के आविष्कार से जगत विचलित हो गया है । उसकी भयकरता का विचार करके मनीषी चिन्तित भी हो रहे है । जिस राष्ट्र को परमाणु शक्ति का रहस्य मालूम हो गया है, उसके उपयोग का साधन मिल गया है, वह तो मस्त है पर दूसरे निकट भविष्य में वर्तमान सभ्यता के नाश की कल्पना करने लग गये है । यदि अन्य किसी राष्ट्र व राष्ट्रो को अमेरिका का गुप्त भेद मालूम हो गया तो कोई आश्चर्य की बात नही । इसके सिवा यह भी स्मरण रखना चाहिये कि—विनाशशक्ति केवल परमाणु में ही नही है, रोगाणुओ मे है और किरणो मे भी है । दुनिया इनकी भी खोज में लगी हुई है । परन्तु भय सबका है । जिसे यह अस्त्र मिला है वह भी भयभीत है और जिसे नही मिला है वह तो है ही । दृष्टान्त स्वरूप अमेरिका को ही लीजिये । वह परमाणु शक्ति की थाह पा गया है सही, तो भी अन्यान्य महास्त्रो की खोज मे लगा हुआ है । क्यो ? कारण, भय ! इसीसे एक ओर महास्त्रो की खोज मे भी है और दूसरी ओर अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति सस्था का प्रमुखत्व भी ग्रहण कर रहा है । यह राजनीति भी हो सकती है पर हम इसे सरल अर्थ मे ही लेते है । आखिर राज-नीति का भी तो कोई कारण होता ही है । शान्ति के प्रयत्न यदि राजनैतिक दृष्टि से ही किये जाते हो तो भी उनका कारण होता है और वह है विनाश का भय । यह भय अनिच्छुक लोगो को भी अहिंसा की ओर प्रेरित कर रहा है, अविश्वासी को विश्वासी बना रहा है । 'अहिंसा परमो धर्म' यह तत्व सनातन है, शाश्वत है, वैसा ही जैसा सत्य यह निबल का बल भी है । कायर डरपोक को निर्भय, वीर बना सकता है । शस्त्रहीन भारत को स्वतन्त्रता प्रदान करने के लिये एक अत्यन्त बल-वान् साम्राज्य को बाध्य करके महात्मा गाधी ने इसे सत्य सिद्ध कर दिखाया है ।

केवल यही नही, एक वात की ओर वहुत कम लोगो का ध्यान गया है । गाधीजी ने भारत को स्वतन्त्रता ही नही दिलायी, ब्रिटिश साम्राज्य का अन्त भी कर डाला । उसके शासको की विचार धारा ही अन्यमुखी हो गयी है । तभी तो भारत के वाद ही वर्मा और लका जैसे एक छोटे से टापू को भी स्वतन्त्रता दी गई । यद्यपि सामयिक दृष्टि से उसका महत्व ब्रिटेन के लिये अव भी वहुत अधिक है । यह परम्परा यही समाप्त होने नही जा रही है, इतना ही कहना अल होगा ।

महात्मा गाधी के जीवन की महत्ता इसी वात मे है कि राजनीतिक क्षेत्र मे भी सामूहिक रूप से अहिसा की असीम शक्ति का सफल प्रयोग उन्होने कर दिखाया । इसके पहले एकाधिक महापुरुषो ने अहिसा की महिमा गायी थी, पर किसी ने सामूहिक रूप से उसे सिद्ध नही कर दिखाया था। ईसामसीह ने यहा तक कहा कि——'तुम्हारे एक गाल पर कोई थप्पड मारे तो उसके सामने दूसरा गाल कर दो ।' यह व्यक्तिगत अहिसा है, सामूहिक नही । *सामूहिक अहिसा महात्मा गाँधी ने ही* सिखायी और सफलता के साथ सिखायी । यही गाधी जी की विशेषता है । उनके जीवनकाल मे जगत उसका महत्व समझ न सका तो न सही, अव समझेगा । त्याग, तपस्या, आत्माभिमान, देशाभिमान आदि सव गुणो का समावेश उस महात्मा ने अहिसा और सत्य में कर लिया था और अपने जीवन मे उसे सफल कर दिखाया । वह जीवन कितना पवित्र और कितना अलक था । हम नही जानते कि हत्यारे का हाथ उन पर कैसे उठा । सम्भवत इसमे भी ईश्वर का सकेत था । गाधी जी स्वय कहा करते थे कि —'ईश्वर को मुझसे कुछ कराना होगा तो मुझे जीवित रखेगा अन्यथा अपने पास वुला लेगा ।' ईश्वर ने ही वुला लिया । गोडसे तो केवल निमित्त कारण हुआ । उसने अपने आपको, अपने कुल और अपनी जाति को तथा हिन्दुत्व को कलकित करके जगत को रुला दिया । गाधी जी ने शरीर त्याग दिया पर उसकी भी भस्म सारे देश मे मिल गयी—यहा की मृत्तिका भी पवित्र हो गयी । क्या देश भर मे सर्वत्र किसी के इस प्रकार अस्थिप्रवाह किये जाने की वात भी किसी ने सुनी थी ? क्या इतिहास मे इसका उदाहरण है ? गाधी जी मर गए और मर कर देशमय हो गये । इतने दिन वाद भारत-भूमि गाधी-भूमि हो गयी । ईश्वर को यही करना था । शरीर से जितना हो सकता था करा लिया, आगे का काम आत्मा करेगी । वह तो अजर,नित्य और शाश्वत् है । उस पवित्र आत्मा के प्रति एक वार पुन श्रद्धाजलि अर्पण कर हम अपने कर्म मे लगते है । उस कर्म का प्रधान

उद्देश्य व लक्ष्य वही होगा जिसके लिये महात्मा गाँधी मरे, नही, अमर हो गये। ईश्वर का यही सकेत था। उसने अपने प्राय सभी लाडलो को इसी प्रकार जागतिक प्रगति का कारण बनाया है। योगी अरविन्द ने सच कहा है—'वह प्रकाश बुझा नही है जल रहा है।' जल ही नही रहा है, अधिक व्याप्त हो गया है। वह अनासक्ति योग का फल है। इसी मे भारत की सच्ची शक्ति है।

जय हिन्द! महात्मा गाँधी जी की जय!!

विश्व का भाग्य धूमाव्रत हो गया है। हिंसा से सराबोर वसुधा तडफडा उठी है। रक्तरजित वसुन्धरा 'अहिंसा परमोधर्म' का उपदेश सुनने के लिए कातर एव विह्वल है। महात्मा जी अपनी तप पूत हड्डियो से विश्व मे मानवता का अलौकिक आलोक फैला चुके थे। समग्र ससार उनके मुट्ठी भर हाडो मे असीम प्रकाश देख विस्मय विमुग्ध हो गया था। वे पीडितो की निधि थे और हम अकिंचनो की आशाओ के अटूट भण्डार। वे करोडो मानवो के हृदय-सम्राट् और अभिलाषाओ के प्रतीक थे। उन्होने आशका और सन्देह, अविश्वास और दुराग्रह, मिथ्याभिमान और दकियानूसी मनोवृत्ति के सघन अन्धकार का भेदन कर मानवता के कल्याण के लिए "अहिंसा और त्याग" का मार्ग निकाल लिया था।

मानव-समाज की थाती

भारतवर्ष ने उनके बतलाये एव दिखलाये मार्ग पर चलकर महान् त्याग किया, अत्यन्त तेजस्वितापूर्ण बलिदान किया और अपने लिए ससार के प्रमुख देशो मे एक स्थान बना लिया। वे हम भारतियो के तो एक प्रकार से भगवान् ही थे। उनमे भौतिकता और नास्तिकता के इस युग मे भी इतना अधिक आकर्षण था कि उन्हे हर राष्ट्र देवता मानता था और प्रत्येक राष्ट्र ने उनकी पूजा महात्मा ईसा, महात्मा बुद्ध, सुकरात और नर-नारायण की तरह की है। वास्तव मे महात्मा गाँधी एक राष्ट्र अथवा एक काल की सम्पत्ति नही है। वे विश्व के है और विश्व का उन पर पूरा अधिकार है। वे तो सम्पूर्ण मानव समाज की सर्वकालीन सार्वभौम थाती है। प्रेम, सत्य और अहिंसा की सजीव प्रतिमा, ससार भर के कल्याण की प्रेरणा से अनुप्राणित होकर अहर्निश तपस्या करने वाली यह विभूति सार्वजनिक हृदयो मे घर कर चुकी है। मनुष्य समाज का हृदय अपने आप स्वभावत इस टेढ पसली अच्छे नग्न नारायण की ओर खिंच गया है। विशालतम साम्राज्य के अधिष्ठाता अंग्रेज

लोग भी इनकी पूजा और अर्चना करते है । अमेरिका, रूस प्रभृति राष्ट्र भी उनके चरणो की धूलि लेने के लिये लालायित रहते थे । जब गाधी जी विलायत गये थे तो विलायत की जनता ने उनका जैसा स्वागत किया वैसा स्वागत आज तक अन्य किसी महापुरुष का नही हुआ है ।

अग्रेज भी भक्त

विलायत पहुँचने पर विलायत की जनता ने 'अच्छे बुढऊ गाँधी' और 'महात्मा गाँधी की जय' की स्वागत सूचक ध्वनि से दिशाओ को गुञ्जित करके अपने हृदय की शुद्ध सात्विकताका परिचय दिया था। काश हम भारतीय इस विभूतिको सजोकर रख पाते ! अच्छे बुढऊ गाँधी मे अँग्रेजो की कैसी अनुपम सौहार्द भावना परिलक्षित होती है । कितना प्रेमपूर्ण सम्बोधन है । कैसा अनुपम आह्लाद है । जिस गाँधी ने हम भारतीयो की प्रगति के लिए अग्रेजी साम्राज्य की जडे खोखली कर दी, जिस महापुरुष ने चरखे द्वारा अग्रेजी वस्त्र व्यवसाय के बाजार को चौपट कर दिया और जिसने लोकोत्तर दृढता के साथ अग्रेजी साम्राज्य से लोहा लिया उसी महापुरुष को अग्रेज जनता ने अपना हृदय उडेल दिया । हम भारतीयो को सोचना चाहिए कि इस करिश्मे का अर्थ क्या है ? मानव समाज का हृदय तमाम आवरणो का होते हुए भी तथा नाना प्रकार के पक्षपातो और पूर्व निर्धारित धारणाओ से आवृत्त रहते हुए भी निर्मल प्रेमपूर्ण और पारखी है । आओ, हमलोग अपने इष्टदेव को पहचाने । बापू तो साक्षात् नारायण थे । प्राणीमात्र के शुभैषी थे । वे विशाल विराट्, महान् और अपूर्व क्रातिकारी थे । विमल तेजधारी समग्र मानवता के सूर्य थे ।

नीलकण्ठ बापू

और इस समय भारत राष्ट्र का भाग्य ही नही बल्कि समग्र विश्व का भाग्य किसी अलख झलक की अदृष्ट तराजू के पलडे मे लप-झप कर रहा है । दूर से दूर देख सकने वाली निर्मल दृष्टि भी भविष्य का अन्धकार भेदन करने मे समर्थ नही हो सकती । पुरुषार्थ और विवेक, ज्ञान और बुद्धि विश्व के प्रागण मे बापू की तरह प्रकाश की विभा फैलाने मे असमर्थ हैं । उन्होने अपने जीवन मे नीलकण्ठधारी महादेव की तरह विषपान कर ससार के कोने-कोने मे प्रकाश फैलाया । उनका सारा जीवन विषपान करते ही बीता । विष के एक दो घूंट नही, प्याले के प्याले

उन्हे पीने पडे । उन्हे विषपान करने की आदत सी लग गई थी । इधर हाल के दिनो में उन्हे बराबर ही हलाहल पान करना पडा । अमृतपान और सुधापान उनके भाग्य में कहाँ ? बम प्रहार भी तो हलाहल ही था, उन्होंने इस हलाहल को पान करते हुए कहा—"ईश्वर ने मुझे बचा लिया और मुझसे वह और कुछ काम लेना चाहता है ।"

कष्ट का कार्य मार्ग

अब तो बापू के अभाव में आगे का मार्ग बडा ही बीहड है, कण्टकाकीर्ण है । इसमे किसी को सन्देह नही कि भविष्य में भारतवर्ष के जनसाधारण को कठोर परीक्षा की प्रचण्ड अग्नि में तपना पडेगा । हमे मानव समाज के नवीन इतिहास का निर्माण करते समय बापू के अभाव में रोना पडेगा । हिंसा और मार-काट की जगह हमने अहिंसा, सत्य प्रेम को स्थान दिया है । बापू के इस नवीन आविष्कार को नवयुग के इतिहास मे अमर बनाना होगा, हमें अपने देश मे इसको स्थान देकर उनके पदचिह्नो पर चलना होगा । यह प्रयोग हम भारतीयो को अन्त तक निबाहना है । साम्प्रदायिकता के विषाक्त वातावरण मे हमे अहिंसा के मार्ग पर दृढतापूर्वक आरूढ रहना होगा । इस मार्ग से पराङमुख होना हमारे लिए विकट अभिशाप सिद्ध होगा । अहिंसा की रक्षा के लिए चाहना और मृत्यु हमारी जीवन सहचरी होगी । हा, हमारा रास्ता कण्टकाकीर्ण है । वर्तमान युग का सर्वश्रेष्ठ पथ-प्रदर्शक खो देनेका प्रायश्चित्त हमे करना होगा और इस कलक का प्रायश्चित्त बापू के चरण-चिह्नो पर चलने से ही होगा । बापू का मार्ग कण्टकाकीर्ण है । बीहड है, दुर्गम है । उस रास्ते पर हमें छल, प्रपञ्च, ईर्ष्या, द्वेष, स्वार्थभावना और पार्टी-बन्दी को स्थान नही देना होगा । नही तो बापू की आत्मा हमें कोसेगी और हम उनकी स्वर्गीय आत्मा की व्यथा को बढायेंगे ।

बापू का ब्रह्मास्त्र

सत्य, अहिंसा और प्रेम ही उनका ब्रह्मास्त्र है, बापू के इस ब्रह्मास्त्र का चमत्कार १९३० मे सारे विश्व ने देखा । निखिल विश्व ने एक स्वर से इस ब्रह्मास्त्र की भूरि-भूरि प्रशसा की है । सभी लोगो ने एक स्वर मे स्वीकार किया है कि वास्तव में शाति का एकमात्र उपाय अहिंसा ही है । यही कारण है कि आज इस अद्वितीय कर्मवीर महापुरुष के आदर्श गुणो पर, अपूर्व बलिदान पर, विचित्र आत्मशक्ति पर,

विलक्षण सत्य परायणता पर, अश्रुतपूर्व अहिंसा पर, विशाल राजनीति पर, अचल और अनुपम गम्भीरता पर, विश्वमोहिनी मुस्कान पर, विरोधियो के प्रति भी सहानुभूति पर, धरासी धीरता पर, निर्भीक निष्पक्षता पर, असाधारण सादगी पर, विवेकपूर्ण विवेचना पर, अद्‌भुत त्याग और तपश्चर्या पर, निस्वार्थ विश्व सेवा पर ससार न्योछावर हो उठा। ससार के कोने-कोने मे, प्रभात, दोपहर, शाम के पत्रो मे, साप्ताहिक पत्रो मे, मासिक पत्र-पत्रिकाओ मे, सिनेमा मे, थियेटर मे, रेडियो मे, तथा रेस्तरा मे, क्लबो और नाचघरो मे, बच्चो के किस्सो कहानियो मे, प्रोफेसरो तथा राजनीतिज्ञो की हर बातो मे बापू की ही चर्चा देश-विदेश मे हो रही है। भारत की तो बात ही दूसरी है। यह तो उनके बिना अनाथ हो गया।

हमारा मार्ग

'रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम।
अल्ला ईश्वर एकहि नाम, सबको सन्मति दो भगवान्॥

मानवता के परित्राण के लिए लोमहर्षक अग्नि मस्तक, हिंसावादी, युद्ध प्रेमी, दुर्द्धर्ष, खून के प्यासे, भौतिकवाद के उपासक मानव को हमे इस पवित्र घोष द्वारा सत्य का साधक बनाना है। जो अब तक व्यष्टि रूप मे होता आया है। उसी काम को समष्टि रूप मे करने के लिए प्रस्तुत हो जाये तो हम अपने को बापू के तुच्छ अनुयायी कह सकेंगे। हम तो देववाणी में इतना ही कहते हुए बापू के चरण कमलो पर श्रद्धा के फूल चढायेंगे—

निखिलभुवनपाल. श्रीपतिर्दीनबन्धु दिशतु शत सहस्र गाँधिने मङ्गल नाम।

राष्ट्रभाषा का प्रश्न

जिस अँग्रेजी भाषा के द्वारा हमारी पराधीनता अधिक दृढ हुई, हम दिनोदिन अपनी सस्कृति से अपरिचित हुए और विदेशियो के क्रीत दास बने—उसकी स्थिरता को भला गाँधीजी कब सहन कर सकते थे। उन्होने प्रत्येक आन्दोलन मे अँग्रेजी पठन-पाठन का विरोध किया और उस पद्धति का खण्डन किया। अवसर पाते ही शिक्षा का माध्यम मातृभाषा स्वीकृत कराया और एक राष्ट्रभाषा का प्रचार किया। राष्ट्रभाषा प्रचार का कार्य गाँधी जी पर्याप्त समय से करते आ रहे है? इनके सतत् प्रयत्न से लाखो व्यक्तियो ने जो अहिन्दी प्रातो के है, हिन्दुस्तानी का पठन-पाठन प्रारम्भ किया। इन्ही के उद्योग से—दक्षिण-हिन्दुस्तानी प्रचार सभा तथा राष्ट्रभाषा

प्रचार समिति वर्धा का कार्य वर्षों से सुचारु रूप से चल रहा है। राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध में थोड़े दिनो से इनके साथियो में कुछ मतभेद हुआ। यह मतभेद विशेष रूप से भाषा के स्वरूप और लिपि का है। यदि सौभाग्य से गाँधीजी और जीवित रहते तो इसका भी समुचित निराकरण वे कर जाते।

मद्य निषेध

यह कार्य गाँधीजी की प्रेरणा से सदैव राजनीतिक-रचनात्मक कार्यो का प्रोग्राम रहा है। प्राय कांग्रेस के अधिकांश अधिवेशनो में इसके निषेध का प्रचार किया गया। मद्य-उत्पादन के साधन तक नष्ट किये गये तथा प्रांतीय स्वराज्य पाने पर इस दिशा में सफल प्रयास हुए।

अछूत समस्या

हमारे देश में दुर्भाग्य से ६ और ७ करोड के बीच मे ऐसे व्यक्तियो की सख्या है जो अछूत आदिवासी कहे जाते है। ये समाज में घृणित प्राणी समझे जाते है। समाज में इनका आदर तो दूर की बात, छूना भी पाप माना जाता है। हमारे देश के लिए यह कलक की बात है। जिस देश के धर्म ने पत्थरो की भी पूजा का विधान किया हो वह मानव देवो को इस प्रकार घृणित समझे, इससे बड़ा अत्याचार भला क्या होगा? इस घोर अन्याय का यदि सबसे अधिक किसी ने सामना किया और अपने को खतरो में डाला तो वह गाँधीजी है। सन् १९३२ ई०में उन्होंने जान की बाजी लगाकर सयुक्त निर्वाचन द्वारा हिन्दू एकता की रक्षा की थी। मन्दिर प्रवेश, सार्वजनिक स्थानो मे प्रवेश, स्कूल, होटल में प्रवेश आदि के लिए गाँधीजी ने सतत् सघर्ष किया। अपने जीवन के पवित्रतम कार्यो मे इसे समझा। स्वयमेव 'हरिजन' पत्र निकाला और 'हरिजन सेवक सघ' नामक सस्था की स्थापना की जिसका कार्य सारे देश मे व्याप्त है। हरिजनो को सारी सरकारी सुविधाओ का अधिकारी बनाया।

आर्थिक समानता

गांधीजी सदैव दरिद्रो के हित में सलग्न रहे। उनका स्वावलम्बन मे विश्वास था। पाश्चात्य औद्योगिककरण और मशीन-युगमे उनकी श्रद्धा न थी। वे सदैव यह चाहते रहे कि देशमें सभी सुखी और सम्पन्न हो। अपनी व्यक्तिगत विचारधारा के

कारण उन्हे आवश्यकताओ के सयम मे विश्वास था, न की वर्द्धन में । तृष्णाओ का प्रसार उन्हे कभी न भाया । इसलिए वे देवत्व-उन्मुख व्यक्ति थे । उनकी आर्थिक समानता अहिसक आधार रखती थी जिसमे नैतिक वल अनिवार्य था, मानव के उच्च आदर्श को वे स्वत उद्भूत मानते थे । अत उनकी आर्थिक व्यवस्था का चिन्तन स्वय उनका ही रहा । इसके अतिरिक्त भी किसानो के लिए रचनात्मक कार्यो मे उनकी गति वहुत तीव्र रही । चम्पारन, खेडा, वारदोली जैसे किसान आन्दोलनो का सफलतापूर्वक उन्होने नेतृत्व किया था । नमक-कानून जैसे साधनो को लेकर इतना महत्वपूर्ण आन्दोलन प्रारम्भ कर देना उनकी किसान प्रियता का अद्भुत उदाहरण है । श्रमिक वर्ग के लिए वे सदैव तत्पर रहे । अहमदावाद मजदूर सघ हिन्दुस्तान के लिए एक अनुकरणीय नमूना है । इसी प्रकार मजदूर सेवक सघ, गो सेवा सघ, आदिवासी सेवा सघ आदि कितनी ही सस्थाएँ देश मे पूज्य वापू जी द्वारा अनुप्राणित है ।

वापू हरिजन-वस्ती और विडला भवन की मनोरम भमि मे रहे, किन्तु वह दीन-दुखियो को कभी नही भूले । वह उनके परमेश्वर थे । वह उनमे और परमेश्वर मे भेद न करते थे । इसीलिए परमेश्वर की प्रार्थना मुँह से करते समय उनके कान पीडितो की पुकार सुनने के लिए खुले रहते थे । पीडित हिन्दू होता चाहे मुसलमान, पुरुष होता चाहे स्त्री,वालक होता चाहे वृद्ध,उनके लिए पीडित था और इसीलिए सेव्य था । वह उनकी रक्षा दोनो वाहें फैलाकर करते थे और जव देखते थे कि जड जनता के वहरे कान उनकी अनुनय-विनय को नही सुनते तो वह अपने प्राणो को वाजी पर लगाने की वात सोचते थे । उन्होने दिल्ली से मुसलमानो को प्रवास करते देखकर उपवास किया और इस वात पर आग्रह किया कि हिन्दू उन्हे दिल्ली मे ही वसने दे । हिन्दू पाकिस्तान में हिन्दुओ की समाप्ति और साम्पत्तिक हानि के समाचारो से रोष में भरे हुए थे । गाँधीजी ने उनमें से वहुत वडे वहुमत का हृदय-परिवर्तन किया और उनके रोष को शात किया, किन्तु पागल लोग किस समाज मे नही है ? अतत एक पागल हिन्दू समाज में भी आगे वढा और उसने गाँधीजी की जीवनलीला समाप्त कर दी । गाँधीजी का जीवन भी इस प्रकार पीडितो की पीडा दूर करने के प्रयत्न मे गया । उनकी गहन करुणा उनके अन्तिम सास तक उनके साथ थी ।

राजनीतिज्ञ गाँधीजी

गाँधीजी मेरे लिए दूरदर्शी राजनीतिज्ञ थे। जिन लोगो की लघु-दृष्टि है, वे उन्हें यथार्थ रूप में नही देख सकते थे। उन्हे यथार्थ रूप में देखने के लिए दूर-दृष्टि की आवश्यकता होती थी। कॉंग्रेस के लिए वह प्रकाश-स्तम्भ थे जिसने उसे कई चट्टानो पर टकराने मे वचाया। वह काँग्रेस मे सम्मिलित नही थे, किन्तु कॉंग्रेस उनके विना थी कहा ? जव काँग्रेस को मार्ग दिखाई न देता और वह अपने आपको मरुभूमि में मार्ग भूले हुए पथिककी भाति पथ-भ्रष्ट पाती तो वह सदा गाँधी जी का ही तो सहारा लेती थी। देश की स्वतन्त्रता की लडाई कैसे लडे, जव-जव यह प्रश्न सम्मुख आया तव-तव उसका उत्तर उसे गाँधीजी से प्राप्त हुआ।

गाँधीजी का ऋषित्व

काँग्रेस मे नेता वहुत है और वहुत अच्छे हैं, किन्तु गाँधीजी कोई नही। सव गाँधीजी के पास दौडे जाते थे और पूछते थे—यह स्थिति है, यह कदम उठाये तो परिणाम क्या होगा ? गाँधीजी ऋषि थे, उन्हे दिव्य दृष्टि प्राप्त थी। वह उन्हे तुरन्त वता देते—जिस प्रकार पिता अपने पुत्रो को समझा देता है—कि श्रेय का पथ कौन सा है।

कॉंग्रेस के नेता गाँधीजी को पहचानते थे। वे सदा उनसे आश्वासन लेकर ही लौटते थे। वे उनकी राजनीतिक दूरदर्शिता के कायल थे। उन्हे गाँधीजी की सलाह जचती थी और उसके आधार पर चलने में वे जोखम से सरक्षण अनुभव करते थे। यो तो कई वार उन्होने गाँधीजी की सत्सम्मति की अवहेलना भी की है और गाँधीजी ने उन्हे इसकी छूट दी, क्योकि वह यह अनुभव करते थे कि जनतत्री सस्था के रूप में उन्हे उसके स्वतत्र निर्णय मे अपने प्रभाव से वाधक नही वनना चाहिए। किन्तु जव कभी ऐसा अवसर आया उन्होने अपना विचार स्पष्ट रूप से व्यक्त कर दिया और उसके पश्चात् जो भी निर्णय किया गया उसे उन्होने स्वीकार कर लिया।

काँग्रेस को अपने प्रभाव से मुक्त करने के लिए ही उन्होने काग्रेस से पृथक् रहना आरम्भ किया था। यह जनतत्रीयता के प्रति उनका आदर भाव था उनकी महानता इससे वढ गई थी और वह काग्रेस के और भी समीप आ गये थे।

गाँधीजी के किसी कदम की दूरदर्शिता पीछे ज्ञात होती थी। यह सदा का अनुभव था। उन्होने देश को विभाजन के वाद वार-वार चेताया कि यदि देश मे शान्ति न रही और हम आन्तरिक कलह मे फँस गए तो सम्भव है सयुक्त राष्ट्रीय सघ का नियत्रण यहा आ जाय। उनकी यह चेतावनी आज हमे कितनी सत्य प्रतीत होती है जव हम देखते है कि सयुक्त राष्ट्रीय सघ मे अधिकाश राष्ट्र भारत-विरोधी है और यदि उनका दाव चढ जाय तो वे भारत का अभ्युदय खटाई में डाल देने में शायद ही हिचकिचाये।

गाँधीजी ने भारतीय मुसलमानो के साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करने का उपदेश यद्यपि अपनी सहज मानव-प्रेम की प्रवृत्ति से प्रेरित होकर दिया था, किन्तु उसका फलितार्थ यह भी है कि सयुक्त राष्ट्रीय सघ को कही भारत की नवजात स्वतन्त्रता की हत्या करने का अवसर प्राप्त न हो जाय।

प्रकाश बुझ गया

मुझे लगता है कि भारत ने मूर्खतावश एक अचूक प्रकाश खो दिया। वह प्रकाश जो दिव्य था, जो बीहड और ऊवडखावड प्रदेशों मे जाने वाली राह मे भी मार्ग वताता था। दुर्भाग्य हमारा!

गाँधीजी योगी न थे, किन्तु वे ईश्वरभक्त और संयमी थे। वह ब्रह्मचारी थे। उनकी अद्भुत और अलौकिक शक्तियो का रहस्य यही है।

पतजलि मुनि ने साधकों के लिए पाच महाव्रत वताये है—अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। गांधी जी ने जीवन-भर इनके पालन करने का प्रयत्न किया, इसलिए वह महाव्रती थे।

गाँधीजी दु खितो के लिए दु खी होते थे, किन्तु फिर भी वह अशोक थे। जिन वातो से सामान्य जन हर्षित और दु खित होते है उनसे वे हर्षित और दु खित न होते थे। भारी से भारी विपत्ति उन्हें विचलित न कर सकती थी। वह उनकी स्थितप्रज्ञता थी।

गाँधीजी को अपने परिवार से मोह न था। मानव जाति उनका परिवार था। देश उनका समाज था। समाज के वच्चे उनके वच्चे थे, जिनके लिए उनके हृदय में समान प्रेम था।

जिस वस्तु को उन्होंने अपने हाथो मे बनाया, यदि उन्हें यह अनुभव हुआ कि उसे भङ्ग कर देना चाहिए तो उन्होंने उसे भी तुरन्त भङ्ग कर दिया। साबरमती आश्रम इसका एक उदाहरण है।

गाँधीजी गीता के भक्त थे। वह उनके जीवन की मार्ग-निर्देशिका थी। उन्होंने उसके उपदेशों के अनुसार जीवन-यापन किया। वह अपना कर्त्तव्य कभी चूकते न थे। उनके समान कर्त्तव्य-परायण व्यक्ति कम होते है। उनका महात्मापन यही तो था। उनका जीवन देश के प्रति, समाज के प्रति और परिवार के प्रति कर्त्तव्यो के सामजस्य का सुन्दर उदाहरण था, किन्तु उनकी यह सब कर्म-साधना निष्काम थी। वह कर्त्तव्य के लिए कर्म करते फिरते थे, फल की इच्छा से नही। दूसरे शब्दो में वह सच्चे निष्काम कर्मयोगी थे।

जीवन में साम्यवाद

गाधीजी साम्यवादी न थे, किन्तु उनके जीवन में साम्यवाद था। उन्होंने अपना जीवनस्तर जनसाधारण के जीवन-स्तर के समान रखा था। रहन-सहन में जनसाधारण से उनकी एकता थी। खान-पान में भी थी। अमीरी साधनो का उपभोग उन्होंने विलासिता के लिए कभी नही किया। हाँ, जन-सेवा में उनकी आवश्यकता होती तो वे उनका उपयोग कर लेते थे। व्यावहारिक जीवन में जितने साम्यवादी वे थे, उतने साम्यवादी भी नही होते। सत्य तो यह है कि विलासिता में पले हुए युवक निर्धन जनसाधारण के जीवन-स्तर पर नही उतर सकते और यदि उतर भी आये तो वहाँ स्थिर नही रह सकते। दरिद्र समाज मे साम्यवाद को लाने का अर्थ धनिक के लिए त्याग ही हो सकता है। यह त्याग गाँधीजी ने किया था। ऐसा त्याग कम लोग ही कर सकते है। गाँधीजी अधिक सच्चे साम्यवादी है, यह सत्य मैंने बहुत पहले स्वीकार कर लिया था।

गाँधीजी ने अपने जीवन में पीड़ित मानवता के लिए जो कुछ त्याग व सेवा की है वह युगो तक भावी पीढ़ियाँ न भूलेंगी। उनके सब काम सेवा की ही भावना मे होते थे। कोई भी कार्य वह फजूल न करते थे। अगर कोई संस्था सुचारु रूप मे कार्य नही कर पाती या उसके कार्यकर्त्ताओ में उस कार्य को करने की योग्यता नही है अथवा कार्यकर्त्ताओ को समय नही मिल पाता, तो बापू कभी यह नही चाहते थे कि संस्था का अस्तित्व बचा रहे और वह निर्जीव होकर रहे।

वह हमेशा उसे वन्द कर देने के पक्ष में थे। आज जितनी सस्थाये उनके द्वारा स्थापित है, सब अपना कार्य सुचारु रूप से कर रही है। हर सस्था को अपना एक काम सौंप दिया जाता था और गाँधीजी उसका पथ-प्रदर्शन करते थे। अखिल भारतीय चर्खा सघ ने खादी प्रचार के क्षेत्र मे वहुत काम किया है, अखिल भारतीय ग्रामोद्योग सघ ग्रामोद्योगो को प्रोत्साहन देता है, गो सेवा सघ गोवश की उन्नति मे दत्तचित्त है और इसी तरह अन्य सस्थाएँ अपना-अपना कार्य कर रही है। गाँधी सेवा सघ का भी ऐसा ही इतिहास है और इस सस्था ने रचनात्मक कार्य के क्षेत्र मे वहुत कार्य किया है।

यह सब सन् १९२३ के सकल्प, उत्साह और दान से स्थापित हुआ था। जैसे-जैसे देशकी परिस्थितिमे परिवर्तन होता गया वैसे-वैसे सघका विधान भी वदलता गया। परन्तु १९३४ तक वे सब परिवर्तन स्वय अध्यक्ष जमनालालजी और सघ के स्थायी ट्रस्टियोके उत्साह, दृष्टि और नीतिके अनुसार किये जाते थे।

राजनीतिक सम्बन्ध से दूर सस्थाएँ

अब तक सघ के सम्मेलन वर्धा, साँगली, हुवली, डेलाग, वृन्दावन, मलिकादा स्थानो मे हुए है। गाँधीजी सघ के कार्यो मे वरावर दिलचस्पी लेते रहे। वह सम्मेलन की चर्चाओ मे भाग लेते रहे। गाँधीजी का कहना था —"राजनीति मे प्रत्यक्ष भाग लेने वाले सघ मे न रहे। हम यह कब कहते है कि वे राजनीति छोड दे।"

सेवा संघ का उद्देश्य

महात्मा गाँधी के सिखाये हुए सत्यागह के सिद्धान्तो के अनुसार जनता की सेवा करना इस सस्था का उद्देश्य है। "महात्मा गाँधी के सिखाये हुए सत्याग्रह के सिद्धान्त" इन शब्दो के मानी है सत्य की अनन्त और विनम्र खोज और उसकी सिद्धि के लिए निम्नलिखित तथा तत्समान दूसरे साधनो का मनसा, वाचा, कर्मणा उत्तरोत्तर प्रगतिशील अभ्यास। अहिंसा (जिसमे प्रेम अन्तर्भूत है), ब्रह्मचर्य (जिसमे सभी इन्द्रियो का सयम अन्तर्भूत है), अपरिग्रह, अस्तेय, अभय, अस्वाद, शरीरश्रम, स्वदेशी धर्म, अस्पृश्यता-निवारण, सर्वधर्म समभाव और अधर्म प्रतिकार आदि। इस उद्देश्य सिद्धि के लिए सघ की तात्कालिक प्रवृत्तियो मे नीचे लिखे कामो का समावेश है —

खादी-प्रचार, ग्रामसेवा, राष्ट्रीय शिक्षा, राष्ट्रभाषा प्रचार, मद्य और मादक पदार्थ प्रतिबन्ध, हरिजन सेवा, कौमी एकता, स्त्री-जाति-सुधार, सकट निवारण, गो सेवा व गाँधी साहित्य प्रचार ।

गाँधी सेवा सघ ने सन् १९३४ से १९४० तक बहुत काम किया और बाद मे १९४० में उसका कार्य एक कार्यवाहक समिति बनाकर स्थगित कर दिया गया । सघ ने अपने जीवनकाल मे जो कुछ जागृति देश मे की है इस सम्बन्ध मे अगर विस्तृत रूप से लिखा जाय तो हजारो पत्रो की किताब हो सकती है । वहाँ रहने मे कोई तो सेवा नही होती बल्कि जहर ही जहर फैलता है, तो उन्हे वहाँ मे हट जाना होगा ।"

प्रवृतियाँ स्थगित

फरवरी सन ४०में मलिकादा सम्मेलनमे स्वीकृत एक प्रस्तावमे बताया गया था कि सघ की सदा यह मान्यता रही है कि हिन्दुस्तान के करोटो लोगो की उन्नति रचनात्मक कार्य से ही हो सकती है । रचनात्मक कार्य ही एक ऐसा कार्य है, जिसमें जनता सीधे हिस्सा ले सकती है , इसलिए भविष्य में सघ की प्रवृत्ति रचनात्मक कार्य तक ही सीमित रहेगी । सघ की यह भी राय है कि रचनात्मक कार्य के उस हिस्से का, जो कि चर्खा-सघ आदि रचनात्मक क्षेत्र से परे है, भली-भाति अध्ययन और शोध के पर्याप्त साधन प्राप्त न हो जायें, तब तक सघ के आर्थिक व्यवहार और 'सर्वोदय' मासिक के अलावा गांधी सेवा सघ की सारी प्रवृत्तियाँ स्थगित की जायें ।

भीतरी उद्देश्य

गाँधी सेवा सघ राजनैतिक सस्था नही है । पर वह राजनीति से परहेज भी नही करता, बल्कि अहिंसा की नीव पर राज्य की रचना करना और अहिंसात्मक सस्कृति का निर्माण करना, उसका भीतरी उद्देश्य है । जब गाँधी सेवा सघ की स्थापना हुई थी तो कांग्रेस के रचनात्मक कामो के करने के लिए चर्खा सघ, ग्रामोद्योग सघ, हरिजन सेवक सघ, तालीमी सघ आदि खास सस्थाएँ न थी । इन्हे अहिंसात्मक सस्कृति की अलग-अलग शाखाएँ कह सकते है । हरेक शाखा अब एक स्वतत्र और अपने काम मे पूरी सस्था बन गई है । फिर भी गाँधी सेवा सघ

का अपना एक विशेष महत्त्व है । राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू ने सघ की चर्चा करते हुए अपनी आत्मकथा में लिखा है —

"इस सघ का उद्देश्य कभी कोई राजनीतिक दल तैयार करने का नही था । इसने कभी ऐसा किया भी नही । कभी इस सघ की ओर से किसी ने किसी चुनाव मे भाग नही लिया, चाहे वह काग्रेस का हो या म्यूनिसिपल कमेटी या डिस्ट्रिक्ट बोर्ड का, असेम्बली या कौंसिल का, अधिकाश तो इन सभी सस्थाओ से अपने को अलग रखते थे । वे किसी चुनाव से सम्बन्ध नही रखते थे । अगर कही कोई चुनाव मे आता भी तो व्यक्तिगत रूप से, अपनी सेवा के बल पर, न कि सघ की सदस्यता से लाभ उठा कर ।

—.o —

९

अमर-शहीद लिंकन और बापू

हाय हाय ! कैसे हम झेलें, अपनी करनी उनका शोक ।
खोया हमने ही तो देखो, अपना राष्ट्र पिता परलोक ।।

महात्मा गाँधी की हत्या जिस प्रकार हुई है उस प्रकार ससार के अन्य और बहुत से नेताओ की भी हुई है, परन्तु उन सबसे अधिक याद हमें अमरीका के छठे प्रेसीडेण्ट महामना अब्राहम लिकन की आती है । इसका कारण केवल इतना ही नही है कि महात्मा गाँधी के गोली से मारे जाने और उनके भी गोली से मारे जाने में बहुत साम्य है अपितु इससे भी अधिक उनके स्वभाव की और कुछ आदर्शो की भी समानता है ।

स्वभाव और आदर्शों की बाह्य अभिव्यक्ति में जो भी अन्तर हो, उनके मूल दीन-बन्धुत्व, सत्य प्रेम और सत्साहस में बहुत कुछ साम्य था । महात्मा गाँधी एक नैष्ठिक अहिंसाव्रती थे, महामना लिकन ने शस्त्र प्रयोग का आश्रय लिया, शिकार भी खेला, परन्तु उनकी स्वभावगत 'अहिंसा वृत्ति' के विषय मे सन्देह नही हो सकता । उनकी सत्य और न्यायप्रियता की अभिव्यजक बातो की उनके जीवन चरित्र मे प्रचुरता है । सामान्यत वकील के व्यवसाय को जनता झूठो का व्यवसाय मानती है और जैसा जनता का अनुभव है, अपनी इस धारणा मे वह किसी के प्रति अन्याय की दोषी नही है । परन्तु अब्राहम लिकन ने महात्मा गाँधी की ही तरह अपनी वकालत मे सत्य को ही प्रश्रय दिया, झूठ पक्ष की वकालत करने से वे इन्कार कर दिया करते थे । यहाँ तक कि मुकदमे के बीच मे भी यदि उन्हें यह मालूम हो गया कि जिसकी वे वकालत कर रहे है वह वास्तव में गुनहगार है, तो वे उसकी वकालत करना छोड देते थे । एक मामले में वकालत करते हुए उन्हें मालूम हुआ कि जिसकी वे वकालत कर रहे है वह वास्तव में गुनहगार

हुँ तो उन्होंने अपने एक सहयोगी वकील से कहा—"भाई अपनी अपील तो वास्तव में गुनहगार मालूम होती है।" वे वकील साहब इनके मुँह की ओर देखते रह गए और बोले "हाँ है तो, मगर इनसे क्या . !" लिंकन महोदय ने अपनी किताबें समेटी और बोले "आप किए जाएँ मुझसे तो न होगा" और चले गये। यह सोचने की बात है कि ऐसी परिस्थिति में गांधीजी ने क्या किया होता, निश्चय है कि वे लिंकन से आगे बढ़ते और अपराधी को अपराध स्वीकार करने को कहते, यदि वह ऐसा न करता तो वे क्या करते इसका उत्तर तो ठीक-ठीक तो शायद महात्माजी दे सकते।

अब्राहम लिंकन का जन्म १२ फरवरी सन् १८०९ में एक बहुत मामूली परिवार में हुआ था। उनके जीवन चरित्र का शीर्षक लकड़ी की कुटियासे श्वेत-प्रासाद तक ठीक ही रखा गया है। जंगल में प्रथम बसाहत बसाने वालों में से उनके परिवार का और उनको शिक्षा की सुविधा थी ही नहीं। स्कूल आदि की सुविधाओं से वे अपने बाल्यकाल में वंचित रहे, उन्होंने जो कुछ पढ़ा लिखा वह अक्षरश: स्वार्जित ही था। परन्तु फिर भी उन्होंने अपने अभिनिवेश और परिश्रम से इतनी प्रगति की कि वे एक महान् वक्ता हो गए और एक महान् संकटमें उन्होंने अपने देश का कुशल और सफल नेतृत्व किया और उसे संकट से बचाया।

लिंकन ने लकड़हारा, मल्लाह, सहायक सर्वेयर, ग्राम के पोस्ट मास्टर आदि का काम किया। इन्ही कामों को करते हुए उन्होंने अपना अध्ययन जारी रखा। कानून का अध्ययन करके उन्होंने १८३६ में वकालत शुरू की। थोड़े ही समय में वे एक विख्यात वकील हो गए। कम फीस, झूठे मामले लेने से इन्कार, झूठी मुकद्दमेबाजी से सच्चे को बचाने का प्रयत्न और फिर सर्वोपरि शुद्ध स्वर्ण के समान चारित्र्य इन सब के प्रभाव से वे बहुत ही अधिक जनप्रिय हो गये। वकालत के साथ वे राजनीति में भी सक्रियता से भाग लेने लगे। १८५६ में रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना हुई, वे उसके सदस्य हुए और उन्होंने बहुत से ओजस्वी भाषण दिए और गुलाम-प्रथा के विरुद्ध जोरदार आन्दोलन चलाया। १८६० में रिपब्लिकन पार्टी ने आपको अमरीका के अध्यक्ष पद के लिए उम्मीद-वार चुना। डेमोक्रेटिक पार्टी ने उनका विरोध किया परन्तु वे भारी बहुमत से चुने गए और १८६१ में आपने प्रेसीडेण्ट का पद ग्रहण किया।

लिंकन का प्रेसीडेण्ट होना दक्षिणी राज्यो को अच्छा नही लगा। इसलिए वे सघ से अपना सम्बन्ध तोडने लगे। आर्थिक कारणो से कुछ दिनो वे उत्तरी और दक्षिणी राज्यो मे अनवन चली आ रही थी। उत्तर धन और जनसख्या में अधिक समृद्ध था, उसके पास अधिक रेलें थी, वह एक औद्योगिक क्षेत्र था, अतएव उनको गुलामो के श्रम की कोई आवश्यकता नही थी। परन्तु दक्षिण मे तो सारा खेत का काम गुलामो के द्वारा ही होता था और उनके लिए गुलामो को अफ्रीका से लाया जाता था। १८६१ में उनकी सख्या ४०००००० थी। गुलामो के प्रति निर्दयता और दुर्व्यवहार का तो कहना ही क्या है।

लिंकन के प्रेसीडेण्ट होने पर दक्षिणी राज्य इस आशङ्का से कि उत्तर के लोग गुलाम-प्रथा वन्द कर देंगे, सघ में से अलग होने लगे। एक दर्जन राज्यो ने श्री जेफरसन डेविड की अध्यक्षता में एक नया सघ वना लिया। सघ-भग की कठिन परिस्थिति और परिणामत गृह-युद्ध की समस्या सामने आई। गृह-युद्ध वचाने के लिये आपने वहुत प्रयत्न किया, यहाँ तक कि दक्षिण में गुलामो को रहने देने पर भी आप समझौता करने को उद्यत थे परन्तु १८६१ मे गृह-युद्ध छिड ही गया। यह चार साल तक चला इस वीच मे लिंकन ने गुलाम-प्रथा को समाप्त करने का विल कांग्रेस मे पेश कर दिया। गृह-युद्ध में पहले तो विजय दक्षिण की ही हुई परन्तु वाद में दक्षिण थक गया और परास्त हो गया। गृह-युद्ध मे विजय लिंकन के साहस और ठडी दिमागी दृढता का ही काम था। उनका उद्देश्य केवल दक्षिण को परास्त करना नही था वल्कि उसे इस प्रकार जीत लेना था जिसमे दक्षिण के दिल मे किसी प्रकार का वैर या वैमनस्य न रहे और वे स्वेच्छा से सघ में शामिल हो। परन्तु विजय के कुछ ही दिन वाद जव वे अपने परिवार और मित्रो के साथ नाटक देख रहे थे थियेटर हाल मे उनकी हत्या हो गई। अब्राहम लिंकन के चारित्र्य और आदर्शो को उनके निकट मित्र श्री जानमी निकोले ने वडी अच्छी तरह इन शब्दो में रखा है—

'मानव अधिकारो की सार्वदेशीय समानता को वे मानते थे। स्वशासन मे उनका स्थिर विश्वास था। गौण वातो में समझौता करने को तैयार रहते हुए भी सिद्धान्त के मामले मे और जानवूझ कर स्वीकार की गई स्थिति मे वे विल्कुल दृढ रहते थे। उनका कहना था हमें यह विश्वास रखना चाहिए कि

१०

बापू की अमर-वाणी

सत्पुरुषों के सत्य सन्देशे, सत्य जीवन के यह समान।
तन-मन से जो पालन करते, उनका निशिदिन है कल्यान ॥

'प्रार्थना आरम्भ करने के पश्चात् मैं रुकने वाला नही हूँ, चाहे कत्ल ही क्यो न हो जाऊँ। और उस समय भी आप देखेंगे कि मेरी आखिरी साँस छूटती होगी तव भी मेरे मुह से 'राम-रहीम', 'कृष्ण-करीम' का जाप चलता होगा।'

※ ※ ※

'मरने का ज्ञान मै जीवन भर सिखाता आया हूँ और सीख रहा हूँ। मरना हो तो इस प्रकार क्रोध मे नही मरना चाहिए। ठण्डी शक्ति से मरना चाहिए। पर इस समय ये लोग गलत फहमी मे है। वे समझते है कि गाधी ही सव कुछ विगाडता फिरता है इसलिए इस समय शान्ति की ही मेरी प्रार्थना समझिये। मै जानता हूँ कि पजाव के कारण सव का खून उवल रहा है। क्या मेरा खून नही उवल रहा है? मेरे दिल मे तो आग धधक रही है। मै पजाव की समस्या सही-सही समझता हूँ। पजावी सव मेरे भाई है। वे इस समय क्रोध मे है। उन्हे शान्त होना चाहिए। विहार भी क्रोध मे भर गया था। उनका क्रोध मैने रोका है। इस समय क्रोध को रोक कर ही हम आगे वढ सकते है।'

※ ※ ※

'मै कोई कारण नही देखता कि मै कलमा को नही पढ सकता और मुहम्मद को रसूल यानी अपना पैगम्बर क्यो नही मान सकता। मै तो प्रत्येक धर्म के पैगम्बर और सन्तो मे विश्वास रखने वाला हूँ। मै ईश्वर से प्रार्थना करूँगा कि मुझ पर इल्जाम लगाने वालो पर मुझे क्रोध न आये। इतना ही नही वल्कि मै अपने हाथो मरने को तैयार रहूँ, और मेरा विश्वास है कि यदि मै अपने विश्वास

अपमानजनक स्थिति की कल्पना ही नही कर सकता कि वह अपनी और अपने कुटुम्बियो की सुरक्षा के लिये उन्ही का मुहताज रहे जिन्हें वह अपना भक्षक समझता है। अपने पौरुष के वदले सुरक्षा खरीदने की वजाय मैं यह अधिक पसन्द करूँगा कि मैं स्वय और मेरा सर्वस्व विल्कुल नष्ट हो जाय।

—यग इण्डिया, मई और दिसम्वर १६२१

अहिंसा—

मेरा यह विश्वास गहरा होता जाता है कि ब्रिटिश सरकार की सगठित हिंसा को शुद्ध अहिंसा के सिवा और कोई शक्ति नही रोक सकती। कई लोगो का यह विचार है कि अहिंसा एक क्रियाशील शक्ति नही है। मेरे अनुभव ने वेशक वह अनुभव परिमित है—यह प्रमाणित कर दिया है कि वह एक उत्कट क्रियाशील शक्ति हो सकती है वार वार चेतावनी देने के पश्चात् भी यदि लोग हिंसा का अवलम्वन करे तो उस जिम्मेवारी के अतिरिक्त, जो प्रत्येक मनुष्य पर दूसरे सभी मनुष्यो के कृत्यो के लिये आ ही पडती है, अधिक जिम्मेवारी मैं नही स्वीकार करूँगा। पर जिम्मेवारी का प्रश्न छोड दिया जाय तो भी यदि अहिंसा वह शक्ति है जिसका दावा ससार के ऋषियो ने किया है और यदि मुझे उसके प्रयोग के अपने व्यापक अनुभव को मिथ्या सिद्ध नही करना है तो अव मैं किसी भी कारण से आन्दोलन स्थगित नही कर सकता।

—लार्ड इर्विन को पत्र १६३०

साहित्य—

चित्रो द्वारा भी साहित्य निर्माण हो सकता है चित्रो को तो मुझसे वातें करनी चाहिये, मेरे सामने नाच उठना चाहिये कला को जीभ की आवश्यकता नही होती जव मैं सेवाग्राम का और वहाँ के अस्थिपजर लोगो का ख्याल करता हूँ तो मुझे आप का साहित्य निरर्थक सा मालूम होता है।

जिसका दिमाग ताजगी से भरा है वह यदि मेरे पास आये तो मैं उसे दिखा दूंगा कि मौलिकता के लिये शहर का क्षेत्र अच्छा नही, वह तो उसे गाँवो मे ही मिलेगी स्त्रियां साहित्यकार मे पूछती है—आपने स्त्री का सौन्दर्य कहाँ देखा है? उसकी देह की सुन्दरता से आप का क्या सम्वन्ध है? कभी आप ने माता का और पत्नी क सौन्दर्य निहारन का कष्ट किया है? मेरे मर जाने के पश्चात्

परमेश्वर—

परमेश्वर का साक्षात्कार करना ही जीवन का एकमात्र उचित ध्येय है, जीवन के अन्य सब कार्य यह ध्येय सिद्ध करने के लिए होना चाहिए, परमेश्वर का स्वरूप मन और वाणी से परे है, उसके विषय में हम इतना ही कह सकते है कि परमेश्वर अनन्त, अनादि सदा एक रूप रहने वाला विश्व का आत्मा रूप अथवा आधार रूप और विश्व का कारण है। वह चैतन्य अथवा ज्ञान स्वरूप है, एकमात्र उसका सनातन अस्तित्व है। शेष सब नाशवान् है, अतः एक छोटे से शब्द से समझने के लिए हम उसे सत्य कह सकते है इस प्रकार परमेश्वर ही सत्य है और सत्य परमेश्वर है, यह ज्ञान सत्य रूपी परमेश्वर की निर्गुण भावना है, जो कुछ मुझे ऐसा धर्म, न्याय और योग्य प्रतीत है उसे स्वीकार करते या प्रकट करते मुझे शर्म नहीं लगती, जो मुझे करना ही चाहिए और जिसे न करूँ तो इज्जत के साथ जी ही न सकूं, यह मेरे लिए सत्य है, यह मेरे लिए परमेश्वर का सगुण रूप है, सत्य की अविश्रात खोज किये जाना तथा जैसा और जितना सत्य जान पड़ा हो उसका लगन के साथ आचरण करना इस का नाम सत्याग्रह है और यह परमेश्वर के साक्षात्कार का साधन मार्ग है। सत्य अनन्त और विश्व अपार होने के कारण इस खोज का कभी अन्त नहीं आता, यों देखने पर जान पड़ता है कि परमेश्वर का सम्पूर्ण साक्षात्कार होने वाली बात

नोआखाली मे दुखियो की विपद-गाथा सुनते हुये बापू ।

विहार मे दगे का निरीक्षण करते हुये अपने साथियो
के साथ बापू ।

नहीं है । साधक को चाहिये कि इससे उलझन मे न पडे और न इस अपार को चाहे जहाँ बिलोने बैठ जाय बल्कि उसे अपने जीवन मे बडी या छोटी महत्वपूर्ण या तुच्छ सी दिखाई देने वाली प्रवृत्तिया अथवा क्रियाएँ करनी पडती है, उन्ही मे वह सत्य को ढूंढे और उसके प्रयोग करे तो 'यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे' न्याय से उसे सत्य मिल जायगा ।

सत्य—सत्य अर्थात् परमेश्वर—यह सत्य का अथवा उच्च अर्थ है अपार अथवा साधारण अर्थ मे सत्य के माने है सत्य आग्रह, सत्य विचार, सत्य वाणी और सत्य कर्म, जिन सत्य और सनातन नियमो द्वारा विश्व अपना जीवन बनाने का जड चेतन विधान चलता है, उनकी अविश्रात खोज करते तथा उनके अनुसार रहना और असत्य का सत्यादि साधनो द्वारा प्रतिकार करना युक्त वुद्धि की सेवा सत्याग्रह हैं, जो विचार हमारी राग-देव रहित निष्पक्ष तथा श्रद्धा और भक्ति सदा के लिये या जिन परिस्थितियो को हमारी दृष्टि देख सकती हैं उनमे जितने लम्बे समय के लिए सम्भव हो, उचित और न्याय प्रतीत हो वह हमारे लिए सत्य विचार है, जो वाणी तथ्य को जैसा वह जानती है ठीक वैसा ही कर्तव्य होने पर सामने रखती है और उसमे ऐसी कमी-वेशी करने का यत्न नही करती जिससे दूसरा अर्थ भासित हो वह सत्य वाणी है, विचार से जो सत्य जान पडे उस के सविवेक आचरण का नाम सत्य कर्म है, पर सत्य जो परमेश्वर हैं अपार सत्य उसे जानने का साधन है, यह कहिए अथवा सत्य आग्रह, सत्य विचार, सत्य वाणी और सत्य कर्म की अर्थात् अपार के सत्य के पालन की, पूर्ण सिद्धि ही परमेश्वर का साक्षात्कार है । यह कहिए साधक के लिए दोनो में कोई भेद नही है ।

अहिंसा—साधारणत लोग सत्य वाणी, सत्य वादिता, सच बोलना इतना ही स्थूल अर्थ लेते है, परन्तु सत्य वाणी मे सत्य के पालन का पूरा समावेश नही होता । ऐसे ही सामान्यत लोग दूसरे जीव को न मारना, इतना ही अहिंसा का स्थूल अर्थ करते है पर केवल जान ही न लेने से अहिंसा पूरी नही होती, अहिंसा आचरण का स्थूल नियम मात्र नही, बल्कि मन की वृत्ति है, जिस वृत्ति मे कही रीष की गन्ध तक न हो वह अहिंसा है, ऐसी अहिंसा सत्य के बराबर ही व्यापक है । इस अहिंसा की सिद्धि हुए बिना सत्य की सिद्धि होना अशक्य है, इसलिये सत्य को भिन्न-भिन्न रीति से देखे तो वह अहिंसा की पराकाष्ठा ही है । सत्य

और पूर्ण अहिंसा में भेद नहीं है फिर भी समझने के सुभीते के लिये सत्य साध्य और अहिंसा साधन मान ली गई है। ये सत्य और अहिंसा सिक्के के दो पीठों की भाँति एक ही सनातन वस्तु के दो पहलुओंके समान हैं। अनेक धर्मोंमें जो ईश्वर प्रेम स्वरूप है यह कहा गया है कि वह प्रेम और यह अहिंसा भिन्न नहीं, प्रेम का शुद्ध व्यापक स्वरूप अहिंसा है। पर जिस प्रेममें राग या मोह की गन्ध आती है, वह अहिंसा नहीं हो सकती, जहाँ राग मोह होता है वहाँ द्वेष का बीज भी होगा ही। प्रेममें बहुधा राग-द्वेष पाये जाते हैं, इसलिए तत्वज्ञों ने प्रेम शब्द का प्रयोग न कर अहिंसा शब्द लिया और उसे परम धर्म बतलाया। दूसरे के शरीर या मन को दुःख या पीड़ा न पहुँचाना इतना ही अहिंसा धर्म नहीं है। हाँ साधारणतः इसे अहिंसा धर्मका बाह्य लक्षण कह सकते हैं। दूसरों के शरीर या मन को स्थूल दृष्टि से दुःख या क्लेश पहुँचता जान पड़ता हो तो भी उसमें शुद्ध अहिंसा धर्म का पालन होता है, यह सम्भव है। दूसरी ओर यह हो सकता है इस प्रकार दुःख या पीड़ा पहुँचाने का दोष लगाने लायक कुछ न करने पर भी किसी आदमी ने हिंसा की हो। अहिंसा का भाव दिखाई देने वाले परिणाम में ही नहीं है बल्कि अन्तःकरण ही राग-द्वेष रहित स्थिति में है, जहाँ स्वार्थ का लेशमात्र भी है वहाँ पूर्ण अहिंसा सम्भव नहीं, अहिंसा का साधक केवल प्राणियों को उद्वेग पहुँचाने वाली वाणी न बोल कर और कर्म न करके अथवा मन में भी उनके प्रति द्वेष-भाव न आने देकर सन्तोष नहीं मानता बल्कि वह जगतमें फैले हुए दुःखों को देखने समझने और उनके उपाय ढूंढने का प्रयत्न करता रहेगा और दूसरों के सुख के लिए स्वयं प्रसन्नतापूर्वक कष्ट सहेगा। अर्थात् अहिंसा केवल निवृत्ति रूप कर्म या अक्रिया नहीं है बल्कि बलवान प्रवृत्ति या प्रक्रिया है!

आत्मदर्शन ही इष्ट—जो बात मुझे करनी है, आज ३० साल से जिसके लिए उद्योग कर रहा हूँ वह तो है आत्मदर्शन ईश्वर का साक्षात्कार, मोक्ष। मेरे जीवन की प्रत्येक क्रिया इसी दृष्टि से होती है। मैं जो कुछ लिखता हूँ वह भी इसी उद्देश्य से और राजनैतिक क्षेत्र में जो मैं कूदा सो भी इसी बात को सामने रखकर।

मेरी महत्त्वाकांक्षा—मैं इस बात का दावा रखता हूँ कि मैं भारत माता का और मनुष्य जाति का एक नम्र सेवक हूँ और ऐसी सेवाओं के करते हुए मृत्यु

की गोद मे जाना पसन्द करूँगा, पर मुझे सम्प्रदाय स्थापित करने की कोई इच्छा नही है । सच पूछिये तो मेरी महत्त्वाकाक्षा इतनी विशाल है कि कुछ अनुयायियो के कोई समुदाय स्थापित करने से तृप्त नही हो सकती । मैने किसी नये सत्य का आविष्कार नही किया है बल्कि सत्य को जैसा मै जानता हूँ उसी के अनुसार चलने का और लोगो को बताने का प्रयत्न करता हूँ, हाँ प्राचीन सत्य सिद्धान्त पर नया प्रकाश डालने का दावा मै अवश्य करता हूँ ।

मै क्या हूँ—मै तो एक विनम्र सत्यशोधक हूँ, मै अधीर हूँ । इसी जन्म मे आत्म साक्षात्कार कर लेना, मोक्ष प्राप्त कर लेना चाहता हूँ । मै अपने देश की जो सेवा कर रहा हूँ वह तो मेरी उस साधना का एक अग है जिसके द्वारा मै इस भौतिक शरीर से अपनी आत्मा की मुक्ति चाहता हूँ, इस दृष्टि से मेरी देश-सेवा केवल एक स्वार्थ साधना है, मुझे इस नाशवान ऐहिक राज्य की कोई अभिलाषा नही, मै तो ईश्वरीय राज्य पाने का प्रयत्न कर रहा हूँ । वह है मोक्ष ! अपनी इस ध्येय की सिद्धि के लिए मुझे गुफा की कोई आवश्यकता नही । यदि मै समझ पाऊँ तो एक गुफा तो मै अपने साथ लिए फिरता हूँ । गुफानिवासी तो मन में महल को भी खडा कर सकता है, पर जनक जैसे महल में रहने वालो को महल बनाने की जरूरत ही नही रहती, जो गुफावासी विचारो के परो पर बैठ कर दुनियाँ के चारो ओर मँडराता है उसे शान्ति कहाँ ? परन्तु जनक राजमहलो मे आमोद-प्रमोदमय जीवन व्यतीत करते हुए कल्पनातीत शान्ति,प्राप्ति कर सकते हैं, मेरे लिए तो मुक्ति का मार्ग है अपने देशके और उसके द्वारा मनुष्य जाति की सेवा करने के लिए सतत परिश्रम करना । मै ससारके भूत मात्र से अपना तादात्म्य कर लेना चाहता हूँ । इस प्रकार मेरी देश भक्ति और कुछ नही, अपनी चिरमुक्ति और शान्ति के देश की मजिल का एक विश्राम स्थान है, मेरे नजदीक धर्म शून्य राजनीति कोई वस्तु नही । राजनीति धर्म की अनुचरी है, धर्महीन राजनीति को एक फाँसी ही समझिये । वह अत्याचार का नाश कर देती है ।

मेरा धर्म—मेरा धर्म तो मेरे सिरजनहार के बीच की बात है, यदि मै हिन्दू हूँगा तो सारे हिन्दू जगत को छोड देने पर भी मेरा हिन्दूपन मिट नही सकता । **मेरी चेष्टा**—मै दरिद्र से दरिद्र हिन्दुस्तानी जीवन के साथ अपने जीवन को मिला देना चाहता हूँ, । मै जानता हूँ कि दूसरे उपायो से मुझे ईश्वर के दर्शन हो नही सकते, मुझे उसे प्रत्यक्ष देखना है, इसके लिये मै अधीर हो उठा हूँ, जब तक

मैं गरीब से गरीब न बन सकूं तब तक साक्षात्कार हो ही नहीं सकता ! मेरा क्षेत्र—मेरा क्षेत्र निश्चित हो गया है, वह मुझे प्रिय भी है, मैं अहिंसा के मन्त्र पर मुग्ध हो गया हूँ, मेरे लिए वह पारस मणी है, मैं जानता हूँ कि दुःखी भारत को अहिंसा का ही मन्त्र शान्ति दिला सकता है । मेरी दृष्टि में अहिंसा का मार्ग कायर या नामर्द का मार्ग नहीं है । अहिंसा क्षत्रिय धर्म की परिसीमा है क्योंकि उसमें अभय की सोलह कलाएँ सोलह आने खिल पड़ती हैं । अहिंसा धर्म के पालन में पलायन या पराजय के लिये स्थान ही नहीं है । यह आत्मा का धर्म है, धर्म दुराग्रह नहीं । जो समझता है उसमें सहज ही स्फुरित होता है । मैं घृणा कर ही नहीं सकता—मैंने अनेक बार यह देखने की चेष्टा की है कि मैं अपने शत्रु से घृणा कर सकता हूँ या नहीं, यह देखने को नहीं कि प्रेम कर सकता हूँ या नहीं और मुझे ईमानदारी के साथ परन्तु पूरी नम्रता से कहना चाहिए कि मालूम हुआ कि मैं उनसे घृणा नहीं कर सकता हूँ । मुझे याद नहीं आता कि कभी किसी भी मनुष्य के प्रति मेरे मन में तिरस्कार उत्पन्न हुआ हो, मैं नहीं समझ सकता कि यह स्थिति मुझे कैसे प्राप्त हुई है, पर आप से यह कह सकता हूँ कि जीवन भर मैं इसी का आचरण करता आया हूँ । मेरे नाम का दुरुपयोग—मेरे नाम के दुरुपयोग की कहानी लम्बी है, मेरे नाम पर मनुष्यों का वध हुआ है, मेरे नाम पर असत्यका प्रचार हुआ है, मेरे नामका दुरुपयोग चुनावों के समय पर किया गया है, मेरे नाम पर बीड़िया बेची जाती है, जिनका कि मैं शत्रु हूँ, मेरे नाम पर दवाइयां बेची जाती हैं, एक अंग्रेज लेखक ने कहा है जहाँ मूर्खों अज्ञानियों की सख्या अधिक है वहाँ धूर्त, धोखेबाज, भूखो नहीं मरते । इस सत्य का किसे अनुभव न होगा, मैं पुकार पुकार कर कह चुका हूँ कि मेरे नाम के उपयोग से कोई धोखे में न आवे हर चीज के गुण-दोष का विचार स्वतन्त्रता पूर्वक रखे । ईश्वर की साक्षी—छाती पर हाथ रखकर मैं कह सकता हूँ कि एक मिनट के लिये भी भगवान् को नहीं भूलता, गत बीस वर्षों से सब काम मैंने उसी प्रकार किए हैं मानो साक्षात् ईश्वर मेरे सामने खड़े हो । मेरा सहारा—मेरा दावा है कि मेरा एक मात्र सहारा भक्ति और प्रार्थना है और यदि मेरे शरीर के टुकड़े-टुकड़े भी कर दिये जायें तो भी परमात्मा मुझे वह शक्ति देंगे कि मैं उन्हें इन्कार न करूँगा यही जोरो से कहूँगा कि वे हैं ।

प्रयत्नशील क्षुद्र जीव—विचार, उच्चार और आकार मे सर्वथा शुद्ध सत्य-

निष्ठ और अहिसक वनन को तडपने वाला मै केवल एक क्षुद्र जीव हूँ । मै उस
आदेश को सत्य मानता हूँ किन्तु यहाँ तक पहुँचने मे निरन्तर असफल रहा हूँ ।
अणुवम और अहिसा—पिछले कुछ वर्षो से ससार मे उल्कापात हो चुके
है, सत्य और अहिसा पर अव भी मेरी श्रद्धा वैसी ही वनी हुई है, क्या अणु वम
ने मेरी श्रद्धा को चूर-चूर नही कर डाला,नही, जरा भी नही, उल्टे उसकी वजहसे
विश्वास दृढ हुआ है कि ससार मे सत्य और अहिसा से वढ कर कोई शक्ति नही,
उनके मुकावले अणुवम कोई वस्तु नही, एक मे आत्मा की अक्षय शक्ति मौजूद है,
जव कि दूसरी स्वभाव से ही नाशवान् है । **ईश्वर ने मुझे क्यो चुना**—अपनी
त्रुटियो को मै तटस्थ होकर देखता हूँ क्योकि मुझ में अनासक्ति है । जैसे मै अपनी
सफलता और शक्ति परमात्मा की ही देन समझता हूँ, उसी को आप ही करता हूँ,
वैसे ही अपने दोप भगवान् के चरणो मे रखता हूँ । ईश्वर ने मुझ जैसे अपूर्ण
मनुष्य को इतने वडे प्रयोग के लिये क्यो चुना, मै अहकार से नही रहता लेकिन
मुझे विश्वास है कि परमात्मा को गरीवो से कुछ काम लेना था, इसलिए उसने
मुझे चुन लिया । मुझसे अधिक पूर्णपुरुष होता तो शायद इतना काम न कर
सकता, पूर्णपुरुप को भारत शायद पहिचान भी न सकता । वह वेचारा विरक्त
होकर गुफा मे चला जाता इसलिये ईश्वर ने मुझ जैसे अशक्त और अपूर्ण व्यक्ति
को ही इस देश के उपयुक्त समझा । अव मेरे वाद जो आयेगा वह पूर्ण पुरुष होगा ।
सच्ची अहिसा—अहिसा डरपोक आदमी का शस्त्र नही, वह तो परम पुरुपार्थ
है, वीरो का धर्म है। सत्याग्रही वनना है तो आप का अज्ञान, आलस्य सव दूर हो
जाना चाहिये, सतत जागृति आप लोगो मे आनी चाहिए, तव अहिसा चल सकती
है । सच्ची अहिसा आने के वाद आपकी वाणी से, आप के आचार से, व्यवहार
मे अमृत झरने लगेगा । **मेरा अविभाज्य अग**—मेरा महान् उच्चार है,
यह तो मुझे वाह्य प्रकृति के मेरे राजनैतिक कार्य के कारण प्राप्त है, वह क्षणिक है,
मेरा सत्य का, अहिसा का और ब्रह्मचर्यादि का आग्रह ही मेरा अविभाज्य और
सवसे मूल्यवान् अग है । उसमे मुझे जो ईश्वर दत्त प्राप्त हुआ है उसकी कोई भूल
करभी अवज्ञा न करे, उसमे मेरा सर्वस्व है । इसमे दिखाई देने वाली निष्कल-
कता सफलता की सीढिया है, इसलिये निष्कलकता भी मुझे प्रिय है । **ईश्वर भक्ति
और प्रार्थना**—छाती पर हाथ रख कर मै कह सकता हूँ कि एक मिनट के लिए
भी मै भगवान को भूलता नही—गत वीस वर्पो से मैने सभी काम उनी प्रकार

स्थित हूँ मानो साक्षात् ईश्वर मेरे सामने खड़े हों, मेरा दावा है कि मेरा एकमात्र सहारा भक्ति और प्रार्थना है और अगर मेरे शरीर के टुकड़े २ कर दिए जायें तो भी परमात्मा मुझे ऐसी शक्ति देंगे कि मैं उनसे इनकार न करूँगा—यही जोरों से कहूँगा कि वे हैं। हिन्दू धर्म—हिन्दू धर्म जीवित है उसमें बढ़ती और खोट आती ही रहती है। वह संसार के नियमों का अनुसरण करता है। मूल रूप में तो वह एक ही है, लेकिन वृक्ष रूप से वह विविध प्रकार का है। यदि मुझे हिन्दू धर्म का कुछ भी ज्ञान है तो वह समावेशक, व्यापक सदा वर्तमान और परिस्थिति के अनुरूप नवीन रूप धारण करने वाला है। मेरी राय में हिन्दू धर्म की खूबी उसकी सर्वव्यापकता और सर्व समाहकता है। हिन्दू वह है कि जो ईश्वर में विश्वास करता है, आत्मा की अनश्वरता, पुनर्जन्म कर्म सिद्धात और मोक्ष में विश्वास करता है। और अपने दैनिक जीवन में सत्य और अहिंसा का अभ्यास करने का प्रयत्न करता है और इसलिए अत्यन्त व्यापक अर्थ में गो-रक्षा करता है और वर्णाश्रम धर्म को समझता है और उसपर चलने का प्रयत्न करता है। हिन्दू की प्रतिज्ञा सत्य और अहिंसा पर है और इस कारण हिन्दू किसी धर्म का विरोधी हो ही नही सकता है। हिन्दू धर्म की नित्य प्रदक्षिणा होनी चाहिए कि जगत के सर्व-प्रतिष्ठित धर्मों की उन्नति हो और उसके द्वारा ससार की। मैं इस भूमि के निवा-सियो से कहता हूँ कि हिन्दू धर्म आज तराजू पर चढा हुआ है और ससार के समस्त धर्मों के साथ उसकी तुलना हो रही है। जो बात बुद्धि के बाहर होगी उसका समा-वेश यदि हिन्दू धर्म में हुआ तो उसका नाश निश्चित समझना। गीता—गीता मेरे लिये शाश्वत मार्गदर्शिता है। अपने हर कार्य के लिये मैं गीता मे से आधार खोजता हूँ और यदि नही मिलता है तो उस कार्य को करते हुए रुक जाता हूँ, या अनिश्चित रहता हूँ। मेरे लिये तो गीता ही ससार के सर्वधर्म ग्रथो की कुजी है। ससार के सब धर्म ग्रन्थो मे गहरे से गहरे रहस्य भरे हुए है, उन सबको यह मेरे लिये खोल कर रख देती है। धर्म और राजनीति—मैं धर्म से भिन्न राजनीति की कल्पना नही कर सकता। वास्तव मे धर्म तो हमारे हर कार्य में व्यापक होना चाहिए। यहा धर्म का अर्थ कट्टर पथ से नही है। उसका अर्थ है, विश्व की एक नैतिक सुव्यवस्था मे श्रद्धा। चर्खा और खादी—चर्खा तो लगड़े की लाठी है, भूखे को दाना देने का साधन है, निर्धन स्त्रियो के सतीत्व की रक्षा करने वाला किला है। चर्खा तो हमारे लिए अहिसा का प्रतीक है। यो तो चर्खा

जड वस्तु है, उसमे शक्ति सकल्प से आती है। हम उसकी साधना करे। मिट्टी मे क्या पडा है, पर कोई भक्त मिट्टी की एक गोली बनाता है और सकल्प करता है कि उसमे भगवान् शकर बैठा है तो वह मिट्टी कामधेनु बन जाती है। मिट्टी मे शकर नही है, श्रद्धा ही शकर है। स्वराज्य के समान ही खादी भी राष्ट्रीय जीवन के लिये श्वास जितनी आवश्यक है, जिस तरह स्वराज्य को हम छोड नही सकते उसी तरह हम खादी को भी नही छोड सकते। खादी को छोडने के मानी होगे, भारतीय जनता को बेच देना, भारतवर्ष की आत्मा को बेच देना! **हिन्दू-मुस्लिम एकता**—हिन्दू-मुस्लिम मित्रता का हेतु है, भारत के लिये और सारे ससार के लिये एक मगलमय प्रसाद होना, क्योंकि इसकी कल्पना के मूल मे शाति और भूतहित का समावेश किया गया है यदि हम मुसलमानो का दिल जीतना चाहे तो हमे तपस्या करनी होगी। हमे पवित्र बनना होगा। हमे अपने रोगो को दूर कर देना होगा। अगर वे हमारे साथ लड़े तो हमे उलट कर प्रहार न करते हुए हिम्मत के साथ मरने की विद्या सीखनी होगी। डर कर औरतो बाल-बच्चो और घर-बार को छोड कर भाग जाना और भागते हुए मर जाना मरना नही कहाता बल्कि उसके प्रहार के सामने खडे रहना और हसते २ मरना हमें सीखना होगा। हिन्दुओ का यह आशा करना कि इस्लाम धर्म और पारसी धर्म हिन्दुस्तान से निकाल दिया जा सकेगा, एक निरर्थक स्वप्न है। इसी तरह मुसलमानो का यह उम्मीद करना कि किसी दिन अकेले उनके कल्पनागत इस्लाम का राज्य सारी दुनिया मे हो जायगा, कोरा ख्वाब है। पर इस्लाम के लिये एक ही खुदा को तथा पैगम्बर की अनन्त परम्परा को मानना काफी हो तो हम सब मुसलमान है, इसी तरह हम सब हिन्दू और ईसाई भी है। सत्य किसी एक ही धर्मग्रन्थ की एकान्तिक सम्पत्ति नही है। **राम नाम**—करोडो के हृदय का अनुसधान करना और उनमे ऐक्य भाव पैदा करने के लिये एक साथ राम नाम की धुन जैसा सुन्दर और सबल साधन नही है, रामनाम के प्रताप से पत्थर तैरने लगे, राम नाम के बल से वानर सेना ने रावण के छक्के छुडा दिये। राम नाम के सहारे हनुमान ने पर्वत उठा लिया और राक्षसो के घर अनेक वर्ष रहने पर भी सीता अपना सतीत्व बचा सकी, भरत ने १४ साल तक प्रण धारण कर रक्खा क्योंकि उनके कठ मे राम नाम के सिवाय दूसरा कोई शब्द न निकलता था। इसलिये तुलसी दास ने कहा है कि कलिकाल का मल

घरों में जिस तरह राम नाम रटो, इस तरह आशा और श्रद्धा दोनों प्रकार के राम नाम उच्चारित होते हैं, परन्तु भावुक लोगों के लिये राम नाम हृदय से लेना चाहिए और ओठ, दूसरे कीर्तन करें न करें, राम नाम लेना चाहिए। मैं अपना अनुभव सुनाता हूँ। मैं संसार में यदि व्यभिचारी होने से बचा हूँ तो राम नाम की बदौलत। मैंने दावे तो बहुत किये हैं, परन्तु यदि मेरे पास राम नाम न होता तो तीन स्त्रियों को मैं बहन कहने के लायक न रहता। जब-जब मुझपर विकट प्रसंग आये हैं मैंने राम नाम लिया है और बच गया हूँ। अनेक संकटों में राम नाम ने मेरी रक्षा की है। साम्प्रदायिक वातावरण—आज तो आसमान काले बादलों से घिरा है, पर मैं यह उम्मीद करता हूँ कि यह बादल तितर-बितर हो जायेंगे और हमारे देश में साम्प्रदायिक ऐक्य जरूर पैदा होगा। यदि मुझसे कोई पूछे कि ऐसा क्यों? तो मेरा जवाब यह होगा कि मेरी आशा की बुनियाद तो श्रद्धा है और श्रद्धा को सबूत की कोई जरूरत नहीं। प्रभुदर्शन—मेरे प्रभु के पास मेरे सहस्रों रूप हैं, कभी मैं उनका दर्शन चर्खे में करता हूँ, कभी हिन्दू-मुस्लिम एकता में। मेरे मन मेरी भावना जिस ओर खींच ले जाती है तब उस ओर चला जाता हूँ, जिस तरह से कमरे में जाना चाहता हूँ, चला जाता हूँ। और वहाँ अपने प्रभु के साथ सान्निध्य कर लेता हूँ। विचार-शक्ति—हमारे विचार में असीम शक्ति है। विचार की शक्ति के विषय में जितना अधिक विचार किया जाय उसकी शक्ति उतनी ही बढ़ती है। विचार की शक्ति निश्चय के ऊपर निर्भर करती है। जिस प्रकार का निश्चय विचार के सम्बन्ध में किया जाता है। विचार उस प्रकार का हो जाता है। विचार को न देश, न काल की सीमा है। विचार एक क्षण में सारे भूमण्डल की परिक्रमा कर डालता है। विचार सभी बातों के विषय में निश्चय करता है। विचार जैसा निश्चय करता है वह वस्तु उसी प्रकार दिखाई देने लगती है। पर साधारणतः विचार अपने विषय में निश्चय नहीं करता। यदि विचार अपने विषय में निश्चय करने लग जाय तो मनुष्य इतना असहाय व्यक्ति न रहे, जितना कि वह साधारणतः रहता है। आज का विचार कल की वास्तविकता का कारण बन जाता है। विचारों का नियन्त्रण करना अपने भाग्यों पर नियन्त्रण करना है। मनुष्य का भाग्य वैसा बन जाता है जैसे उसके विचार होते हैं। विचार बीज है जो कुछ काल के बाद वृक्ष बन जाता है। कोई भी विचार अपना परिणाम हमारे मन पर छोड़ जाता है।

जब यह विचार हमारे आन्तरिक मन पर चला जाता है तो वह कुछ काल के बाद फलित होता है। यदि किसी विचार का विरोध न किया जाय तो वह अपना परिणाम उत्पन्न करता है। इस प्रकार शुभ और अशुभ विचार सभी फलित होते हैं। मनुष्य को अपने शुभ विचारो पर प्राय विश्वास नही रहता, पर अपने अशुभ विचारो पर उसे बडा विश्वास रहता है। अतएव उसके अशुभ विचार फलित होते हैं। पर उसके शुभ विचार फलित नही होते। हमारी आशाओ को विनाश करने वाला हमारा कारात्मक विचार होता है। हमारे सभी विचार आशा और भय के द्वारा सचालित होते हैं। भय से सचालित विचार आशातीत विचारो का विनाश कर डालते हैं। इस कारण मनुष्य को अपने विचारो पर नियन्त्रण ही नही। आधुनिक काल मे अणु बम की शक्ति की महत्वपूर्ण खोज की गई है। एक अणु के विस्फोट के द्वारा शहर का शहर उडाया जा सकता है पर विचार की शक्ति इससे भी अधिक है। एक ही विचार सारे मानव समाज को बदल सकता है। वह ससार में ऐसी क्रान्ति पैदा कर सकता है कि सारे ससार का रूप ही बदल जाय। भगवान् बुद्ध का विचार ही था। उसने गाँवो के विशेष लोगो को एक रूप दिया। सदियो तक यह विचार ससार के करोडो मनुष्यो के जीवन का सचालन करता रहा। लूथर, कार्ल मार्क्स, दयानन्द सरस्वती आदि क्रान्ति के द्वारा सामाजिक क्रान्ति करते रहे। जिस विचार के लिये जितना त्याग किया जाता है, वह ससार मे उतना ही अधिक फैलता है। धन के त्याग, अपने सुख के त्याग, मान के त्याग, पद के त्याग से सभी प्रकार के त्याग विचारो को बली बनाते हैं। सभी प्रकार के त्यागो का महत्व है पर सबसे बडा त्याग अहिंसा का त्याग है। जिस विचार मे जितना अधिक अपनापन रहता है वह उतना ही निर्बल होता है। ऐसे विचार का जीवन काल भी उतना ही कम रहता है। जो व्यक्ति किसी विचार का प्रचार इसलिये करता है कि उस विचार से ससार का कल्याण हो और उसका प्रचार करना उसका धर्म है। वह उस विचार को ससार में फैलाने में समर्थ होता है। सत्य का प्रचार होना चाहिये, इस सत्य को चाहे जिसने खोजा हो। सत्य का दर्शन भी उसी व्यक्ति को ही होता है जो उसके खोजने का अभिमान नही करता। जिस व्यक्ति को अपने विचारो का अधिक अभिमान होता है उसके विचार उतने ही झूठे होते हैं। ऐसे विचार लोको-

पकार नही करते । संसार का कल्याण करने वाले के ही विचार होते है । जो कोई भी व्यक्ति दूसरे लोगो मे प्रचार के हेतु निर्मित नही करता । मनुष्य का सबसे कीमती धन विचार है । विचारो का सचय करना जितना महत्व का काम है, उतना महत्व का दूसरा कोई कार्य नही । पर जो विचार हम अपने लिये सोचते है वही दूसरे लोगो को भी लाभ करता है । ससार के विद्वान् अधिकतर दूसरे लोगो में अपने विचार के प्रचार के लिये उत्सुक रहते है पर उन विचारो से स्वय लाभ उठाने की चेष्टा नही करते । वास्तव मे उन्हे इन विचारो पर विश्वास नही रहता । इस प्रकार विद्वत्ता की वृद्धि होना मनुष्य मे आम विश्वास की कमी रहती है । जो विचार स्वय विचार के प्रचारक को लाभ नही पहुँचाता वह दूसरे लोगो को कैसे लाभ पहुँचा सकता है ? निश्चयहीन विचार बिना पख के पक्षी के समान है । वह न दूसरो पर अपना प्रभाव डाल सकता है और न अपने आप की रक्षा कर सकता है । कोई भी विचार उसके प्रकाशन से परिपक्व होता है । पर जब किसी विचार को सोचने के हेतु उसका प्रकाशन ही लिया जाता है तो मनुष्य मे इनसे आत्म-प्रकाशन हो कर अन्धकार की वृद्धि होती है । इसलिए ही महात्मा कबीर ने कहा है—पडित और मसालची इनकी उल्टी रीत, औरन को करे चादनी, आप अन्धेरे बीच । ज्ञान का अतिकथन ज्ञान का विनाशक होता है । जो मनुष्य जितना ही अपने विचारो को प्रकाशन करने के लिये उत्सुक रहता है, उसका विचार उतना ही महत्वहीन रहता है । सभी आवेशात्मक विचार अपना और ससार का कल्याण करते है । किसी विचार के प्रचार मे मनुष्य को विचार की सत्यता मे विश्वास होना चाहिए । ससार के लोग उसको ग्रहण करे तो उनका ही कल्याण होगा । यदि वे उसे ग्रहण न करे, तो विचार के प्रवर्त्तक की हानि ही क्या ? इस भाव से ही स्थायी लोक-कल्याण-कारी विचार का प्रचार होता है । विचार के ऊपर मनन करना अपना जीवन उस विचार के अनुसार बनाना, उसके प्रचार से कही अधिक महत्व की बात है । मनुष्य के विचार ससार मे सदा फैलते रहते है । चाहे वह उनका प्रकाशन बोलकर अथवा लिखकर करे, अथवा नही । विचार एक प्रकार का समष्टि स्पन्दन है । जो सद्विचार हमारे मन में आ रहा है उसे हमे अपना ही विचार न समझना चाहिए । समष्टि की वेदना ही हमारे मन में विचार के रूप मे उदय होती है । इस वेदना को हम अपने आप चिन्तन करके और उसे नाम रूप देकर

मूर्तिकरण करते है । जब कोई विचार निश्चय का रूप धारण कर लेता है तो हम उसे बिना भाषा मे प्रकाशित किये दूसरो के पास भेज सकते है । इस प्रकार हमारी द्वेष भावना तथा मैत्री भावना से दूसरे लोग प्रभावित होते रहते है । मैत्री भावना के द्वारा दृढ इच्छा शक्ति वाला व्यक्ति दूसरे लोगो को आरोग्यवान् बना सकता है । इस तरह प्रबल विध्वंसात्मक विचार दूसरे व्यक्ति को भी हानि पहुँचाते है । जिस भक्ति के कल्याण के विचार उससे सम्पर्क रखने वाले सभी व्यक्ति अपने मन मे लाते है, उसका कल्याण अवश्य होता है । चाहे वह विचार प्रकाशित किये जायँ अथवा नही, इसी प्रकार जिस व्यक्ति का अशुभ उसके सम्पर्क मे आने वाले सभी व्यक्ति चाहते है उनका अशुभ अवश्य होता है । जो मनुष्य ससार के लोगो के प्रति भले विचार भेजता है, बाहर से उसे भी भले विचार आते है । और जो दूसरो को अशुभ विचार भेजता है, उसे भी दूसरे अशुभ विचार भेजते है । स्वार्थी मनुष्य अपने स्वार्थ की रक्षा मे लगा रहता है । जो लोग उसके स्वार्थ मे बाधक होते है, वह उनके प्रति अमैत्री भावना करता है । ये शत्रुता के विचार उसी के पास आ जाते है । जो व्यक्ति दूसरे लोगो के विषय मे जैसा सोचता है वैसा दूसरे लोग भी उसके विषय मे सोचते है । इस प्रकार स्वार्थी मनुष्य सदा घाटे में रहता है और उदार मनुष्य सदा लाभ मे रहता है । अपनत्व का भाव ही विचार को निर्बल बनाता है । अपनत्व के विनाश से ही विचार प्रबल होता है । जो व्यक्ति स्वार्थ और अपनत्व का भाव जितना ही अधिक विचार से अलग कर सकता है वह विचार को उतना ही बली बना लेता है । वास्तव मे विचार के बल का श्रोत विश्वास है । सभी व्यक्ति इसी मे रहते है और इसी मे अपनी प्राण शक्ति पाते है । पर अपने आपको पृथक् रखने के कारण निर्बल बने हुए है । अपनत्व का विनाश करना अपने आपको सर्वात्मा से मिला देना है । जब मनुष्य अपने आपको भूल जाता है तब वह बृहद् तत्व को अपने आप आ बना लेता है । फिर इसकी शक्ति ही उसमे कार्य करने लगती है । मनुष्य की व्यक्तिगत शक्ति परिमित है । जब मनुष्य समष्टि शक्ति से काम लेता है तो वह अपनी शक्ति को अपरिमित बना लेता है । अतएव जो व्यक्ति जितनी ही अधिक अपनी स्वार्थमयी इच्छाओं का त्याग करता है वह अपने विचारो को उतना ही अधिक बली बना लेता है । मनुष्य की इच्छाएँ ही उसकी विचार शक्ति को परिमित कर देती है । इच्छा अपने स्वरूप के ज्ञान मे बाधक होती है । अतएव

इच्छाओ का त्याग विचार की शक्ति के प्रसार का सर्वोत्तम उपाय है । शक्ति उसे मिलती है, जिसे व्यक्तिगत स्वार्थ के लिये शक्ति की आवश्यकता नही । अपने आपको भुला देना ही विचारो को बली बनाने का सहज साधन है । अपने आपको भुलाने के सहज साधन है, अपने आपको सदा दीन-दु खियो की सेवा में लगाये रखनेका एक उपाय है । भगवान ब्रुद्ध का कथन है कि जो रोगियो की सेवा करता है वह मेरी ही सेवा करता है ।

धर्म विजयी गाँधी जी की राजनैतिक विजय उनकी नैतिक जीतो की तुलना में बराबर नही है । उनका जीवन वेद, उपनिषद्, गीता, रामायण और महाभारत के रहस्यो का ज्वलत उदाहरण है । उनके जीवन की विभिन्न झाकिया आर्य सस्कृति की प्रतीक है । यन्त्रयुगीय मानव समाज मे सव सत्य, सवेदना, विनय तथा अन्य सात्विक स्रोत सूख से गये थे और असत्य, घृणा, निन्दा, दम्भ आदि की कलुषित नदिया मानव समाज को मानो वहाकर तेजी से ले जा रही थी । तो इस देवदूत ने धर्मोपदेश किया । जीवन के किसी अग मे उन्होने असत्य को स्थान नही दिया । अपितु हस की तरह उनका विवेक ही किया । दासता में डूबे हुए अपने देश को उन्होने सत्य का पाठ पढाया जिसे पढकर मानो समुद्रमन्थन से अमृत को पीकर देवताओ की तरह भारतीय जनता पुनर्जीवित हो उठी । इसी अटल सत्य से उन्होने सब अजेय साम्राज्य का मुकावला किया जो ससार को आसुरी माया से मोहित करके निगल रहा था । और उन्हे अभेद्य पासो से वाघ रहा था । सुदर्शन चक्र की तरह इस योगी ने सत्याग्रह नामक शस्त्र से उसे पराजित किया । १५ अगस्त १९४७ के अनन्तर इनके कई अनुयायी "शठे शाठ्य समाचरेत् ।" की नीति को स्मरण करा रहे थे तो इस पुण्यश्लोक कर्मयोगी ने कहा कि हमारा किसी देश व जाति व व्यक्ति विशेष से कोई द्वेष नही, हमे तो सत्य द्वारा असत्य को जीतना है । भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का अन्त तो सत्य के अनुभव की पहली सिद्धि थी । कैसा दिव्य आदर्श था इस भूमि पर, इसे कई वार परखा गया । सत्यसध महाराज हरिश्चन्द्र की गाथाएँ जिनका वखान ऐतरेय ब्राह्मण की ऋचाओ द्वारा किया गया था तथा अजातशत्रु युधिष्ठिर के रोम हर्षण उदात्त चरित्र का वर्णन वेदव्यास द्वारा महाभारत में हुआ । आज उसे ही परम पुरुष ने दोहराया । कलियुग स्वप्नावस्था का नाम है । उज्जिहानावस्था द्वापर होता है । उठकर खड़ा होना त्रेता युग है तथा चरणशील मानव सतयुग का सदेश होता है । इस विश्वजनीन

सत्य को भी महात्मा जी ने अपने जीवन से स्पष्ट वतलाया, राजनैतिक क्षेत्र में अर्जुन की तरह अश्रुपूर्णाविक्षणा तथा विषण्णा, राष्ट्र को इन्होंने पुन उपदेश दिया कि काम, क्रोध, मोहादि से मुक्त होने के लिये ही मनुष्य को प्राणी का शरीर प्राप्त होता है और जव वह सुख दु खादि के द्वन्द्वो को समान समझने लग जाता है तव वह अमृत ब्रह्म की स्थिति प्राप्त करने मे समर्थ होता है। सत्य को अपनाने के लिये जो आर्यों की अनुभूत जप, तप आदि साधनाएँ थी उन्हे इस तपस्वी ने अपनी दिनचर्या में स्थान दिया। इसी अनुष्ठान का इन्द्र (प्रस्थ) लोक मे वह अन्तिम अनुभव था। मनुष्य सुलभ चीज को मानने मे वे मानव समाज से घवराते न थे। प्रतिक्षण अपनी परीक्षा करते रहते थे। कई वार इन्होंने अपने आन्दोलनो को वापस लिया, जिनका एकमात्र कारण शुद्ध सत्य का भग था, उनके अनुपम उपदेशो मे अमृत का सचार होता था। मनुष्य जिस प्रकार अपने वडे-वडे दोष को देखता हुआ भी नही अनुभव करता है वैसे ही दूसरो के सूक्ष्म सदृश छिद्रो को भी नही देखना चाहिए। यह था "पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते" का जीता जागता उदाहरण, महात्मा गाँधी के दूसरे शस्त्र का नाम प्रेम था। यह द्वेष की भावना के अभाव का नाम था। सात्विक छटा से किसी को मोहित करना प्रेम कहलाता है। किसी के पर्वत तुल्य दोष को भुलाना और उसे अपना आश्रय देना प्रेम का सच्चा उदाहरण है। वेदो मे गाए हुए, "सगच्छध्व सव्यय स वो मानसि जानिताम्।" आदि भावना के आदर्श थे। जव श्री चर्चिल ने आधा नगा फकीर कहकर इन्हें कुचलना चाहा तो उसमे भी यह सफल निकले तथा श्री जिन्ना की सामयिक गालियो को भी उपेक्षा की दृष्टि से देखते थे। कलकत्ता, देहली में हुई घटनाएँ जिनमे उनपर वम वरसाये गये उनको हसकर उपेक्षित किया। उनकी सहन शक्ति अतुल थी। कभी कटु वचन कहते न सुने गए थे। यह वात प० जवाहरलाल नेहरू ने पार्लियामेण्ट के सामने स्पष्ट कही थी, नग्न नृत्य करवाया जिसके फलस्वरूप साम्प्रदायिक आधी, झझावतो ने समूचे राष्ट्र को जड से उखाडना चाहा उसे भी अभयदान देकर गाँधीजी ने गले लगाया। यह भावना शास्त्रविरुद्ध नही, गीता मे स्पष्ट कहा है—"अपि चेत्सुदुराचारो भजते सो माम-न्यभाक्। साधुरेव समन्तव्य सम्यग्व्यसितो हि स।" क्षिप्र भवति धर्मात्मा, महा-भारत मे जव द्रौपदी ने युधिष्ठिर से कहा कि ऐसी सभा मे विडम्बना का वदला

कौरवो से अवश्य लेना चाहिए तो युधिष्ठिर ने उत्तर दिया था कि किसी ने अपने को गाली दी या अपना कुछ अपकार किया तो क्या हमको उसके वदले मे वैसा करना चाहिए। यदि पुरुष ने स्त्री को अथवा पिता ने पुत्र को दण्ड दिया तो क्या वह भी उसके वदले मे वैसा करे ? यदि ऐसा हो तो ससार का काम कैसे चले। क्षमा वुद्धिमानो का भूषण है। जिसके हृदय मे क्षमा है उसके हृदय मे ईश्वर सदैव वास करता है। धर्म अपने को पालन करना चाहिए, उसके वदले में पुण्य करो, अपने को, पुण्य हो या न हो हमे अपना कर्त्तव्य छोडना न चाहिए। ईश्वर मे ध्यान लगाये रखना अपने स्वार्थमय स्वत्व को भुलाये रखने का दूसरा उपाय है। आध्यात्मिक चिन्तन करना अपने आपको भुलाने का अथवा आत्म-प्रसार का तीसरा उपाय है। आनापानसति अथवा सम्यक् समाधि का अभ्यास अपने को भुलाने का सर्वोत्कृष्ट उपाय है। आनापानसति से चेतना लुप्त हो जाती है। जव तक मनुष्य चैत्य रहता है उसके मन मे सकल्प विकल्प चला करते है और उसे सामान्य अहकार सदा वना रहता है। चेतना का लोप होने पर सन्धिकाल का विचार इतना प्रवल हो जाता है कि कोई भी वाधा उसके सामने नही टिकती। अतएव जो व्यक्ति अपने विचार को महान् शक्तिशाली वनाना चाहते है, उन्हे सम्यक् समाधि अथवा आनापानसति का प्रतिदिन अभ्यास करना चाहिए। **सत्य**—सत्य शब्द मात्र से ही गाँधीजी हर्षोन्माद से झूम जाते थे। सत्य के प्रति उनका प्रेम किसी पवित्र प्रेमी के अपनी प्रेमिका के प्रति प्रेम की भाति था। उनके सत्य को यदि हम अपने सत्यादर्शों के समान मानकर अथवा विज्ञान मे जिस प्रकार सत्य की परिभाषा की गई है वैसा मानकर चले तो उन्होने जो लिखा है उसका वहुताश हमारे लिये दुरभिगम्य हो जायगा। उनका सत्य एक ज्वलत धारणा है। सावारणतया सत्य का आधारभूत अर्थ वह नैतिक निर्णय लगाते थे जो किसी व्यक्ति को उनके अनुसार कार्य करने के लिये वाध्य करता है। इस निर्णय का रूप और इसका मूल्य प्रत्येक व्यक्ति के आत्मिक विकास और उसके जीवन तथा विचारो की शुद्धता के अनुरूप भिन्न होता है। अत स्वर्ण की भाति ही सत्य भी कभी नितात शुद्ध या पूर्ण नही होता। गाँधीजी ईश्वर की वरावरी पूर्ण सत्य से किया करते थे। प्रत्येक सत्यार्थी का यह कर्तव्य है कि वह प्रत्येक अवसर पर उस सत्य के प्रकाश में कार्य करे जो उसे उस क्षण दिखाई पडता है और साथ ही अधिक शुद्ध तथा अधिक पूर्ण सत्य की खोज मे लगा रहे, अत आज

जो सत्य मालूम पडता है कल वही गलत प्रतीत हो मकता है। परन्तु इससे आज की सत्य की धारणा के अनुसार किए हुए कार्य के औचित्य पर कोई प्रभाव नही पडता, जिसे हम सत्य की पूर्णता कहकर पुकार सकते है वही गाँधीजी की शिक्षा का सार है। और वही उनके लेखो में प्रकट रूप से पहेली या अनर्गल लगने वाली वातो की कुजी है। **अहिंसा**—गाँधीजी की अहिंसा भी सत्य की भाति व्याप्त है। शारीरिक हिंसा से अलग रहना केवल छोटे दर्जे की अहिंसा है कि जिस पर वहुत वडी सख्या में मनुष्यो के साथ व्यवहार करते समय सतोप करना होगा परन्तु जव तक उत्तरोत्तर मस्तिष्क और भावनाओ मे व्याप्त होकर पहले उन्हें समस्त स्वार्थप्रियता, क्रोध और घृणा से मुक्त करके अन्त मे उन्हें सवमे खराव विरोधी के प्रति भी सक्रिय प्रेम और सदिच्छा से न भर दे, अहिंसा नही रहती। गाँधीजी के इस विचार में साधारण जन की नितान्त शारीरिक और रूढवादी अहिंसा से लेकर वुद्ध या महावीर की उच्चतम अहिंसा के लिये स्थान है। **सत्याग्रह**—गाँधीजी के सत्याग्रह के आदर्शो को उनकी शिक्षाओ का केन्द्र समझना चाहिए। मुझे विश्वास है कि उनका यह सन्देश अपूर्वतम है। सत्य और अहिंसा उनके आधार है और यह कहा जा सकता है कि जो सत्य या अहिंसा नही है वह सत्याग्रह नही है। गाधी जी ने वताया कि वह इस शब्द को एक ओर निष्क्रय प्रतिरोध तथा दूसरी ओर ईसाइयो के अप्रतिरोध से किस प्रकार अलग करते है, ऐसा नही है कि सत्याग्रह में यह दोनो वातें न आती हो। उसमे यह दोनो निहित है। सत्याग्रह किन्ही परिस्थितियो मे नीचे दर्जे पर उतर कर निष्क्रिय प्रतिरोध और अप्रतिरोध का रूप धारण कर लेता है। परन्तु अपने सक्रिय रूप से सत्याग्रह इन दोनो से कही महान् है,, सत्याग्रह के शाब्दिक अर्थ है सत्य के प्रति दृढ रहना। परन्तु इसका भाव है, सत्य के लिये ज्वलत सघर्ष। गाधी जी ने दक्षिण अफ्रीका और भारत में सत्याग्रह के आन्दोलनो के मचालन के जो उदाहरण सामने रखे है उनका उल्लेख करना यहा सम्भव नही है। गाँधीजी इस नश्वर जीवन को अच्छाई और वुराइयो की शक्तियो का निरन्तर सघर्ष मानते थे। उन्होने ज्ञान अथवा भक्ति के द्वारा मुक्ति के सिद्धातो को अमान्य नही किया। वास्तव में वह समझते थे कि कर्मयोग में इनकी सहायता आवश्यक है। शिष्ट और दैवी शक्ति प्राप्त व्यक्ति ब्रह्म को पहचान कर अथवा पूर्ण रूप से ईश्वर की भक्ति द्वारा मोक्ष प्राप्त कर मकते है परन्तु साधारण मनुष्य के सासारिक जीवन का लाभप्रद श्रम और निरन्तर

सघर्ष का जीवन होना है, स्वभावत श्री मद्भागवत गीता उनका मुख्य प्रेरणा स्रोत था। परन्तु गाँधीजी गीता की भी अपने सत्य की दृष्टि से व्याख्या करने मे नही चूकते थे। सत्य, अहिंसा और स्वेच्छापूर्वक कष्ट स्वीकार करना सत्याग्रह के आधार-भूत तत्व है। तभी तो सत्याग्रह का मूल्य सत्य की शुद्धता, अहिंसा की गहराई और कष्ट सहन की स्वेच्छता के परिणाम मे अवलम्बित है। गाँधीजी के अनुसार सत्याग्रह सत्य और पूर्णता के उन्मुख प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का नियम है। उन्होने हमे वताया है कि प्रत्येक समाज जो वस्तुत सभ्य वनने की इच्छा रखता है, उसका भी नियम सत्याग्रह ही है। दूसरे पैगम्वरो की भाति गाँधीजी भी अपने विश्वासो का तत्काल ही कार्य रूप मे परिवर्तन देखना चाहते थे और उनकी यह अपेक्षाएँ न केवल उनके निकट सम्पर्क मे आने वाले अनेक अनुयायी से, वल्कि अपने सभी देश-वासियो और विश्व से थी। उनके स्फूर्तिदायक नेतृत्व मे प्राय मामूली मिट्टी भी स्वर्ग वन गई। परन्तु समाज के परिवर्तन की गति अत्यन्त मद हुआ करती है। सदियो वर्ष और सदिया लगेगी कि जव पर्याप्त सख्या मे लोग पूर्ण रूप से गाँधीजी के आदर्शो सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह को स्वीकार करेगे और तभी विश्व उनके आदर्शो पर चलने लगेगा। अव जव कि वापू हमारे मध्य नही रहे समय उनके पक्ष में है।

११

हृदय-सम्राट् बापू

अरे, कौन! अब शोषित पीडित मानव की जो पीर मिटाये ।
वसुन्धरा के आँसू पोंछे भारत माँ को धीर बँधाये ।।

महात्मा गाधी भारत के अथवा ससार के क्या थे ? मै तो यह कहता हूँ कि वे क्या नही थे ? वे सिपाही थे और पल्टन के कमान्डर-जनरल थे । वे साधु थे और महर्षि थे । वह सुधारक, नेता, कर्मवीर, पराक्रमी, योगी, तपस्वी, पुजारी, त्यागी, मानव-शिक्षक, दीनबन्धु, सेवक, विश्वचिन्तक, सत्य सन्देशवाहक, ईश्वरीय दूत, भगवान् के अवतारी पैगम्बर, नि स्वार्थ एव निर्भीक राजनीतिक, अहिंसा के महारथी, कवि, पत्रकार, आचार्य, सुयोग्य-नागरिक, बैरिस्टर, भाग्य विधाता, आध्यात्मदेव, परोपकारी, नैतिक और आत्मसयमी महापुरुष थे । उनका जीवन २८५९० दिन अथवा ९४० मासका चार खण्डो मे विभाजित होता है ।(१)२३५ मास शिक्षा-काल, (२) अफ्रीका में सेवा, सुधार, (३) भारतीय स्वतन्त्रता जिसमें चर्खा, ग्राम-उद्योग, असहयोग, सत्याग्रह, जेल, विदेशी बहिष्कार आदि, (४) विश्व के मानव सुधार के लिये, जिसमे अनशन (व्रत) मेल, अल्पसख्यक-उद्धार, प्रार्थना, भजन, शान्ति, सत्य, अहिंसा, प्रेम, मेल और साम्प्रदायिक नाश आदि प्रमुख है । यह चार भाग पूरे २३५ मास के होते है। वैसे उन्होने १८ बार सत्याग्रह किये, १५ उपवास लगभग १५० दिन के किये, १७ बार जेल गये और उनमे लगभग ११साल व्यतीत किये । वे भारतवासियो की बहुत बडी सख्या के हृदयो पर अपनी नि स्वार्थ सेवाओ और नैतिक महानताओ के कारण शासन करते रहे है । किसी मनुष्य का मूल्य और उसकी नैतिक उच्चता की परीक्षा कठिन दिनो मे और नाजुक अवसर पर ही हो सकती है । मातृभूमि के स्वतन्त्रता-सग्राम के सम्पूर्ण इतिहास में गान्धी जी ने अपनी नैतिक श्रेष्ठता के बल पर अन्य देशसेवियो और विरोधियो को उचित मार्ग का अनुसरण कराया था । वे सदा वही करते थे, जिसकी वे शिक्षा देते

थे। सत्याग्रह आन्दोलन के जन्मदाता के रूप मे गाँधी जी हमेशा विचार, वाणी और कर्म से अहिंसात्मक रहे है। और कभी उन्होने कोई असहानुभूति पूर्ण या असत्य वात अपने शत्रु या विरोधी से, चाहे अग्रेजी सत्ता हो या मुस्लिम लीग के लब्ध-प्रतिष्ठ नेता हो, नही की।

ससार के समस्त देशो की तुलना में भारतवर्ष का जीवन के प्रति दृष्टिकोण सदा आध्यात्मिक रहा है। इस विस्तृत देश मे ससार के प्राय सव धर्मों के प्रतिनिधि मिलते है। प्रत्येक धर्म अन्त मे एक ईश्वर मे विश्वास करता है। इसीलिये वही इस देश का सच्चा नेता हो सकता है, जिसका सव धर्मों मे व्याप्त आवश्यक एकता मे विश्वास हो और जो समस्त मानवता को विना जाति, धर्म, ऐन्द्रिय या वर्णिक विभेद के प्रेम की दृष्टि से देखता है। महात्मा जी मे इन सव गुणो का अत्यन्त उत्कर्षपूर्ण सयोग रहा है। उनके हृदय मे प्रत्येक धर्म के गुरुके प्रति आदर-भाव था और मानव मात्र के लिये उनके हृदय मे विशिष्ट स्थान था। इसलिये केवल वापू को ही महान् भारतीय राष्ट्र की आत्मा वनने का अधिकार रहा है।

अस्पृश्यता की समस्या—अस्पृश्यता के विरोध मे महात्मा जी का आन्दोलन प्राचीन भारतीय धर्मशास्त्र से अनुमोदित है। आजकल शूद्रों के प्रति जो अवहेलना-पूर्ण व्यवहार है, यह प्राचीन सस्कृति की आत्मा के विरुद्ध है। यह कहना कि सिर और पैर अलग-अलग वने है और उनके कार्य मे भी भिन्नता है, एक की निन्दा और दूसरे की तारीफ नही हुई। इसके विपरीत यदि वलपूर्वक सिर और पैर से एक ही प्रकार का कार्य कराया जाय तो यह साधारण ज्ञान की अवहेलना कही जायेगी। इस वात को कौन अस्वीकार कर सकता है कि सिर और पैर दोनो अर्थात् उच्च और नीच समान रूप से जीवन के सौन्दर्य के लिये आवश्यक है। चाहे द्विजन्मा हो या अद्विजन्मा, ऋषि हो या वालक। गीतामें यह स्पष्ट है कि श्रीकृष्ण ही चारो जातियो के जन्मदाता है। कृष्णके ही यह वचन है कि "चार जातिया शक्ति और कार्य-विभाजन के सिद्धान्तानुसार हमसे निकली है, मुझे उनका कर्ता मानो।" गीता ४-१८। आगे फिर भगवान कहते-है, "ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्रो का विभाजन है, परन्तु विभिन्न गुणो की दृष्टि से हुआ है, जिसको लेकर उन्होने जन्म ग्रहण किया है और जो स्वत. प्रस्फुटित होते है।" फिर क्योकर उनकी आज्ञा शूद्रो के प्रति वैसे क्रूर व्यवहार के पक्ष में होती, जैसा कि भारत के कुछ भागो में है। क्या उन्होने अन्यत्र नही कहा है, "मूर्ख मानव शरीर पाकर हमारी अवहेलना करते है किन्तु वे हमारी

परम सत्ता से परिचित नही होते, वह सत्ता जो समस्त जीवधारियो के स्वामित्त्व में है ।" गीता ९-११। "हे अर्जुन ! मैं ही आत्मा हूँ, जो समस्त प्राणियो के हृदय में विराज रही है, मैं सब प्राणियो का प्रारम्भ, मध्य और अन्त भी हूँ । और जो कुछ सब शरीरो का बीज रूप है, वह भी मै हूँ । और ऐसी कोई भी वस्तु गतिशील या स्थिर नही हे, जो मुझमे रहित हो ।" पूर्ण अवतार के इन बहुमूल्य शब्दो से भी क्या कोई चीज अधिक स्पष्ट हो सकती है । क्या यह शब्द असन्दिग्ध रूप से मानवता की पवित्रता की ओर सकेत नही करते ? क्या शूद्र के शरीर मे निवास करने वाली सत्ता, क्षत्रिय या ब्राह्मण के शरीर में रहनेवाली सत्ता से किसी प्रकार भिन्न है । क्या एक अछूत ईश्वरीय सुख से वचित रह सकता है ? इस प्रकार के सीधे प्रश्न हमारे सामने उपस्थित होते है । अब हम भगवान् श्रीकृष्ण के शब्दो के प्रकाश मे आजकल के अपने अछूत भाइयो के जीवन पर दृष्टि डालते है । गत सौ या अधिक वर्षो मे बहुत से धार्मिक और सामाजिक सुधारक और राजनीतिक विद्रोही हुए है । किन्तु किसी ने भी अस्पृश्यता की विकट समस्या को, जिसने भारत को सभ्य देशो की दृष्टि में नीचे गिराया है, हृदयगम कर उसके उन्मूलन की चेष्टा नही की । यह कार्य महात्मा जी ने एक राजनैतिक और समाज सुधारार्थ अपनाया और इसे जड से उखाड फेंकने के लिये तत्पर हो गये । ६ अक्टूबर २१ ई० के 'यग-इडिया' में उनका लेख इस प्रकार है —

मेरा सिद्धान्त ठीक हो या गलत पर छुआछूत का तर्क और दबाव, उदारता या प्रेम की प्रवृत्तियो से घोर शत्रुता है । ऐसा धर्म जिसमें गौ के पूजन का विधान है, वह कभी भी मनुष्य के अमानुषिक व्यवहार को सहन नही कर सकता । हिन्दू जब तक स्वतत्रता के अधिकारी नही हो सकते तब तक वे अपने पवित्र और सुन्दर धर्म का अनादर अस्पृश्यता को बनाये रखकर करते रहेंगे । मेरे लिये तो हिन्दू धर्म जीवन से भी प्रिय है किन्तु इस गन्दगी के लगे रहने के कारण जीवन ही भार हो गया है । यह उचित है कि हम अपनी जाति के पाँचवे हिस्से के बराबर एक समुदाय की अवहेलना और अनादर करें । इस अवहेलना का अर्थ है ईश्वर की अवहेलना करना ! हमें उन्हें अपने ही बराबर मानकर समान अधिकारो का भागी मानना चाहिये, जब ही सफलता होगी ।

मानवता के अनन्य पुजारी—कही कही घोर राजनीतिज्ञता और सैद्धा-

न्तिक मतभेदो के कारण कुछ अदूरदर्शी हिन्दू महात्मा गाँधी को गालियाँ देकर विरोधी कहते रहे है। और उनके जीवन के प्रति दृष्टिकोण को हिन्दू समाज के विपरीत बतलाते है। इसका कारण केवल इतना है कि गाँधीजी हिन्दू महासभा वालो के सकीर्ण विचारो के साथ राग नही मिला सके। किन्तु महासभा वालो ने प्राचीन हिन्दू वर्म के सच्चे स्वरूप से आत्मसात् नही किया है। उसके आदर्श पर चलने की बात तो दूर रही, महात्माजी ने सदा हिन्दू धर्म की विशुद्ध धारा के पक्ष मे लिखा और कहा है और इसके उच्च आदर्श तक अपने जीवन को ले जानेका सदा प्रयत्न किया है। उनके विषय में विशेष महत्व की बात यह है कि वे जो कहते थ उसे कार्य मे परिणत भी करते थे। वे ईश्वर और मनुष्य के सच्चे सेवक है जैसा प्रत्येक हिन्दू को, जिसे अपने धर्म मे विश्वास है, होना चाहिये। उन्होंने सदा एक मानवता के सिद्धान्त को प्रतिपादन किया है जो हमारे प्राचीन ऋषियो की शिक्षा है। उनका विचार है कि हिन्दू धर्म "द्वार बन्द" धर्म नही है। हिन्दू धर्म में व्यक्ति के लिये, उनके विचार से आदेश है कि वह ईश्वरीय आराधना अपने विश्वास के अनुसार करे और इसलिये यह सब धर्मों मे मेल खा सकता है। एक मानवता का आदर्श सब जीवधारियो (सर्वभूतानि) के प्रति प्रेम और आदर का भाव हिन्दू विचारधारा के शरीर निर्माण मे सन्निहित है। जो महात्मा जी की शिक्षा है उनके पीछे पवित्र हिन्दूधर्म शास्त्र का बल है। "विश्व-बन्धुत्व" का सत्य इस बात में निहित है कि समस्त जीवनाधिकारी अपनी सत्ता एक परम आत्मा से प्राप्त करते है।

भावना से अवगत हो जाता है और फिर पूर्ण ब्रह्मत्व को प्राप्त हो जाता है। वह, जो आत्मा मे सब प्राणियो को देखता है और सब प्राणियो मे आत्मा को देखता है, घृणा से बिल्कुल मुक्त हो जाता है। (ईशोपनिषद्)। धर्म का निर्माण सब प्राणियो की रक्षा और उनके हित को ध्यान मे रखकर हुआ है, जो इस प्रकार का हित स्थापित करे वही धर्म है। यह निश्चित है, सब जीवधारियो को कष्ट का कारण बनने से बचाने के लिये धर्म बना। जो जीवो की रक्षा घोषित करे वही धर्म है, यह निर्विवाद है। जो सब जीवो का मित्र है, जो सब के हित के लिये कर्म, विचार और वाणी से सन्नद्ध रहता है, वही धर्म का ज्ञाता हो सकता है। (महाभारत, शान्ति-पर्व)

इन्ही सनातन धर्म के मूल सिद्धान्तो के आधार पर गाँधीजी ने अपना सारा जीवन सब धर्मो की एकता घोषित करने और आपस के व्यवहार मे आदर और प्रेमभाव स्थापित करने मे व्यतीत किया। उन्होने पृथ्वी के सब धर्मो का तुलनात्मक अध्ययन किया था। मनुष्य की एकता तथा सुदृढता में इनका घना और गहरा विश्वास है और यह प्राचीन धर्मशास्त्रो से प्रेरित है। इस धर्म के सबसे बडे प्रवर्तक भगवान् कृष्ण हुए है जिन्होने गीता के चतुर्थ अध्याय मे स्पष्ट घोषित कर दिया है कि अन्तिम लक्ष्य एक ही है, उसके पहुँचने के विभिन्न मार्ग है। यह सिद्धात महात्मा गाँधी के अत्यन्त सन्निकट रहा है। कृष्ण का वचन है—मनुष्य चाहे जिस मार्ग से भी मेरा चिन्तन करे मैं उसका स्वागत करता हूँ। हे भारत! जो भी मार्ग वह ग्रहण करेगे वह मेरा ही होगा।" क्या इस वाणी से भी अधिक विश्वव्यापी उदार और सर्वव्यापी कोई चीज हो सकती है। महात्मा जी को कठिन समय मे भी गीता ने प्रकाश देकर शक्ति और आश्वासन दिया है।

सत्य और असत्य

महात्मा जी के उच्च नैतिक स्तर और उनके कभी न झुकने वाले सदाचार के सिद्धान्तो ने जो उनके जीवन को उचित दिशा का दर्शन कराते है, सदा उन्हे सम्मान और एकान्त मे प्रेरणा प्रदान की है। कठिन से कठिन और अत्यधिक उत्तेजनापूर्ण अवसरो पर महात्माजीने बडी ही वीरता और दृढता के साथ अपने पवित्र आदर्शो का अनुसरण किया है और कभी भी अपने को इस पथ से गिरने का मौका नही दिया। "सर्मन आन दी माउण्ट" के सदाचारपूर्ण सिद्धान्तो

की घोपणा अलग चीज है । किन्तु उत्तेजनापूर्ण परिस्थितियो मे पड कर इनके अनुसार चलना अत्यन्त कठिन है । वुराई का उत्तर भलाई वाले जिस सर्वकालिक सिद्धान्त की घोषणा महात्मा गौतम ने पच्चीस सौ वर्ष पहले ही की और ईसा ने जिसे दो हजार वर्ष पहले अपनाया उसे भारत माता के सबसे महान् पुत्र गाँधी ने अपने जीवन मे समानान्तरित करके दिखला दिया । अभी हाल के उपद्रवो को शान्त करने के प्रयत्न के सिलसिले मे उनके अमर शब्द ये है । मेरा दृढ विश्वास है कि बुराई का उत्तर बुराई से देना कोई महत्त्व नही रखता और अच्छाई के वदले मे हमने कोई अच्छा काम कर दिया हो तो उसमे कोई खास गुण की वात नही आती । सच्चा पथ यही है कि हम वुराई के वदले मे अच्छाई दे ।

इन शब्दो मे उन्होने हिन्दू, मुसलमान, सिक्खो से कहा कि वे वदला लेने की भावना से काम न करे और न अपनी हानियो की पूर्ति के लिये ही लडे । उन्हे अपनी वीती हुई दु ख की कहानी भूलकर मित्रता और सद्भावना का मैत्रीपूर्ण सद्भाव सव भाइयो की ओर विना जाति और रगभेदके ध्यान दिये रखना चाहिये । महात्माजी की अतरग भावना जिसकी पूर्ति के लिये वे प्रयत्नशील रहे है इन शब्दो मे व्यक्त हैं । "भविष्य की पीढियो को यह न कहना पडे कि हमने स्वतत्रता की मीठी रोटी इसलिये त्याग दी कि हम उसे वचा नही सके । यह स्मरण रखिये कि जव तक इस पागलपन का आप अन्त न करेगे, भारत का नाम ससार की दृष्टि में निम्न और हेय होगा" इसी की पूर्ति उन्होने अन्त तक की ।

महात्माजी और इस्लाम

अपने धर्म के समान ही जिसमे उन्होने जन्म लिया, महात्माजी ने इस्लाम का भी अध्ययन उसी आदर और शुद्ध विश्वास के साथ सदा किया । उन्हे इस्लाम के प्रमुख सिद्धान्तो का अच्छा ज्ञान था और उसके पैगम्बर के जीवन, रहनसहन, सादगी, व्यवहार और शिक्षाओ का उन्होने अनन्य भाव से अध्ययन किया हैं । वहुत से अवसरो पर उन्होने मुसलिम ख़लीफाओ विशेष कर हजरत उमर आदि के जीवन से प्रेरणा प्राप्त की । मुसलमानो के वीच वन्धुत्व का सादा साम्यवादी सिद्धान्त था उनका ईश्वरकी एकतामें अडिग विश्वास और अन्य विश्वासोंने उनकी स्वतन्त्रता आदि वातो ने महात्माजी के हृदय का स्पर्श किया है और उन्हें प्रेरि

किया है । उन्हें अपने को मुसलमान कहने मे सकोच नही होता क्योकि इस्लाम शब्द का अर्थ है सब प्राणियो से मित्रभाव रखना और ईश्वरीय इच्छा को सर्व-प्रवाल मानना । यद्यपि कुछ मुसलमानो ने उनके राजनैतिक प्रश्नो पर विभिन्न विचारो को गलत समझ कर उन्हे गलत रूप में प्रस्तुत किया है किन्तु उन्होने उस सत के मार्ग से एक पग भी पीछे नही हटाया जिसका दर्शन उन्हे इस्लाम मे मिला । उनकी झलकती हुई ईमानदारी और हार्दिक सद्भावना को जो उनके हृदय में मुसलमानो के प्रति है कोई भी समझदार और बुद्धिमान आलोचक सन्देह की दृष्टि से नही देख सकता । जैसी शुभ भावनाएँ उनकी हिन्दुओ के प्रति थी वैसे ही मुसलमानो के प्रति थी । सम्पूर्ण मुसलिम जाति के प्रति उनकी भावना सदा मैत्रीपूर्ण और महानुभूति की रही है । वे केवल शाब्दिक सहानुभूति नही रखते थे । दश साल पहिले जब वे यरवदा जेल मे थे उन्होने उर्दू सीखी थी और कई उर्दू पत्रो का जवाब उर्दू ही मे लिखते थे । उन्होने पवित्र कुरान शरीफ को खुद पढकर मनन किया है । वह हिन्दी, उर्दू लिपियो को राष्ट्रीय लिपि का आदेश देते रहे हैं । और इसीको हिन्दुस्तानी नाम से सुविख्यात किया था । वे गीता के साथ कुरान शरीफ का भी अध्ययन करते और प्रार्थना सभा में दोनो को महत्त्व देते थे । भारतीय एकता के वह ही केवल एक महान पुजारी थे । यदि यह कहा जाय कि मुस्लिम प्रेम के ही कारण उनका बलिदान हुआ तो यह अतिशयोक्ति न होगी । उनकी मृत्यु पर भी कई मुसलमान खबर सुनकर बलि हो गये, उनकी मुस्लिम शिष्या अम्तुल ने तेरहवी तक व्रत रखा और सारी मुस्लिम दुनियाने शोक मनाकर उनके मजारात भी बनवाये है और चेहल्लुम-शोयम के खाने व कुरान शरीफ की तिलावत की है ।

जनाब अब्दुल माजिद दरियावादी सा० ने उनका अटूट सम्बन्ध इस्लाम पर लेख लिख कर यह प्रकट किया है कि मैने सन् २४ ई० में महात्मा गाँधी को अजमेर शरीफ की दरगाह मे एक अनन्य भक्त की तरह खडे देखा और उसी के यात्रियो मे उनकी भक्ति, कामना और तन्मयता इतनी अधिक बढी कि सब लोग आश्चर्य करते थे । वही पर ईश्वर के विषय में गाँधीजी ने "सर्वशक्तिमान् एक सत्ता" की परिभाषा प्रकट करते हुए कहा था कि हजरत मुहम्मद सा० सचमुच उस खुदा के सन्देशवाहक और इन्सानियत-सुधार के महर्षि थे । इसीलिये वह

पैगम्बर सा० की जीवनी का मनन करके उनकी सादगी का अनुसरण करते थे। सीधासादा भोजन और नीचे चटाई पर बैठने की प्रथा बकरी का दूध इस्तेमाल करना शायद इस्लामी ऋषि की प्रेरणा ही समझी जाती है। महात्माजी ने अपने अंग्रेजी अखबार इंडियन ओपीनीयन में लिखा है कि "जो आदमी इस बात में यकीन करता हो कि अल्लाह एक है उसके सिवा दूसरा नहीं और मुहम्मद उसके पैगम्बर हैं, कुरानशरीफ उसकी भेजी किताब है, नमाज, रोजा, जकात, हज उसके खास हुक्म हैं, उसे मजहब से मुसलमान कहा जा सकता है। ऐसा मानने वाले का नाम चाहे जो कुछ हो, चाहे वह कोई कपडा पहिने और चाहे जो खाना खावे। वह मुसलमान है।" इन्ही बातो से कभी कभी लोग उन्हे मौलाना गाँधी भी कह देते थे, परन्तु वह सच्चे हिन्दू धर्म के पृष्ठपोषक ही रहे। हाँ! अलीबन्धु, मोहम्मदअली, शौकतअली, डा० असारी, हकीम अजमल खाँ, डा० महमूद और मौलाना आजाद तथा सेठ तैयबजी के द्वारा उनपर इस्लामी संस्कृति का कुछ प्रभाव पडा था। और इस्लामी आदेश की (१) गुलामी प्रथा का नाश, (२) ब्याजखोरी का अन्त, (३) स्त्री सम्मान, (४) शराब का बहिष्कार (५) भाईचारे की आदर्शताओ पर वह अटूट श्रद्धा रखते थे। इस्लाम या इस्लामी जगत् के नुकसान का कभी भी उन्होंने कोई आदेश नही दिया और कई मुस्लिम दोस्तो का वह विशेष, सम्मान करते थे। कई मजारो पर उन्होंने सिज्दा किया है, कुरानशरीफ का अध्ययन वह करते ही रहते थे। उनमें तेरा-मेरा पक्षपात तो था ही नही।

भारतीय इतिहास में बापू का नाम राष्ट्रपिता और विश्व इतिहास में शान्ति-दूत के स्थान पर विश्वधर्म प्रवर्त्तक कहना अच्छा प्रतीत होता है। प्रार्थना सभा में भाषण देते समय उन्होंने कई बार कहा है कि यदि हिन्दूधर्म की कोई रक्षा कर सकता हूँ तो वह मैं हूँ। उस हिन्दूधर्म को बापू ने संस्कृति और सभ्यता की दृष्टि में रखकर भारतीय एकता की कसौटी पर कसकर एक उज्ज्वल पथ-प्रदर्शक के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें ऊँच-नीच, छोटे-बडे और विभिन्न सम्प्रदायों की निधियां एकत्रित हैं। ईश्वर को केवल मीरा, नानक, तुलसी, तुकाराम के भजनों से ही नहीं पुकारा जा सकता। बापू के लिये तो सब धर्म उसी एक ईश्वर की आराधना प्रकट करते हैं। सब धर्मों की स्तुति पर अपने हृदय की शुद्धि करना

है तो फिर धार्मिक रूढियो का ढोग कैसा ? उसे यदि विभिन्न नामो से पुकारा जा सकता है तो उसकी स्तुति में भेदभाव कैसा ? बापू की प्रार्थना में वैदिक ध्वनि के भजनो के साथ कुरानशरीफ की आयतें और गुरु ग्रन्थ की ऋचाएँ, बाइबिल के अवतरणो को भी सम्मान मिलता था। यदि ईश्वर के लिये सब समान है तो उसीके अंश पुरुष में यह भेदभाव कैसा ? बापू द्वारा धार्मिक एकता को क्रियात्मक रूप में परिणित करना, भारतीय सस्कृतिके इतिहास में उस विश्व-धार्मिक मन्दिर में एक और सोपान का निर्माण करना है, जिसकी नीव आज से सहस्रो वर्ष पहले वैदिक मन्त्रों मे डाली गई थी और जिसके निर्माता क्रमश वैदिक ऋषि अशोक, कनिष्क तथा अकबर आदि भारतीय विभूतियाँ रह चुकी है। जिनके इस विश्वधर्म प्रवर्त्तक कार्य की चर्चा भले ही कही छिपी हुई मिले अथवा न मिले किन्तु अन्वेषण कर खोज निकालना कठिन नही है। बापू का अवतरण स्वतन्त्रता और एकता दिलाने के लिए हुआ है। गीता के अनुसार "धर्म सस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे" को दृष्टिकोण में रखते हुए यह भलीभाँति विदित है कि पथ-प्रदर्शक के रूप में बापू ने धार्मिक एकता और विश्वधर्म का मार्ग दिखाया है। वैदिक काल से भारत में धार्मिक एकता की भावना का विकास हुआ। ऋग्वेद में एक ऋक् है जिसमें उसे इन्द्र, मित्र, वरुण, अग्नि, और सुन्दर पखोवाला गरुड कहते है, मुनिजन भिन्न भिन्न नामो से उस विभूति को पुकारते है, किन्तु वह एक है "ईश्वर का एक स्वरूप और महात्माजी का उसे भिन्न भिन्न नामो से पुकारना (एक सद्विप्रा बहुधा वदन्ति) ने भारतीय सास्कृतिक क्षेत्र में बडा कार्य किया और इसी एकता की चट्टान पर बहकर धार्मिक प्रवाहो ने अपना अस्तित्व स्थापित रक्खा, किन्तु वे इसे उखाडने में सफल न हो सके। अन्य विभूतियो के साथ ही साथ ऐतिहासिक युग में तीन महान् आत्माओ ने इस चट्टान को और सुदृढ बनाने में सहायता दी, वे थे अशोक, कनिष्क और अकबर।

अशोक के विषय में यह कहना भूल होगी कि वह बौद्धधर्म का अनुयाई था और अपने राज्य-पद का दुरुपयोग कर उसने चट्टानो और शिलालेखो द्वारा बौद्ध धर्म का प्रचार किया। परन्तु नही, उसने विश्वधर्म के लिए ही दान, दया, सत्य और शौच अर्थात् शुद्धता का अनुरोध किया है। बापू सदा प्रार्थना सभा मे अनुरोध किया करते थे कि यदि किसी धर्मावलम्बी ने इस बात का प्रयत्न किया कि

बलप्रयोग से वह विपक्षी धर्म को नष्ट कर देगा तो इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा और वह धर्म स्वय ही नष्ट हो जायेगा। यह बात सब के लिये लागू होती है। "हिन्दुस्तान केवल हिन्दुओ का देश" की नीति का खडन करते हुए उन्होने सदैव ही चिन्ता प्रकट की और कहा कि ऐसा करना भारत के राजनीतिक अस्तित्व को नष्ट करना तो होगा ही पर इससे स्वय हिन्दूधर्म की सत्ता नष्ट हो जायेगी।

सत्य के मार्ग का अन्वेषण कर दया और दान का सहारा लेकर और आन्तरिक तथा बाह्य शुद्धि की चादर मे बापू ने ससार के सामने यह प्रस्तुत कर दिया कि सत्य ही एक धर्म है जिसके आधार पर ससार की बडी से बडी लडाई जीती जा सकती है। अहिसा, जिसका उल्लेख उन्होने विस्तार के साथ किया है, बापू की लाठी थी, जिसके आधार पर उन्होने समाजवादियो से लोहा लिया और विजय प्राप्त की थी। प्रार्थना सभा मे विभिन्न सम्प्रदायो द्वारा की हुई भगवान् की स्तुति उनकी धार्मिक एकता का जीवित चित्र प्रदर्शित करती है। बापू का ईश्वर केवल हिन्दूधर्म तक ही सीमित नही था। उन्हें अपने सनातन धर्म पर गर्व था। गीता उनकी आशा थी, अन्धकार के समय प्रकाश प्रदर्शित करने का एकमात्र साधन थी। पर उनका धर्म विश्वव्यापी सार्व-जनिकमय था जिसमे साम्प्रदायिकता और ऊँच-नीच का भाव न था। बापू ने स्वय अपने हाथो से कुष्ठ रोगके पीडितो की शुश्रूषा कर यह दिखा दिया कि मनुष्य की सेवा ही ईश्वर के प्रति प्रीति प्रदर्शित करने का सबसे बड़ा साधन है। आन्तरिक शुद्धि के सम्मुख शत्रु के प्रति भी भेदभाव की भावना नहीं रहती।

बढा। जिस दिन बापू पर बम फेंका गया था वह डरे नही और दूसरे दिन की प्रार्थना सभा मे उन्होने हिन्दूधर्म की रक्षा करने वाला अपने को बतला कर गीता के इस श्लोक को सार्थक कर दिया था—

यदा यदाहि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत–अभ्युत्थान धर्मस्य तदात्मान सृजाम्यहम्।

इसमे लेशमात्र भी सन्देह नही कि (धर्म सस्थापनार्थाय) ही उस गीता के भगवान् ने बापू के रूप मे अवतार लिया था। भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा है कि हे पार्थ! मै एक विशेष उद्देश्य को लेकर इस मृत्युलोक मे पदार्पण करता हूँ और अपना कार्य सम्पन्न कर अपनी लीला सवरण कर लेता हूँ। मेरे ऐसे अनेक जन्म हुए है और सदा होते रहेगे। बापू की अलौकिक लीलाओ पर मनन करने से हमें ज्ञात होता है कि वह श्रीकृष्ण की ही एक महान् विभूति थे। सम्भव है अपना कार्य पूर्ण जानकर ही उन्होने अपनी लीला सवरण की हो। आज वह अपने परमधाम को पधार गये है। पर हमे पूर्ण आशा है कि उन्ही के व्यापक दृष्टिकोण, धार्मिक क्षेत्र, समदर्शी भाव तथा ईश्वरीय शिक्षाओका सबल ग्रहण कर हम आत्मिक शुद्धता और स्थिर भक्तिभाव के बीज बो सकते है। बापू के रूप मे प्रकट हुई ईश्वरीय महाविभूति ने भारत को ही नही प्रयुक्त समस्त ससार को जिस अलौकिक छटा से आलोकित किया था उसका वास्तविक महत्व भावी इतिहासकार ही अकित कर सकेंगे?

१२

बापू की स्मृति

तुम पैगम्बर बुद्ध मसीहा बनकर दुनियाँ में आये थे।
शान्ति सुधा बरसानेको वह सत्य मानव का पथ लाये थे !

जिस गाँधी ने संसार के महान् पुरुषों, अवतारियों और पैगम्बर आदि विशाल पुरुषों की भाँति जीवन सागर में एक मानवधर्म का सन्देश दिया, जिस महात्मा ने सत्य, अहिंसा, शान्ति के सुमधुर पुष्पों से वाटिका सुरभित कर दी, जिस बापू ने हिन्दू-मुस्लिम मेल के लिये बलिदान कर दिया उसकी स्मृति के लिये सभी नर-नारी सर्वस्व अर्पण करने को तैयार हैं। देश के कोने-कोने से नये-नये सुझाव आ रहे हैं। कई स्थानों में गाँधी मन्दिर बन रहे हैं, कहीं गांधी रोड, गांधी शाला, गांधी पुस्तकालय, गांधी नगर, गांधी समिति, गांधी भाषा, गांधीभूषण, गांधी अखाड़ा, गांधी टिकट, गांधी अखबार, गांधी मेला, गांधी चौक, गांधी पार्क, गांधी धर्म, गांधी बाजार, गांधी भवन, गांधी आश्रम, गांधी लिमिटेड कार्यालय और गांधी मूर्ति की स्थापना सोची जा रही है। वैसे तो उनके जन्मस्थान पोरबन्दर और बलि स्थान बिड़ला भवन, राजघाट, त्रिवेणी तट पर तथा वर्धा, साबरमती आश्रमों में स्मारक बनेंगे ही और कई शहरों का नाम परिवर्तन का भी सुझाव चल रहा है। इसी तरह कुछ लोग गांधी संवत् का सुझाव ईस्वी, हिजरी, विक्रम, शाके आदि के अनुसार स्थापना की कर रहे हैं। कुछ लोग उस जुम्मा के दिन विश्राम दिवस (छुट्टी का दिन) को मृत्यु-दिवस के रूप में कर रहे हैं।

(३) पटना के अहमद फातिमा काज़िम लिमिटेड नामक एक मुस्लिम फर्म गाँधी-शान्ति पुरस्कार की आयोजना कर रही है, जो कि नोबेल पुरस्कार की भाँति ससार मे विख्यात होगा। दिल्ली के मुसलमान बहुत बडा मजार भी बना रहे है।

(४) अमेरिका के एक पत्र हेरेल्ड ट्रिब्यून ने सुझाव दिया है कि भारत मे एक "गाधी शान्ति विश्वविद्यालय स्थापित किया जाय, जिसमे सारे ससार से विद्यार्थी आकर "शान्ति शिक्षा" ले।

(५) भोपाल स्टेट के सुयोग्य प्रधान मन्त्री राजा सर अवधनारायण निसरैया ने बापू का जीवनचरित्र हिन्दी, उर्दू आदि देशी भाषाओ मे खास तौर से लिखवा कर उनके सिद्धान्त आदि के ठोस प्रचार का साधन बनाया है और जिसमे कई हजार रुपया खर्च कर शान्ति, मेल के प्रचार का कार्य प्रारम्भ किया है। यह साहित्यिक प्रचार अति उत्तम और श्रेष्ठ है। बापूकी देन भारतकी स्वतत्रता है, गाँधी टोपी और नन्हे नन्हे बच्चो की 'गाधी जय' है, विश्व मे फैलता हुआ गाधीवाद का जादू है। फिर भी हमें राष्ट्रपिता के प्रति अपना कर्तव्य पालन करना ही है। सभी नेता एक स्वर से चिल्ला रहे है कि मूर्ति और मन्दिरो के निर्माण मे धन का अपव्यय मात्र होगा। मन्दिर बनवाने वालो से बापू की आत्मा कभी प्रसन्न नही होगी। उनका सच्चा स्मारक गाँधी सिद्धान्तो का प्रचार है। बापू के रचनात्मक कार्यक्रम का प्रसार ही सबका लक्ष्य होना चाहिये। गाँधीजी का सच्चा स्मारक शान्ति, मेल, प्रेम, अहिंसा, हरिजन उद्धार, त्याग और हिन्दू मुस्लिम घनिष्ठ सम्बन्ध है। वह ग्रामसुधार चाहते थे, वह स्वदेश के भक्त थे, वह अपने देश को स्वावलम्बी बनाकर अपनी चीजो का प्यार और आवश्यक चीजो को उत्पादन चाहते थे। कांग्रेस वर्किङ्ग कमेटी ने एक कमेटी बनाई है, जो कि प्रत्येक व्यक्तिसे उनके रचनात्मक कार्यक्रमपर दृढ रहनेकी अपील करती हुई कहती है कि महात्मा गाँधी की अमर शिक्षाएँ और उनके कार्य देशवासियो तथा ससार के लोगो के हृदयो में सुरक्षित है। अगली पीढी उनसे प्रेरणा प्राप्त करेगी। इससे अच्छा और कौन स्मारक हो सकता है। यथार्थ मे जबतक भारत जीवित रहेगा, स्वतन्त्र रहेगा, तब तक गाँधीजी की स्मृति भी रहेगी,

`प्यारे देश को स्वतन्त्र रखना है तो आर्थिक, सामाजिक और नैतिक

उन्नति के द्वारा रचनात्मक कार्य प्रारम्भ कर दें। हम देखेंगे कि थोडे ही समय मे हमारा भारत पूर्ववत् सारे ससार का नेतृत्व करेगा, और इसका झडा विश्व के कोने कोने में पहुँच कर न्याय, सत्य, अहिंसा, शान्ति, प्रेम और मानवता का सन्देश सुनावेगा। काग्रेस नेता, स्वतन्त्रता के प्रेमी और महात्माजी के सच्चे भक्त, प्रेमी और आज्ञाकारी वह है जो कि बापू के निधन के पहिले के सुझाये विचारो को अपना ले और तदनुसार भाईचारे की दीवाल इतनी सुदृटकर दें जोकि किसी भी आपत्तिकाल मे न टूट सके। हम ऐसे नेता, सस्था, अखबार आदि को जब तक सशोधन कराकर सत्य पथ पर न लायेगे, जब तक हम स्वार्थिक धर्म और जाति के उद्धार के नशे से अलग न होगे, तब तक हममे वह समानता, भ्रातृत्व स्नेह न पैदा होगी, हम बापू की स्मृति को नही रख सकेगे और न बापू की आत्मा को प्रसन्न कर सकेंगे ?

पूज्य गाँधी जी की रामधुन

रघुपति राघव राजा राम। पतित पावन सीता राम॥
राजा राम जै जै जै राम। पतित पावन सीता राम॥
रघुपति राघव राजा राम। पतित पावन सीता राम॥
ईश्वर अल्लाह तेरे नाम। सबको सन्मति दे भगवान॥
रघुपति राघव राजा राम। पतित पावन सीता राम॥
निर्धन के धन राजा राम। पतित पावन सीता राम॥
निर्बल के बल राजा राम। पतित पावन सीता राम॥
रघुपति राघव राजा राम। पतित पावन सीता राम॥
भजले भजले सीता राम। मंगल मूरति राधे श्याम॥
भज मन प्यारे राम रहीम। भज मन प्यारे कृष्ण करीम॥

रघुपति राघव राजा राम।
पतित पावन सीता राम।

मृत्यु पर गाँधीजी का मत

मै अनेक बार इस बात से सहमत हो चुका हूँ कि मृत्यु जीवन का एक अग अवसर है, जब कभी वह आवे तब उसका स्वागत करना चाहिए। मैंने बहुत

बडा प्रयत्न करके अपने हृदय से भय को निकाल दिया है, मुझे जीवन में कई ऐसे मौके याद हैं जब कि मृत्यु की निकटता पर मेरे हृदय में उल्लास उत्पन्न हुआ है, वैसा ही उल्लास जैसे एक बिछुडे हुए मित्र से मिलने पर प्राप्त होता है

मृत्यु तो अवश्यम्भावी ही है, मनुष्य मोह में पडकर चाहे जितना उससे बचने का प्रयत्न करे, ईश्वर कार्य कराना जानता है , जिस दिन मेरी आवश्यकता न रहेगी वह तुरन्त ही मुझे बुला लेगा।

—महात्मा गाँधी

गाँधीजी की काँग्रेस को अन्तिम सलाह

मरने के कुछ घटे पूर्व महात्मा गाँधी ने काग्रेस को जो अन्तिम सलाह दी उसका आशय निम्नलिखित है।

काग्रेस जनता के सेवको की सस्था होनी चाहिए। यह अर्द्ध सैनिक सस्था हो किन्तु उसका सिद्धान्त अहिंसा ही रहे। मेरा इस बात से कोई विरोध न होगा यदि वर्तमान काग्रेस सस्था जनता के सेवको से बनी नई सस्था का रूप ग्रहण करने के लिए भङ्ग कर दी जाय ताकि नई सस्था के सच्चे जन-सेवक देश के लाखो गाँव मे जाकर जनता की सच्ची सेवा कर सकें और सामाजिक, नैतिक तथा आर्थिक स्वतन्त्रता में उसकी सहायता कर सके। काग्रेस ऐसे कार्यकर्ताओ की सस्था हो जो कई दलो में विभक्त हो सके और प्रत्येक दल का नेता स्वय चुन ले, पश्चात् इन दलो के नेता अपना अखिल भारतीय नेता चुनें जो सभी का नेतृत्व कर सके। प्रत्येक कार्यकर्ता जन-सेवक शुद्ध खद्दर पहनने का अभ्यस्त हो, सत्य वक्ता हो, सभी धर्मो को समान तथा शुद्ध हृदय से देखने वाला हो और जाति-वर्म का भेद-भाव न मानने वाला हो। उसके लिए ग्रामीणो के सुधार के लिए कार्य करना, निरक्षरता-निवारणार्थ प्रचार करना तथा सफाई एव स्वास्थ्य की स्थिति सुधार के लिए कार्य करना आवश्यक है। अखिल भारतीय बुनकर तथा ग्रामोद्योग सघ जैसी रचनात्मक सस्थायें काग्रेस में मिला ली जायें।

बापू के पत्र

ईसा, बुद्ध, मुहम्मद को कब जीते जी जग ने पहिचाना।
तुमको खोने पर ही बापू जग ने मूल्य तुम्हारा जाना।।
सदियाँ बीती किन्तु यहूदी देखो ईसा के हत्यारे।
धरती के कोने कोने में डोल रहे हैं मारे मारे।।

अभी उस दिन मेरे एक मित्र आये और बोले कि आप तो महात्मा जी के अनन्य भक्त हो, उनके पास रहे हो, खूब पुस्तकें लिखी हैं यदि आपके पास बापू के पत्र हो तो मैं उन्हें शीघ्र अच्छी रकम मे बिकवा देने को उत्सुक हूँ। मैं कुछ सोचकर अपने पत्रो को देखने लगा तो उसमे मुझे ५ पत्र महात्मा गांधी के हस्ताक्षरो के कार्ड और लिफाफे मिल गये, फिर यह भी स्मरण आया कि घर के मकान मे उनके कई पत्र रक्खे हुए हैं। मैंने अपने मित्र को बतला दिया, एक सप्ताह के बाद उन्होंने श्री से सौदा तय करके मुझे एक अच्छी रकम मे वह पत्र बिक्री कराने को कहा। जब कुछ विचार-विमर्श का संघर्ष हुआ, पत्र स्वरक्षित रखकर मैंने सोचा कि एलनर्ट एडवर्ड बिग्गम ने लिखा है कि—"एक मटमैले कागज के टुकडे जिस पर कुछ पक्तियाँ अकित थी, एक मनुष्य ने ६ हजार डालर देकर खरीद लिया।" उसका शीर्षक था "टू मेरी इन हैवेन"। डेढ सौ वर्ष पूर्व स्काटलैण्ड मे वह अपनी प्रेमिका की कब्र पर लिपटा दो दो आंसू ढलका रहा था। दूसरे दिन प्रात आयर-शायर की पर्वतीय झोपडी मे उसी राबर्ट बर्न्स ने अपनी दैवी प्रतिभा का प्रकाश उन पक्तियो में भर दिया था। जो युग युगों तक जगमगाता रहेगा। श्रेष्ठ आलोचकोका कथन है कि मानव साहित्य से उच्चतम आदर्शों को सुन्दरतम रूप मे उन पक्तियो में अभिव्यक्त किया गया है। अब क्या आप कहेंगे कि उसने वह सौदा कर मूर्खता की? ससार के सैकडो महान् पुरुषो के पत्र, उनके स्वर्गवास के पश्चात हीरे मोती के समान बिके है। आज भारत

में मुगलकालीन पत्र अपनी वैभवता प्रकट कर चुके है, सचमुच उस बापू के पत्रोका अब मूल्य दिन दूना रात चौगुना होगा। आज वह विश्वात्मा हमारे मध्य नहीहै, वह महर्षि सुकरात और अब्राहम लिंकन की ही भाँति बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय बापू भी बलिदान हुए। हाँ, तो मेरे पास क्या, सभी दीनो को वह स्वय पत्रोत्तर देकर अपनी गभीरता की उदारता दिखला चुके है। उनके पत्र हिन्दी, अंग्रेजी, गुजराती और उर्दू में बहुतो के पास है, किन्तु विदेशियो के पास उन्ही की भाषा में भी पत्रोत्तर दिये गये है। मेरे पास हिन्दी मे मेरे विरोध सम्बन्धी शिवा बावनी और विद्यामदिर के सम्बन्ध में तथा ग्राम उद्योग, ग्राम सुधार और शिक्षा पूर्ण पत्र है। मैंने "ग्रामसुधार नाटक" लिखा था, जो बापू के ही आदेश पर पूर्ण था, इसलिये उन्हे समर्पण किया। किन्तु प्रकाशक से लेखक-पारिश्रमिक लेकर ही मैंने दिया तथा फिल्म कम्पनी से भी रकम ली। इस पर बापू ने लिखा है कि "साहित्य से पैसे पैदा करना उचित बात नही है। और यदि आर्थिक दशा हीन है तो दूसरा धधा करना चाहिये।" उस दिन से मैंने लेखन व्यवसाय को मजदूरी करना ही समझकर यही मजदूरी व्यवसाय बतलाया है।

अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की परीक्षाओ और उसके वैभव का प्रभाव देश पर पड रहा था। लोगो ने मुझसे भी सहायता की आशा की। उस पर मैंने स्पष्ट पत्रो में लिखा कि हिन्दी साहित्य सम्मेलन अभी केवल हिन्दू धर्म की पृष्ठभूमि है और विरोधी धर्मों को हानिप्रद साहित्य भी दिखला कर खिजा रही है। चूकि इन्दौर अधिवेशन के अध्यक्ष महात्मा गाँधी हुए थे, इसलिये उनको मेरी आलोचना खटक गई। उन्होने ऐसी प्रकाशित पुस्तको का परिचय चाहा। मैंने भूषण कवि लिखित "शिवा-बावनी" भेज दी। महात्मा जी ने गम्भीर घोषणा की कि "भले ही शिवा-बावनी वीर रस प्रधान प्राचीन काव्य है किन्तु साम्प्रदायिक भावो को यदि किसी पुस्तक सें उभाड उत्पन्न होता है तो उसे क्यो कोर्स में रक्खा गया है। शीघ्र कोर्स से अलग कर देना चाहिये। इस पत्र-व्यवहार की फाइल बडी सार-गर्भित है। शिवा-बावनी कोर्स से निकाल दी गई, परन्तु मेरे और महात्मा जी के ऊपर सन् १९३५ ई० में हिन्दू-हिन्दी ठेकेदार राष्ट्रीय स्वयसघ के प्रेमियो ने खूब कीचड उछाली।

इसी तरह म० प्रा० के प्रधान मत्री रविशकर जी शुक्ल ने शिक्षा-विकास की योजना विद्यामदिर के नाम से प्रस्तुत की। महात्मा जी ने डा० जाकिर हुसेन और मुझसे भी इस विषय मे पत्र-व्यवहार किया। चूकि मै हिन्दी को राष्ट्र-भाषा मानता था परन्तु मैने उस स्कीम को सार्वजनिक सफल होने का सन्देह वतलाया, नाम का विरोध भी मैने किया और अन्त मे मुस्लिम हित के लिये उसका नाम "मदीने तुल जमात" करार पाया। परन्तु वह स्थाई रूप न ले सकी और अन्त मे दूसरी स्कीमो ने उसका अन्त कर दिया। वह पत्र भी वापू के और मेरे कम आकर्षक नही है। इसी भाँति "ग्राम उद्योग" के सम्वन्ध मे मिशनरी सामान के विषय मे और देश को दूसरो के मुँहताज होने का कारण अपने यहाँ सुई तक न वनाने का सुझाव मैने पेश किया। परन्तु धन-धान्य और कृषि-प्रधान भारत के लिये आज तक वह ग्राम उद्योगो की सफलता अथवा विजय नही प्राप्त हो सकी।

वर्धा आश्रम मे मैने वापू से घटो हरिजन, चर्खा, राष्ट्रभापा और कुछ कुमारियो के तपस्वी जीवन पर अपनी शकाएँ पेश की, परन्तु उन्होने कभी भी "छोटे मुँह वडी वात" कहकर मुझे नही टाला। उनका आश्रम विल्कुल सात्विक योगियो का तपोघन था। सत्य समाज के प्रवर्तक स्वामी सत्यदेव ने वर्धा मे ही एक अधिवेशन वुलाकर मुझे "हिंसा और मानव" विषय पर वोलने को कहा। तो मैने यह सिद्ध किया कि "पूँजीपति ही सच्चे हिंसक होते है।" चाहे वह जैनी हो, चाहे वुद्ध हो। परन्तु उनकी अट्टालिकाएँ मजदूरो के रक्त से अथवा दीनो के लूटखसोट से वनी है। इस पर वापू ने मुझे वहुत कुछ समझाया और वाद में लिखा भी है। मुझे आज वापू के उन विचारो और उनके पत्रो का एक विशेप अभिमान है। मै ही क्या सैकडो व्यक्ति उनके पत्रो को रखकर एक आत्मशान्ति प्राप्त करेगे। उनका दर-वार सवके लिय खुला रहता था और उनकी लेखनी सवके लिये थी। हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिख, पारसी और कई विदेशी स्त्री-पुरुप, वच्चे-वूढे सभी के पास उनकी चिट्ठियाँ मौजूद है। यदि अजायवघर मे वह चिटिठ्याँ रक्खी जावें तो ससार को एक ओज और प्रेरणा मिलेगी। मैने सन् २१ ई० में महात्माजी को लिखा था, कि जिस तरह राम के र ने रावण के र पर, कृष्ण के क ने कस के क पर, मुहम्मद के म ने मक्के के म पर, योशु के य मे यहूदो के य पर, विजय प्राप्त हुई है, उसी भाँति गांधी के ग ने गवर्नमेन्ट के ग पर अवश्य विजय प्राप्त होगी।

इसपर महात्माजी ने हास्य प्रधान उत्तर दिया था। वह पत्र अभी तक मेरा साबरमती आश्रम में होना सुना जाता है। इसकी एक नकल "प्रेम" अखबार वृन्दावन से निकली थी, जिसका उल्लेख राजा महेन्द्र प्रताप करते है। उन्होने कभी कोई ऐसा पत्र नही लिखा जो कि व्यक्ति विशेष के लिये दु खदाई अथवा स्वार्थ-पूर्ण हो। मेरे पास असली पत्र है।

भारत क्या ससार के महान् पुरुषो, पैगम्बर आदि सब का मूल्य मरने के बाद बढा है, और जिस क्रूर सस्था अथवा व्यक्ति विशेष ने ऐसी विभूतियो पर अत्याचारी आचरण किये है वह सदा के लिए पददलित हो गये है। और उनका वश मिट गया तथा अपमानित सागर मे कराह रहा है। रावण और कस के वशो का नामो-निशान नही है। ईसा के हत्यारे यहूदी अपनी जन्मभूमि तक नही बना सके। हजरत इमाम हुशेन ने क्रूर, अत्याचारी यजीद के हाथ से शहादत हासिल की, किन्तु यजीद वश ससार से मिट गया और हजरत इमाम हुशेन के द्वारा इस्लाम ने "शहीद" (बलिदान) होने की निधि प्राप्त की।

महात्मा जी की चिट्ठियो मे केवल तीन बाते रहती थी। जिस भाषा मे कोई लिखता हो उसी भाषा मे वह जवाब देते थे और अपने हाथो से सूक्ष्म सार लिखते थे तथा पत्र-प्रेषक को निरुत्तर न करते थे। क्योकि वह जानते थे कि एक भी चिनगारी बहुत बडे घने जगल में अग्नि प्रज्वलित करा सकती है। आज हजारो आदमी ऐसे है जो हर एक पत्र का खुद अथवा अपने स्टाफ से जवाब दिलवाये। इसीलिये रहीम कवि का यह दोहा—

> दीनहिं सबको लखत है—दीन लखै ना कोय।
> जो रहीम दीनहिं लखै—दीनबन्धु सम होय॥

बताता है कि दीनो की पुकार दीनबन्धु ही सुन सकते है। इससे तो स्पष्ट ही है कि महात्माजी सच्चे दीनबन्धु थे। वह जो कुछ कहते थे, वही करते थे और वही लिखते थे। "हिन्दुस्तानी" भाषा के वह स्वय भक्त थे और फिर उसी में पत्र-व्यवहार भी करते थे। वह जगत् गुरु होकर सदा विद्यार्थी की भांति रहे और बाल, वृद्ध, युवा-नर-नारियो को एक ही दृष्टि से देख कर परमहस वृत्ति के स्तम्भ थे। चूकि ससार के महान् पुरुषो का अन्त किसी भयानक बाधा से ही हुआ है। जैसे रामचन्द्रजी का सरयू मे डूबकर, श्रीकृष्ण का व्याध के बाण से, ईसा का फांसी से,

हजरत इमाम हुसेन का तलवार से, मसूर का सूली से, सुक रात का जहर से और फ्रान्स की देवी जौन का जिन्दा जलाने से। तव भारत के प्राण महात्मा गाँधीका भी वलिदान होना अति स्वाभाविक है। और जिस उद्देश्य के लिये उनका अवतार हुआ था, वह शान्ति, मेल, सत्य, अहिंसा का पथ ऊवड-खावड हो रहा था। इसलिये वलिदान के पश्चात् वह अव पूर्ण होकर रहेगा। यथार्थ मे वह "मानव" पथ के पुजारी अपना सन्देश देकर अन्तर्धान होगये पन्तु उनके यह पत्र मेरे पास अथवा किसी के पास भेजे हुए एक आत्मिक प्रेरणा दे-देकर शान्ति उपासना का अलख जगायेगे। इस अलख-निरजन मे वहजादू निहित है जो कि अनभवी विज्ञ ही प्राप्त कर सकेंगे।

मैंने इन पत्रो को फ्रेम मे लगवाकर वायुमडल को उस प्रेरित शान्ति-प्रेम-मेल, सत्य, अहिंसा के सूत्रो का प्रकाश कराने का साहस किया है। धन्य है, वापू तुम्हारी लीला और तुम्हारे यह पत्र ?

वापू के पत्रों के कुछ नमूने

Rashtra
Bhasha for me
means Hindi
+ Urdu =
Hindustani
my advice will
be amalgamate
the ~~an~~ follow the
larger method
i e of Hindi + Urdu
amalgamation

29. 7. 47
N.D.

Heaven knows what is in store for us. The old order changeth giving place to new. Nothing is settled. Whatever is decided by the C.A. Hindustani with the two scripts remains for you to use.

[illegible]
[illegible]

१८-७-४७
न. दि.

Your letter. You will see what I spoke yesterday on Hindustani. Yes I must work hard, even unto death for the purpose. Let us not lose heart.

१४

बापू की पुस्तकें

बापू पत्रकार तो थे ही, वे हरिजन, नवजीवन और कई अफ्रीकन पत्रोका सम्पादन अग्रेजी, गुजराती, हिन्दी में करते रहे हैं परन्तु उनकी लिखी पुस्तकें भी गुजराती और अग्रेजी में कई है। वैसे हिन्दी, उर्दू आदि में भी आपको उनकी लिखी यथेष्ट पुस्तकें मिल जायेंगी १।–आत्मकथा, २–नीति नाशक मार्ग, ३–गीता बोध, ४–गाँधी-वायसराय पत्र-व्यवहार, ५–देशी राज्य-पथ, ६–धर्म-मथन, ७–रचनात्मक कार्यक्रम, ८— अफ्रीका में सत्याग्रह, ९–यरवदा जेल, १०–पूर्ण स्वराज्य, ११–ईसा, १२–पूर्ण स्वदेशी, १३–असहयोग, १४–स्त्री और समाज, १५–गो-सेवा, १६–वर्ण व्यवस्था, १७–मरु कुज, १८–राष्ट्र वाणी, १९–हृदय-मथन के पाँच दिन, २०–सत्यवीर सुकरात।

पत्रकार बापू

सन् १९०४ ई० में अफ्रीका से आपने अग्रेजी, हिन्दी, तामिल, गुजराती में "इडियन ओपिनियन" अखबारो का सम्पादन करके पत्रकार की शक्ति उस ससार को बतलाई थी, जो कि स्वार्थी युग में अग्रेजो का भक्त हो रहा था। इसी भाँति अहमदाबाद आकर सन् १९१९ ई० के सेप्टेम्बर में आपने गुजराती "नवजीवन" निकाला और अक्टूबर से "यग इडिया" साप्ताहिक निकालकर भारत मे जागृति फूक दी। इसी तरह सन् १९३३ ई० की ११ फरवरी से "हरिजन" साप्ताहिक उनका मुख्य पत्र बन गया। और वह हिंदी, उर्दू, गुजराती, अग्रेजी कई भाषाओ में गम्भीर और आवश्यक लेख लिखकर देशोद्धार में जागृति कराने को समर्थ होता रहा है। इन अहमदाबाद के "नवजीवन" प्रेस की एक ट्रस्ट बन गई है जो कि महात्माजी की साप्ताहिक रचनाओ को ससम्मान प्रकाशित करती रहेगी।

—:•:•:•:—

१५

बापू और गो-रक्षा

नाव पड़ी मझधार हमारी, टूट गई पतवार।
बुझा दिया दीपक वह जिससे, जगमग था संसार।।

वेलग्राम में वर्षों पूर्व हुई गोरक्षा परिषद में गाँधी जी ने अध्यक्ष की हैसियत से निम्नलिखित भाषण दिया था —

"मेरे विचार के अनुसार गोरक्षा का प्रश्न स्वराज्य के प्रश्न से छोटा नही। कई वातो में मैं इसे स्वराज्य के सवाल से भी वडा मानता हूँ। मैं मानता हूँ कि जिस तरह अस्पृश्यता के दोष से मुक्त हुए विना, हिन्दू मुस्लिम एकता साधे विना और खादी प्रचार हुए विना हम स्वराज्य नही ले सकते उसी तरह मुझे कहना चाहिए कि जब तक हम यह नहीं जान लें कि गो-रक्षा किस तरह करनी चाहिए; तव तक स्वराज्य जैसी कोई चीज नही है क्योकि उसमें हिन्दू धर्म की कसौटी है। मैं सनातनी हिन्दू होने का दावा करता हूँ। वहुत से भाइयो को हसी आती होगी कि मुसलमानो में हिलने-मिलने वाला, वाईविल की वातें करनेवाला, अग्रेजों के साथ पानी पीने वाला, मुसलमानो की वनाई हुई रोटी खानेवाला और अछूत की लडकी गोद लेने वाला मैं अपने को सनातनी हिन्दू कहूँ, यह भाषा पर अत्याचार करना ही कहा जावेगा। फिर भी मैं सनातनी हिन्दू कहलाने का दावा करता हूँ और मुझे विश्वास है कि एक समय ऐसा आवेगा कि मेरे मरने के वाद लोग यह स्वीकार करेगे कि गाँधी सनातनी हिन्दू था। क्योकि गोरक्षा मुझे वहुत प्रिय है, वहुत समय हुआ मैंने 'यग इडिया' में 'हिन्दुत्व' पर लेख लिखा था। वह मेरा अत्यन्त विचारपूर्वक लिखा हुआ लेख है। उसमें हिन्दुत्व के लक्षणो का विचार करते हुए, वेदादि को मानना, पुनर्जन्म में विश्वास रखना, गीता, गायत्री आदि में श्रद्धा रखना आदि लक्षण वताये हैं, फिर भी सामान्य हिन्दुओ के लिये तो गोरक्षा

का प्रेम ही हिन्दुत्व का मुख्य लक्षण ठहराया है । कोई पूछेगा कि हिन्दू दस हजार वर्ष पहले क्या करते थे, बडे विद्वान् और पडित कहते है कि वेदादि ग्रन्थो मे गोमेव की बात है । छठे दर्जे में मै पढते हुए सस्कृत पाठशाला मे 'पूर्वे ब्राह्मण गवा मास भक्षयामासु' यह वाक्य पढा था और मैंने मन से पूछा क्या यह सच होगा ? ऐसे वाक्य के बावजूद मै मानता हूँ कि वेद मे ऐसी बात लिखी हो तो शायद उसका अर्थ वह न हो जो हम करते हैं । दूसरी बात भी सम्भव है । मेरे अर्थ के अनुसार अथवा मेरी आत्मा की प्रतीति के अनुसार और मुझे पाडित्य अथवा शास्त्रीय ज्ञान का आधार नही है, आत्मा की प्रतीति का ही आधार है । ऊपर कहे हुए वचनो का दूसरा अर्थ न हो तो ऐसा होना चाहिए कि वे ब्राह्मण गोभक्षण करते थे जो गाय को मार कर फिर जिला सकते थे । मगर ऐसे वाद-विवाद के साथ हिन्दू जनता का कुछ भी सरोकार नही । मैंने वेदादि का अध्ययन नही किया और अधिकतर सस्कृत ग्रन्थ के अनुवाद से ही मै जानता हूँ इसलिए मेरे जैसा प्राकृत मनुष्य ऐसे विषय में क्या बात करे ? मगर मुझे आत्मविश्वास है और इसलिए मैं अपने अनुभव की बात हर जगह करता हूँ । गोरक्षा का अर्थ ढूँढने जावें तो शायद हमें कही भी एक अर्थ न मिले, क्योकि हमारे धर्म में कलमा जैसी सर्वसामान्य कोई चीज नही है और पैगम्बर भी नही । इससे शायद अपना धर्म समझने मे कठिनाई पडती हो, इतने पर उसमें आसानी भी है क्योकि बहुत सी बाते हिन्दू जनता में स्वाभाविक रीति से प्रवेश कर गई है । बालक भी समझता है कि हमें गोरक्षा करनी चाहिए और गोरक्षा न करे तब तक हिन्दू कैसा ?

चम्पारन मे एक जगह गोरक्षा के बारे में अपने विचार सुनाते हुए मैंने कहा था कि जिसे गोरक्षा करनी हो वह यह बात भूल जाए कि गोरक्षा हमें मुसलमानो या ईसाइयो से करानी है । हम आज यह समझते मालूम होते है कि दूसरे धर्म के लोग गोवध या गोमास छोडें इसी मे गोरक्षा की समाप्ति होती है । मुझे इसमें कुछ भी अर्थ दिखाई नही देता । मगर मै यह कहता हूँ कि इससे यह न समझना चाहिये कि कोई गोवध करे तो मुझे पसन्द है या गोवध मैं सहन कर सकता हूँ । मैं यह दावा स्वीकार नही करता कि गोवध से मेरी अपेक्षा किसी दूसरे की आत्मा को अधिक दु ख होता है, मुझे नही लगता कि किसी हिन्दू को गोवध से मुझसे ज्यादा सख्त चोट पहुँचती होगी, मगर मै क्या करूँ मै अपना धर्म पालन करूँ या दूसरे से

कराऊँ। मैं दूसरे को ब्रह्मचर्य का उपदेश दूँ और खुद व्यभिचार करूँ तो मेरे उपदेश का क्या अर्थ ? मैं गो-मांस ग्रहण करूँ और मुसलमान को रोकूँ, यह कैसे हो ? मगर मैं गोवध नही करता हूँ तब भी मुसलमानको गोवध करनेसे रोकना मेरा धर्म नही। गोरक्षा के विषय में मेरे पास पाठ लेना हो तो मेरा पहला पाठ यह है कि मुसलमानो और ईसाइयो को भूल जाओ और अपना धर्म पालन करो। भाई शौकत अली को मैं साफ कहता आया हूँ कि मैं खिलाफत की गाय बचाऊँगा तो मेरी गाय बचेगी। मैंने मुसलमानो के हाथ मे अपनी गरदन कैसे दी है ? गाय की रक्षा के लिए। मुसलमानो से मैं गाय की रक्षा मागता हूँ। इसका अर्थ यह है कि उनके दिल पर असर करके गाय को बचाना चाहता हूँ। जब तक उनमें इतनी समझ न आ जायगी कि हिन्दू भाइयो के खातिर गोवध नही करना चाहिए तब तक मैं धीरज रक्खूँगा। अपने कृत्य से, अपनी खुद की गोरक्षा और गोभक्ति से मै उनका दिल बदल सकूँगा। मेरे नजदीक गोवध और मनुष्यवध दोनो एक ही चीज है। ये दोनो रोकने के लिये उपाय यह है कि हमें अहिंसा सीखनी चाहिए और मारने वाले को प्रेम से अपना लेना चाहिए। प्रेम की परीक्षा तपश्चर्या में ही है और तपस्या का अर्थ है दुख सहन करना। मैं मुसलमानो के लिए जहाँ तक हो सके दुख सहन करने को जो तैयार हुआ उसका कारण स्वराज्य मिलने की छोटी बात तो थी ही, साथ ही गाय को बचाने की बडी बात भी उसम थी। कुरान शरीफ में मेरी समझसे, ऐसा लिखा है कि किसी भी प्राणी की नाहक जान लेना पाप है, मैं मुसलमानो में यह समझने की शक्ति पैदा कर देना चाहता हूँ कि हिन्दुस्तान में हिन्दुओ के साथ रहकर गोवध करना हिन्दुओं का खून करने के बराबर है। क्योंकि कुरान कहता है कि खुदा का हुक्म है कि पडोसी का खून करनेवाले को जन्नत नही है। अर्थात् आज जो मैं मुसलमानो का साथ देता हूँ, ऐसा बर्ताव करता हूँ जिससे उन्हें दुख न हो, उनकी खुशामद करता हूँ तो इसलिए कि इस प्रकार उनकी धर्म-वृत्ति जाग्रत हो, न कि उनके साथ बनियापन या सौदा करने के लिए। अपने कर्त्तव्य-पालन के फल के बारे में मुसलमानो के साथ बात नही करता। उस विषय में तो ईश्वर से ही बात करता हूँ। अपने गीतापाठ से मैं समझता हूँ कि अच्छे काम का बुरा नतीजा कभी नही हो सकता। इनसे मैंने निश्चय किया है कि मुसलमानों के साथ शर्तें किये बिना उनका साथ देना मेरा कर्तव्य है। इसी तरह, अंग्रेजो के बारेमें

आज उनके लिये जितनी गायें कटती है, उतनी मुसलमानो के लिये नही कटती, मगर मै तो उनका भी हृदय हिलाना चाहता हूँ और उन्हे यह समझाकर कि पश्चिम की सभ्यता जिस हद तक विरोधी हो उस हद तक वे उसे भूल जायँ और जब तक वे यहाँ रहे तब तक यहाँ की सभ्यता सीख ले । हम अपने मतलब की अहिंसा भी सीख लेगे और अहिंसा का उतना पालन करेगे तो गोरक्षा हो सकेगी। अग्रेज भी मित्र बनेगे, अग्रेज और मुसलमान दोनो को मै मर कर यानी अपनी कुर्बानी से खरीदना चाहता हूँ, अग्रेज कर्मचारियो मे आज यह घमण्ड है, इसलिये जिस तरह मै मुसलमानो से दीन बनता हूँ उस तरह उनके पास नही बनता । मुसलमान तो आज की तरह गुलाम ही है, इसलिये उनसे सखा-भाव के साथ बात करता हूँ। अग्रेज मेरे इस सखा भाव को नही समझ सकते और लाचार जानकर मेरा तिरस्कार करेगे, इसलिये उनके प्रति मै शान्त रहता हूँ । दान पात्र को और ज्ञान जिज्ञासु को ही देने का नियम है । अग्रेज कर्मचारियो को मै इतना ही कहूँगा कि आपका कृपा भाव मुझे नही चाहिए । आप के साथ मै प्रेममय असहयोग ही करता हूँ । चौरी-चौरा के समय, बम्बई के दगे के समय और अहमदाबाद विरम गाव के हगामे के समय मैंने सत्याग्रह बन्द किया तो उसका यही कारण था कि ऐसा करके मै यह साबित करना चाहता था कि मै कत्ल करके नही बल्कि अग्रेजो को बचाकर यानी प्रेममय व्यवहार से स्वराज्य लेना चाहता हूँ । आज यहाँ से अग्रेजो और मुसलमानो को मार कर या निकाल कर गाय को बचाऊँ तो उसमे मुझे क्या सन्तोष होगा ? मुझे तो सन्तोष तभी होगा जब दुनिया भर में सभी गाय को बचाने लगें । यह शुद्ध अहिंसा के पालन से ही हो सकता है ।

-o-o-o-o-

१६

बापू के हत्यारे

जब वतन के भेड़ियो ने, बागवाँ को खा लिया ।
मानवता के दुश्मनो का, भेद हमने पा लिया ।।

हिन्दुस्तान की आजादी को सुनकर किस जीवको खुशी नही हुई । आजादीका वह सूरज उदय हुआ और अपनी हर्ष भरी किरणे फैलाने ही वाला था कि उसमे ग्रहण लग गया । प्रेम, मिलाप, शान्ति के बदले कपट, स्वार्थ, लोभ का जाल फैला और भयानक अंधेरी छा गई । नये नये मोहरे दिखाई देने लगे । हलके लोग उभर आये, जैसे पानी की चादर पर बुलबुले, सज्जन वजन मे दबकर दुबक रहे । तेज छुरियाँ, बन्दूके, तलवारे,पिस्तौले निकली, जोशकी वृद्धि हुई, जत्थे-जत्थे इकट्ठे हुए, आकाशमडल मे खूनी बादल छा गये, जातीय सभाओ का दल बना, हौसले बढे, मुर्दाजोश जिन्दा हुआ, साम्प्रदायिक अग्नि भडकी । उसमे स्वार्थी, व ईर्ष्यालु पट गये । कोई भी न बचा, अच्छे-अच्छे पढे लिखे और भले लोग नेता, राजा और नौकरशाही के पुर्जे इसमे सहयोग देने लगे । अग्नि बढी, हजारो नरनारी भस्म हो गये, सैकडो निरीह वृद्ध-बच्चे मौत के घाट उतारे गये, शहरो, गाँवो, गली,मुहल्ले सभी में अगारो की बौछार हुई । माँ, बेटी, बहनो के साथ अनाचार किये गये, वह छीनी गईं । सब घोर पापोमें सलग्न हो गये। मरता क्या न करता,जान बचाकर भागे । आबादियो का परिवर्तन होने लगा । सैकडो के शरीरो और उनकी आत्माओ की बरबादी का घरफूंक तमाशा सुहावना दिखने लगा । इन्सानियत खो गई, सदाचार, सभ्यता लोप हो गई, सब धांय धांय हो उठा । धर्म और जातिकी उन्नति ने सबको हिंसक पशु बना दिया । इन्सानियतका नाम धोखेकी टट्टीमें बिल्कुल खाक हो गया । उनके विचार, त्याग, उपकार, शिक्षा सदाचार उड गये । नही मालूम किस नीति ने खूनी नदियां बहाने की साजिश की । भारत की राजधानी दिल्ली तक एक पुराने शासन-वर्ग ने पलायन कर गई । मुस्लिम संस्कृति और मजारात, मकबरे, किले और मस्जिद तक आंसू बहाने लगे और बंद हो गये । सभी चिल्ला उठे —

जो आजादी यही है इससे बेहतर तो गुलामी थी !

यह सब आर्तनाद, चीत्कार सुन और देखकर आज़ादी के देवता, परमहस, मानव-रक्षक महात्मा गाँधी रो पडे। उसने अपने फौलादी हथियार उपवास को ग्रहण किया, भक्त और प्रेमी मचल गये, रूठे बापू को बातूनी जमा-खर्च के सब्ज़बागो से विचलित कर दिया। तपोवन ने उस शस्त्र 'उपवास' को ज्यो ही अलग किया, एक राक्षसी प्रकोप की आँधी उठी और इस तपोधन को मिटाने को बढी, ठीक आज़ादी मिलने के साढे पाँच मास बाद, बापू को खतम कर दिया।

किसने बापू की हत्या की ? एक हिन्दू पढे लिखे ने !! महात्मा जी सच्चे हिन्दू धर्मरक्षक और धर्माभिमानी थे किन्तु उसी जाति ने उनको मिटाया। जो अहिंसा के अवतारी थे वह हिंसा के शिकार हुए। क्या हत्यारे की जाति, समाज, सस्था, पार्टी कभी निष्कलक रहेगी ?

बहाया खून बापू का मिटाने नाम भारत का।
हुकूमत का नही मुजरिम, वह मुजरिम है ज़माने का ॥

यथार्थ मे इसकी ज़िम्मेदारी काँग्रेस और काँग्रेस सरकार ही पर है। काँग्रेस पर जब साम्प्रदायिक बादल मँडराये और सवर्ण हिन्दुओ ने काँग्रेस-मच से तराना गाया। "हिन्दुस्तान हिन्दुओ का, नही किसी के बाप का" तो मुस्लिम लीग ने अलग राजनीति का राग अलापा और पाकिस्तान का नारा लगाया। इसी के प्रायश्चित स्वरूप हिन्दू सभा ने शिवाजी प्रताप के झडे को उठा कर हिन्दू राज्य का प्रलोभन दे महाराष्ट्रीय जाति के सकुचित हृदयो मे राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ को आज से २५ साल पहिले स्थापित किया। जिसके आचार्य गुरुजी गोलवलकर थे। जिन्होने नागपुर हेडक्वार्टर से केवल महाराष्ट्र जाति को इस सघ मे लेकर शिवाजी राज्य के स्थापनार्थ भारतवर्ष के शहर-गाव-देहातो में हिन्दू दल बनाकर मुस्लिम धर्म, मुस्लिम भाषा-भेष, भूषण और मुस्लिम सस्कृति तथा साहित्य तक के घृणा का प्रचार कराकर अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित कर दिया। राष्ट्रीय स्वयं सेवक सघ के सदस्यो की सख्या ५० लाख हो गई, जब कि काग्रेस की केवल ४ लाख ही थे। केन्द्रीय और प्रान्तीय सरकार के उच्च अधिकारी हाईकोर्ट के जज, वकील, डाक्टर, पब्लिक सर्विस कमीशन के सदस्य, रजवाडे, जमीदार आदि सभी

शामिल हो गये। कई कांग्रेसी, हिन्दू महासभा और संघ के कार्य को खुल्लमखुल्ला करके तोड-फोड मारने-पीटने, भगाने में कमरवस्ता हो गये। कांग्रेस देखती रही, उनका साहस वढ गया। उनकी फौज हिन्दू राज्यो और हिन्दू मत्रियो के सहयोग से स्वतत्र हिन्दू राज्य का राग अलापने लगी फिर भी कांग्रेस तमाशा देखती रही। वल्कि अभागे हिन्दुस्तानी मुसलमानो को कोसने और वफादारी की शर्त रखने की ओट मे पाकिस्तान वननेका वह वदला लिया गया कि मुस्लिमें हिन्द कराह उठा और विलख पडा परन्तु कांग्रेस ने इन्हीको साम्प्रदायिक कहकर आस्तीन के साप राष्ट्रीय सघ को दूध देकर वढा दिया। इसी सव सघी और महासभाई गुट ने वापू सरीखे तपस्वी को मिटाने का वातावरण रचकर नाथूराम विनायक गोडसे नामक महाराष्ट्र जाति के वकील और ३६ वर्ष के हिन्दू सभाई व्यक्ति को तैयार किया। जिसका एक पत्र "हिन्दू राष्ट्र" भी निकलता था। जिसकी दर्जी की दूकान पर सभा होती थी, जिसका पिता पो० मा० था और जो सी० पी० मे शिक्षा पाकर खूनी प्रतिज्ञा पर दस्तखत कर चुका था। जिसने हिन्दू सभा की प्रेरणा पर हिन्दू राष्ट्रदल इसीलिये वनाया था। चूकि उसका जन्म पूना के निकट सागली स्टेट में हुआ, किन्तु उसका सम्वन्ध सी० पी० और कुछ रियासतो से विशेष था। उसकी पिस्तौल भी तो वडे रईस की थी। जव उसने वापू का निर्ममतापूर्वक अन्त कर दिया तव कांग्रेस सत्ता को कुछ शर्म आई और फिर उन्होने राष्ट्रीय कर्तव्य को पूरा करने का साहस किया। वापू के मरने से सव रो रहे थे। लेकिन अव रोने से काम नही चलेगा। भारत के नर-नारियो को सोचना होगा कि यह क्या हुआ? गांधीजी की हत्या क्यो हुई? क्या ससार में प्रतिदिन जो हजारो हत्याएँ होती है यह भी वैसी ही है। अथवा उससे भिन्न? महात्मा गांधी ईश्वर प्रेपित युगावतार रहे हैं। अवतारो के जीवन और मरने के पीछे ईश्वर का उद्देश्य रहता है। तो गांधी जी की मृत्यु इष्ट थी? यह तो वही जान सकता है जिन सर्वशक्तिमान् ने उन्हें भेजा और फिर वुला लिया। हम क्या जाने?

भारत का वह उदार, वह महान् धर्म कहां गया! आज तो किसी किस्म का मतभेद, धर्मभेद और विचारभेद मानव समाज को असहनीय हो गया है। मानव-धर्म की विशालता, जाति और मजहव के सकुचित दायरे में घिरकर मृतप्राय हो गई है। अपना सनातन धर्म खोकर भी और तरह तरह के सकीर्ण धर्म अपना

कर भारत में आज हिंसा, द्वेष और असहिष्णुता का बाजार गर्म है। ऐसे धर्महीन युग में गान्धी जी का जन्म लेना आवश्यक था। ससार में गान्धीजी अवतरित हुए और द्वेप, हिंसा और असहिष्णुता के विरोध में उन्होने विश्वव्यापी आवाज बुलन्द की। भयकर घृणा को प्रेम से जीतना चाहा। ऐसी पशुता को मानवता से मिटाना चाहा और सकीर्णता को उदारता द्वारा दूर करना चाहा। ऐसी हालत मे यह स्वाभाविक था कि घृणा, पशुता, सकीर्णता ने अपनी सारी शक्ति लगाकर गाँधीजी का विरोध किया। गोली किसने मारी? गोडसे ने! राष्ट्रीय स्वय सेवक सघ वालो ने? अथवा हिन्दू महासभा वालो ने? नही? बापू की हत्या के दोषी वे नही है। उनको मौत के घाट उतारने वाली गोली उनकी नही थी। वह भारत मे क्रमश पल्लवित, पुष्पित और अकुरित घृणा के वातावरण की गोली थी, जो भारत पर ही नही, प्रत्युत समस्त ससार पर बाज बन कर गिरी। पितृ-हत्या के अपराधी भारत के असख्य नर-नारी है जिन्होने घृणा का वातावरण पैदा करने में भाग लिया था। कहते है कि जब रामचन्द्र जी ने रामेश्वर मे सेतुबध बाधा था, वहाँ गिलहरी को भी एक कण बालू का जलराशि में छोडने का श्रेय मिला था। ठीक उसी प्रकार जिसने इस द्वेप के अग्निकुड मे प्रोत्साहन की जितनी घृताहुति दी है वह इस महापाप का उतना ही भागी है। जिस प्रकार गिलहरी बालू का एक कण समुद्र मे डालकर अनन्तकाल से सेतु बधन की पुण्यभागिनी बनी है। उसी प्रकार हिंसा और अशाति की अग्नि ज्वाला प्रज्वलित करने मे एक बूद भी घृत डालने वाला राष्ट्रपिता की जघन्य हत्या का भागी, अनन्तकाल के लिये बन गया। इस गुरुतम पाप से पीढी-दर-पीढी तक हमारी सन्तानो के मस्तक विश्व के आगे नत रहेगे और वे हमें कोसती रहेंगी। धिक्कारती रहेगी। आज हममें से प्रत्येक को अपना दिल टटोलना है कि क्या हमने अपनी बातो, अपने विचारो और अपने कार्यो द्वारा द्वेप का वातावरण फैलाने मे तनिक भी भाग लिया है? क्या बापू के प्रेम और एकता के अविराम कार्यक्रम को कभी भी उपेक्षा की दृष्टि मे देखा है? अथवा उनकी खिल्ली उडाई है? उपर्युक्त प्रश्न स्वीकारात्मक है तो बापू की हत्या मे हमारा भी हाथ है। अत इस जघन्य कृति के लिये किससे घृणा करे? हममे से एकाध यदि इस भीषण पाप के भागी होने से बच भी गये हो तो उनके लिये भी हत्यारे की प्रति घृणा की गुजाइश कहाँ? घृणा, द्वेप और पक्षपात के

विरुद्ध लडते हुए वापू के प्राण गये । यदि हमारा मन भी उस घृणा का शिकार हुआ, जिसने वापूकी छाती पर गोली चलायी तो उससे यही सिद्ध होगा कि हिंसा, द्वेष और सकीर्णताने प्रेम, सहिष्णुता और उदारता पर विजय पायी । महात्मा ईसा को यहूदियो ने सूली देकर शरीरका ही नाश किया था किन्तु आज उन्हीके शिष्य ध्वसात्मक युद्ध के सामान तैयार कर ईसा की आत्मा को सूली पर चढा रहे है । ठीक उसी प्रकार वापू के नश्वर शरीर को हत्यारे ने अलग किया है । यदि हम भक्तगण भी घृणा और अशान्ति का वातावरण वढाते रहे तो हम उस महान् मनीषी की आत्मा को सदैव गोली चलाकर हनन करते रहेंगे । जिसका कभी भी प्रायश्चित्त नही होगा ।

किंकर्तव्यविमूढ भारत के प्रत्येक नर-नारी पर महान् दायित्व आ पडा है । सव पर इस भीषण पाप के प्रायश्चित्त की जुम्मेवारी है, कलक का टीका धोने की जिम्मेदारी है और ये जिम्मेदारी है कि असत्य, हिंसा, द्वेष और शान्ति के विरुद्ध विजयी होने की । जिस महासमर का सफल सचालन करते हुए वापू महान् योद्धा की तरह वीरगति को प्राप्त हुए । सभी कृतसकल्प हो उस महान् कार्य मे जुट पडे जिसके लिये वापू ने प्राण तक दे दिया । हमको उन सात लाख गाँवो की आर्थिक सामाजिक और राजनैतिक सच्ची आज़ादी जव हासिल होगी कि हम सव जाति और सव धर्मो मे एकता स्थापित करके उनको केवल राष्ट्रधर्म की वेदी पर आरूढ रक्खें ।

जिस विराट् क्रान्ति का श्रीगणेश कर संसार को जागृति पहुँचाते हुए वापू शहीद हो गये,उस कार्य को करनेके लिये लाखो नर-नारियोकी आवश्यकता है, जो मरकर नही, जिन्दा शहीद हो सकें । जो मानवता के महासमुद्र में अपने को डुवा सके, जो दु खित, दलित जनसमूहो को त्राण दे सकें । आज भारत के सम्मुख अग्निपरीक्षा है । उसे आज महा प्रायश्चित्त करना है, ईश्वर भारत को इसके लिये वल दे । यदि हमने फिर भी हठधर्मी के ढोंग रचकर गुप्त मत्रणाएँ की और स्वप्न-वत् व्यक्तिविशेष स्वार्थो पर दृष्टि फेरी तो भारत की आजादी हमेशा को ऐसी कुचली जायेगी कि हमारा नामोनिशां तक खाक में मिल जायेगा ।

सच्चे भारत भक्त सव कुछ छोडकर अव केवल शान्ति के क्षेत्र में ही जुट पडें, वर्ना वापू की आत्मा हम सव पर हत्यारे होने का महापाप लादती रहेगी ।

१७

बापू का वियोग

नदी किनारे धुआ उठत है मै जानू कुछ होय ?
जी के कारण मै जली, कही व्ही न जलता होय ।।

सन् १९४८ के जनवरी की ३० तारीख समार के इतिहास मे अमर हो गई। उसकी सध्या ने बिडला भवन नई दिल्ली से एक हाय की बिजली गिराकर समार को शोक-समुद्र में डाल दिया। पूरे एक दर्जन सच्चे देशभक्त हिन्दू-मुसलमान भी अपने महापुरुष के वियोग में चल बसे। दस लाख मानव ने जमुना के किनारे पर उस विशाल दिव्य पुरुप की चिता में आग लगाई। त्रिवेणी के सगम पर वह फूल प्रवाहित हुए। बापू की अतिम क्रिया में चालीस पचास लाख मानव शरीक हुए। जो कि सिन्ध, सरहद और काश्मीर स्टेट की आबादी से अधिक, यूरोप के बहुत से राज्यो से अधिक आबादी के व्यक्ति शामिल थे। जिनमे धनी, रईस, विद्वान् और धर्माचार्य हिन्दू, मुस्लिम, ईसाई, अग्रेज, पारसी सभी थे। पुण्य त्रिवेणी के सगम पर गीता-कुरान का पाठ हुआ। यह भी आश्चर्य है। बापू का प्यारा भजन "रघुपति राजा राम रहीम" का कीर्तन होता रहा। अर्वाचीन हिन्दू सस्कृति केन्द्र पर कुरान शरीफ का प्रवचन एक नई कीर्ति को प्रकट कर रहा था। धन्य ! बापू तुम्हारी लीला को !

कुछ जगमग जगमग होवत है।
कोई ओढे चदरिया सोवत है।।
बिन मूरत के एक मूरत है—वा सूरत माँ की मूरत है—
टुक देखत है कुछ कह न सकत है।
कुछ जगमग जगमग होवत है।।

जो कहते है बापू खतम हो गये, उसने बापू को पहचाना नही। बापू क्या थे ? एक मानव सन्देश !! एक मानव समदृष्टि !! एक मानव शिक्षा !! एक मानव कर्तव्य !! वह कहाँ रहते थे ? दिलो में—किसके ? जो मानव है—मानवता

समझता है और मानव की पुकार सुनता है। भले हीह मारे कान उनकी प्रेरित वाणी से वञ्चित हो गये हैं, किन्तु हृदय में उनकी आवाज़ मँडरा रही है। हमारी आँखें उनका श्रीमुख देखने से वंचित हो गई है। किन्तु हृदय पर वह तेजोमय हाथो का स्पर्श हो रहा है। वह जिन्दा है और जिन्दा रहेगे, कब तक ? जब तक ससार जीवित है, !

परन्तु हमारा व्यवहार उनके साथ कैसा है ? यह भी हो सकता है कि हम प्यार और मुहब्बत के हाथोसे उनका गला घोट दे—कोई आश्चर्यकी बात नही है। हमने अपने ऋषियो, मुनियो, सूफियो, वलीअल्लाहो के साथ ऐसा ही किया है। यह महात्मा अब केवल हमारी मनोकामना पूरी करने के ढेर रह गये है। या मेला, उत्सव, नाच-गाकर या, पूजा-पाठ करके उनके नाम पर मिठाइयाँ बाँट देने को रख छोडा है। यदि ऐसी ही उनकी शिक्षा की स्मृति संचित की गई तो गोडसे से अधिक हम उनकी सदा हत्या करने मे गर्व करेगे !

बापू नाम है, अच्छे पुरुप बनने का, बापू नाम है जीवन को पवित्र और आदर्श बनाने का, बापू नाम है देश, समाज की सेवा, सुधार करने का, बापू नाम है हरिजन, मुस्लिम से दूध पानी की तरह मिश्रित रहने का। जो इन सिद्धान्तो का भक्त हो और भक्ति दिखलाये वह तो बापू का बेटा है और उनका सच्चा अनुयायी है, और बापू उसके बापू और महा गुरुदेव है। परन्तु जो शान्ति से विचलित हुआ वह उनका परम शत्रु है। उसका बापू से प्रेम करने का अधिकार नही है। वह गोडसे का साथी होगा और उस पर महापाप होगा। क्योकि गोडसे ने एक तो बापू को पहचाना नही, दूसरा अपने तुच्छ स्वार्थ की भेट पर उनको चढा दिया। बापू हमारे लिये एक बडी जिम्मेदारी है, हमारा कर्तव्य है कि हम बापू को यथार्थमे सुख-शान्ति से रक्खें। उनके आदेश, प्रण और उपदेशो पर अमल करे और भावी पीढियो को भी हम ऐसा आदर्श, पथ बतलायें। यही भव्य भारत के लिये क्या, सभ्य मानव जगत् के लिये हमारे बापू का कल्याण-पथ सिद्ध होगा। जाओ बापू ! तुम अपने पूर्व सचित प्रण की प्रतिज्ञानुसार शहीद होकर वीरगति के अमर नक्षत्र बन गये ! परन्तु—

टीका कलक का यह माथे हिन्दुस्ता के।
जायेगा कैसे धोया हाथो मे बेवफा के ॥

हुए नामवर वे निशा कैसे कैसे ।
खिलाता है फूल आस्मा कैसे कैसे ॥

बापू नित्य की भाँति प्रार्थना स्थलपर पहुँचे ही थे कि खाकी वर्दी पहिने एक युवक ने लगभग तीन गज की दूरी से उनपर पिस्तौल से तीन गोलियाँ दागी। गांधीजी जबतक हाथ जोडकर अन्तिम नमस्कार करें तबतक वे कटे वृक्षकी भाँति भूमि पर गिर पडे। एक गोली ठीक सीने पर और दो पेट में लगी थी। वे खून मे लथपथ हो गये थे। भूमि पर गिरते ही उनके नेत्र बन्द हो चुके थे और सिर झुक गया था। अपनी जिन दो पोतियो आभा और मनु गांधी के कन्धो का सहारा ले बापू प्रार्थनास्थल पर पहुँचे थ, उन्होंने बापू को थाम रखा था। आभा और मनु चार-चार आँसू रो रही थी। आक्रमणकारी को पकड लिया गया, चार-पाँच आदमी बापूको उठाकर बिडला-भवन ले गए। उन्हें उनके कमरे में लेजाकर लिटा दिया गया। दरवाज़े बन्द कर लिए गए, डाक्टर बुलाए गए। किन्तु अब डाक्टर भी क्या कर सकते थे? ३० जनवरी को ५-४० पर बापू के प्राण पखेरु उडकर अनन्त में विलीन हो गए! अन्तिम समय में भी उनके मुख पर दया और क्षमा का भाव तथा अखड शान्ति का साम्राज्य था!

प० नेहरू, सरदार पटेल और सभी की आँखो में आसू की धारा बह रही थी। सारी दिल्ली में हवा की तरह बापू के स्वर्गारोहण का शोक समाचार फैल गया। दुख का अपार समुद्र उमड पडा और बिडला-भवन में शोक के बादल छा गये।

रात्रि के एक बजे बापू के शव को यमुना के जल से स्नान कराया गया। स्नान के बाद उन्हे नये खद्दर के वस्त्रो मे आवृत कर नये बिस्तर पर लिटा दिया गया। ज्यो ज्यो रात बीतती जाती थी, शव पीला पडता जाता था, किन्तु मुख पर वही शान्ति और प्रसन्नता के भाव थे। ललाट पर चदन का लाल तिलक और कुकुम लगाया गया था। कमरे में घी का दीपक जल रहा था। रात भर अखण्ड प्रार्थना और गीता पाठ होता रहा। 'रघुपति राघव राजा राम' के पवित्र बोल, उस रात रेडियो द्वारा वायु की तरगो पर समस्त ब्रह्माण्ड में गूंजते रहे। अर्ध रात्रि से ही बिडला भवन के फाटक पर बापू के अन्तिम दर्शन करने के लिये झुण्ड के झुण्ड नर-नारी एकत्रित होने लगे थे। ३१ जनवरी को सवेरे ६ बजे

फाटक खोल दिये गये ताकि लोग बापू के अन्तिम दर्शन कर ले। सवेरे ९-३० पर प० नेहरू के साथ दिल्ली स्थित सभी विदेशी राजदूतो ने अपने-अपने देश के श्रद्धा स्वरूप गुलदस्ते भेट किये। भीड धीरे-धीरे बढती ही गई। जब ीड़ पर काबू पाना कठिन हो गया तो ठीक दस बजे बापू के मृत शरीर को छत पर इस तरह रख दिया गया जिससे फाटक पर एकत्रित जन-समूह मानवता के महान् पुजारी के अन्तिम दर्शन कर सके। ११ बजे बापू का शव बिडला-भावन से निकाला गया और ११-४५ पर शव-यात्रा का जुलूस रवाना हुआ। शोकार्त जुलस का नतृत्व प० नेहरू कर रहे थे। बापू की अर्थी एक रथ पर रखी गई थी। सिर को छोड शेष भाग खद्दर से ढँका हुआ था, कठ मे सूत की माला पडी थी, शव राष्ट्रीय झडो और फूल मालाओ से आवृत था। अर्थी के पास प्रथम पक्ति मे बाई ओर प० नेहरू, दाहिनी ओर सरदार बलदेव सिह, मध्य मे देवदास गाँधी, पीछे बाईं ओर सरदार पटेल और दाहिनी ओर आचार्य कृपलानी बैठे थे। अर्थी के रथ को भारतीय स्थल-जल और हवाई सेना के सैनिक खीच रहे थे। रथ के आगे बापू के परिवार के लोग ओर आश्रमवासी थे, इनके साथ ही साथ राष्ट्रीय नता और प्रमुख नागरिक चल रहे थे। जुलूस के आगे-आगे चार सैनिक-वक्तर-वन्द गाडियाँ मार्ग प्रशस्त करती हुई चल रही थी, उसके बाद गवर्नर जनरल के अगरक्षक अश्वारोही थे। शव-यात्रामें चार हज़ार स्थल सेना, एक हज़ार वायु सेना, एक हज़ार पुलिस सिपाही तथा एक हज़ार नौ-सेना के सैनिक चल रहे थे। जमायतुल उलमा, आग बुझानेवाले कर्मचारी तथा स्वयसेवक शान्ति व्यवस्था मे सलग्न थे, सडक के दोनो ओर दर्शको की अपार भीड थी, सडक पर तो पाँव रखने को भी स्थान न था, मकानो ी छतो पर, वृक्षो पर, तार के खम्भो पर, यहाँ तक कि स्मृतिस्तम्भो पर भी दर्शको का ठट्ट लगा हुआ था। सम्राट पचम जार्ज की मूर्ति से भी दर्शक लटके हुए थे, हर एक के मन में बापू के अन्तिम दर्शन की साध हिलोरे मार रही थी, जुलूस के सामने आते ही लोग उसमे शामिल हो जाते थे। सब ओर से बापू के शव पर पुष्प वर्षा हो रही थी। थोडी-थोडी देर में बापू का शव फूलो मे ढक जाता था। आचार्य कृपलानी और देवदास गाँधी को रास्ते में कई बार शव पर से फूल का ढेर हटाना पडा। जिससे बापू का मुँह बराबर खुला रहे। अर्थी के निकट उड़कर वायु सेनाके तीन वायुयान आकाश में से

पुष्पवृष्टि कर रहे थे। सडक की दोनो ओर की ऊँची-ऊँची अट्टालिकाओ और
छतो पर से अलग फूलो की वर्षा हो रही थी। कभी-कभी तो अर्थी के ऊपर
आकाश में फूलो की पखरियाँ ही पखरियाँ उडती दिखाई देती थी। प० नेहरू
और सरदार वलदेव सिंह मार्ग मे ही रथ से नीचे उतर विलखती नर-नारियो
की भीड के साथ हो गए थे। उनका स्थान मणिवेन पटेल और इन्दिरा गाँधी
ने ले लिया था। इस प्रकार के डेढ पसली के नगे फकीर की शव-यात्रा का शाही
जुलूस ठीक ४-३० वजे यमुना के राजघाट पर पहुँचा, जहाँ दाह सस्कार की व्यवस्था
की गई थी। यमुना तट पर ढाई फुट ऊँचे, वारह फुट लम्वे और वारह फुट चौड़े
चवूतरे पर चिता सजाई गई थी, चिता जलाने के लिए १५ मन चन्दनकी लकडी,
४ मन घी, १ मन नारियल, १५ सेर कपूर और ३ मन अन्य सामग्री इकट्ठी की
गई थी, चिता का चवूतरा तीमारी विभागने सवेरे ही तैयार कर लिया था। चवू-
तरे पर एक परत यमुना की रेत विछाई गई थी, चिता स्थान से लगभग १००
गज की दूरी तक चारो ओर से घेर लिया था। यमुना किनारे सवेरे ही से वहुत
से लोग पहुँच गये थे। जव जुलूस वहाँ पहुँचा तव उस पर किलेके मैदान मे और
यमुना के उस पार के विशाल क्षेत्र मे जैसे जन समुद्र उमड रहा था। गवर्नर
जनरल लार्ड माउण्ट वेटन, लेडी माउण्टवेटन, उनकी दो पुत्रियाँ, वम्वई के गवर्नर
आर्चीवाल्ड नाई, श्रीमती सरोजिनी नायडू, पूर्वी पजाव के गवर्नर श्री चन्दू-
लाल त्रिवेदी, वम्वई के प्रधान मन्त्री श्री वी० जी० खेर, डा० राजेन्द्रप्रसाद और
सरकारी अफसर शव पहुँचने के पहले ही राजघाट पहुँच चुके थे, अर्थी के रथ
ने जैसे ही घेरे मे प्रवेश किया वैसे ही समूह की धक्का-मुक्की मे घेरा टूट गया।
जनता चिता की ओर उमड पडी, दर्जनो व्यक्ति मूर्छित हो गये। जिन्हें रेडक्रास
की गाडियो पर ले जाया गया, फौजी दस्तो ने भीड को रोकने की चेष्टा की, किन्तु
घेरा तो टूट चुका था, स्वय लार्ड माउण्टवेटन ने जाकर सैनिको की भीड को
रोक रखने का आदेश दिया। प० नेहरू अलग जनता से वाहर जाने का आग्रह
कर रहे थे, किन्तु विलखती हुई महिलाओ और आंसू वहाते वच्चो को कौन रोकता
कई वच्चे तो वेहोश हो गये। प० नेहरू, सरदार पटेल और लेडी माउण्टवेटन
वच्चो को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा रहे थे। अन्त में फौजी घुडसवार किसी
प्रकार भीड को चिता स्थान के पास आने से रोक सके। वापू के शव को उनके

आश्रमवासियो ने उठाकर चन्दन-चिता पर रखा। चिता पर रखने के पहले शव पर यमुना जल छिडका गया। उनका सिर उत्तर की ओर था, पुष्प और खादी की मालाएँ बापू के समीप रखी गयी थी। पहली माला चीन के राजदूत डा० लेने रखी, तिरगा झंडा हटाकर शव पर चन्दन की लकडियां रक्खी गईं। पुरोहित प० रामघन शर्माके वैदिक मन्त्रोके उच्चारण के साथ ही गांधीजी के तीसरे पुत्र ने अपने पिताका दाह-सस्कार किया। जिस समय चिता में आग लगाई गई उस समय उपस्थित जनता का शोकवेग न रुक सका, सबकी आँखो से आंसू बहने लगे। स्त्रियाँ तो दहाड मार-मार कर रोने लगी। प० नेहरू और डा० राजेन्द्रप्रसाद बच्चो की भाँति फूट-फूट कर रो रहे थे। पन्तजी अलग सिसक रहे थे, ज्यो ही चिता की ज्वाला अस्तान्मुखी सूर्य की लालिमा में मिली, त्यो ही अपार जनसमूह ने करुणार्द्र हो कहा—महात्मा गाँधी अमर हो गए—पं० नेहरू भीड में इधर उधर घूम रहे थे और ऐसे प्रतीत होते थे, मानो अपनी अवस्था से दस वर्ष और वृद्ध हो गये हो, उनका मुख झुरियो से भरा हुआ था। चिता की लपटें उठी, सारा वायुमण्डल चन्दन और कपूर की सुगन्ध से सुवासित हो उठा, सूर्य भगवान् भी जैसे करुणार्द्र हो अस्ताचल की ओर बढने लगे, धीरे-धीरे सभी लोग आंसू पोछते अपने-अपने घर की ओर चल पड़े। बिडला-भवन के जिस घर से बापू के प्राण पखेरू उडे थे, वहाँ अब केवल एक दीपक जल रहा है।

राजघाट पर शोक-सन्तप्त नेतागण ।
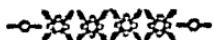
बापू को नोआखाली के किसानो तथा वर्मा के प्रधान मंत्री थाकिननू द्वारा भेंट मे मिले दो टोप या यर्वदा-चक्र ।

१८

बापू के हत्या का मुकद्दमा

किसे मालूम था बापू हमारा छीना जायेगा,
अरे कोई तो बतलाओ, किसी का क्या बिगाड़ा था ?

कट्टर और साम्प्रदायिक हिन्दूसभावादी षड्यन्त्र ने बापू की हत्या की, बम्बई और दिल्ली पुलिस ने छानबीन करके ११ व्यक्तियो को अपराधी समझा; जिसमे दो व्यक्ति फरार हो गये थे और यह ६ पकडे गये थे। फरार भी बाद में पकडे गये।

(१) नाथूराम गोडसे, आयु ३६ वर्ष, हिन्दूराष्ट्र पत्र पूना का सम्पादक, उग्र हिन्दूसभावादी।

(२) नारायण दत्तात्रेय आप्टे, आयु ३४ वर्ष, बी० एस० सी०, बी० टी०, अहमदनगर मे अध्यापक, रायफल क्लब का संस्थापक।

(३) विष्णुरामचन्द्र करकरे, आयु ३७ वर्ष, अहमदनगर के होटल का मालिक, उग्र हिन्दू-दल का सहायक।

(५) शकर किस्तैया—आयु २० वर्ष, पजाब का रहने वाला।

(४) मदनलाल—आयु २० वर्ष, पजाब का रहने वाला।

(५) शकर किस्तैया—आयु २० वर्ष, बाडगे का घरेलू नौकर।

(६) गोपाल विनायक गोडसे—आयु २७ वर्ष, नाथूराम गोडसे का भाई, युद्ध में सैनिक था और पूना के पास रहता था।

(७) दत्तात्रेय सदाशिव परचुरे—आयु ४८ वर्ष, ग्वालियर का डाक्टर, उग्र हिन्दूसभावादी।

(८) दिगम्बर रामचन्द्र बाडगे—आयु ३८ वर्ष, पूना के शस्त्र-भडार का स्वामी।

(९) विनायक दामोदर सावरकर—आयु ६५ वर्ष के लगभग, हिन्दू-महासभा के भूतपूर्व अध्यक्ष, ३० वर्ष कालेपानी और रत्नगिरी जेल मे।

इनमे से वाडगे सरकारी गवाह (भेदिया) वन गया था। इन आठो पर छ अभियोग सिद्ध हुए, वह इस भाँति है। (१) दफा १२० व (साजिश) के अनुसार, (२) विना लाइसेन्स के वम्वईसे दिल्ली हथियार भेजे, (३) जिनमे विस्फोटक चीजे थी, (४) वीस जनवरी को मदनलाल ने पलीता छोडा, (५) वीस जनवरी की साजिश सफल न हुई, (६) नाथूराम गोडसे ने ३० जनवरी को वापू की हत्या की।

इस मुकद्दमे की सुनवाई २७ मई सन् ४८ ई० को सुप्रसिद्ध दिल्ली के लाल किले मे स्पेशल जज मि० आत्माचरण ने प्रारम्भ की और श्री दफ्तरी सरकारी वकील के सहयोग से ६ मास तक कार्रवाई हुई। आरोपपत्र २२ जून ४८ को पेश हुआ और गवाही २४ जून ४८ ई० से प्रारम्भ हुई, जिनमे १४३ गवाहियाँ हुई, जिसमे ८४ दिन लगे। वचाव पक्ष की ओर से ११८ गवाहियाँ हुई जिनमे ८० वस्तुओ का प्रदर्शन और ३५४ सवूती पत्र पेश हुए। इस ऐतिहासिक मुकद्दमे मे १० लाख से अधिक रुपया खर्च हुआ। इसका फैसला १० फरवरी ४९ ई० को २०४ पेज फुलस्केप कागज के टाइप मे हुआ। नाथूराम गोडसे को अन्य ५ अभियोगो मे १९ वर्ष की सजा और हत्या करने पर मृत्यु-दड, इसी भाँति नारायण दत्तात्रेय आप्टे को भी मृत्यु-दड दिया गया। करकरे, गोपाल गोडसे, मदनलाल, परचुरे और शकर किश्तैया को आजन्म कारावास, किन्तु किश्तैया को ७ साल की सजा की सिफारिश की गई है। वीर सावरकर छोड दिये गये और सरकारी गवाह वाडगे को क्षमा दी गई। निर्णय सुनने के वाद इन लोगो ने नारे लगाये और वाद में अपील दायर कर दी गई है। इसमे दैनिक खर्च ३७५०) रु० होता रहा है।

श्री सी० के० दफ्तरी प्रधान सरकारी वकील			१५००)	प्रतिदिन
श्री जे० सी० शाह	”	”	१०००)	”
श्री पेटीगरा	”	”	६५०)	”
श्री ज्वालाप्रसाद	”	”	३५०)	”
श्री व्यावरकर	”	”	२५०)	”

इसके अलावा न्यायालय के कमरे पर ४७०००) रु० और गवाहो के खिलाने में ६०००) खर्च हुआ। शकर किश्तैया के रक्षार्थ श्री हसराज मेहता वकील को ३०) रु० प्रतिदिन दिये गये और अभियुक्तो की रक्षा पर भी व्यय हुआ।

इस षड्यन्त्र के शस्त्रास्त्र तथा विस्फोटक और ग्वालियर की पिस्तौल आदि राष्ट्रीय अजायब घर में रक्खी जावेगी।

इनकी हाईकोर्ट में अपील हुई जहाँ से परचुरे (ग्वालियरवासी) और किश्तैया निर्दोष छोड दिये गये और करकरे, गोपाल गोडसे, मदनलाल को आजीवन कारावास के बदले कुछ दिन की सजाएँ हुईं। गोडसे और आप्टे को मृत्यु-दड ही रहा। प्रिवी कौंसिल और सुप्रीम कोर्ट में भी अपील की गई, किन्तु वहाँ से भी मृत्यु-दड रहा। गवर्नर-जनरल से क्षमा की याचना भी की गई और हजारो आदमियो ने अपने हस्ताक्षर करके इन्हे क्षमा देने की अर्जी दी। गाँधी मिशन के सुविख्यात किशोरीलाल मश्रूवाला ने भी क्षमा कर देने का प्रयत्न किया परन्तु अम्बाला जेल में इन दोनो को १५ नवम्बर को सुबह ८ बजे फाँसी दे दी गई। वहीं इनके शव जेल के भीतर जलाये गये। थत्ते नाम के व्यक्ति ने जेल के सामने सत्याग्रह भी किया था और दो व्यक्ति जेल की दीवार लाँघकर भीतर घुसे थे शायद मिलने अथवा भगा ले जाने के लिये, किन्तु वह भी पकडे गये। उनपर भी मुकद्दमा चला। मरते समय इन लोगो ने राष्ट्रीय सघ का गीत और पाकिस्तान विरोधी नारे लगाये थे, बापू शहीद होकर अमर हो गये, परन्तु कुछ लोग गोडसे, आप्टे को भी अमर रखने का प्रयास कर रहे हैं।

१९

बापू की जीवन-झाँकी

२ अक्तूवर, १८६९–जन्म स्थान–पोरवन्दर काठियावाड, पिता श्री करमचन्द गाँधी, माता–श्रीमती पुतलीवाई

१८७६—शिक्षारम्भ

१८८३—विवाह–कस्तूरवासे

१८८५—पिता का देहान्त

१८८७—काठियावाड राज हाईस्कूल से मैट्रिक पास

१८८७–८८—सावलदास कालेज भावनगर में शिक्षा।

४ सितम्वर, १८८८—शिक्षा के लिए विलायत-यात्रा।

१० जून, १८९१—वैरिस्टरी की परीक्षा में उत्तीर्ण।

७ जुलाई, १८९१—भारत आगमन।

अप्रैल, १८९३—दक्षिण अफ्रीका में वकालत के लिए प्रस्थान।

१८९६—ढाई वर्ष तक नेटाल मे राजनीतिक कार्य, ६ मास के लिए भारत आगमन।

२८ नवम्वर, १८९६—नेटाल के लिए पुन प्रस्थान।

१३ जनवरी, १८९७—जहाज से उतरने पर अपमान।

१० अक्तूवर, १८९९—वोअर युद्ध में गाँधीजी की सेवा।

१९०१—भारत के लिए प्रस्थान।

दिसम्वर, १९०१—भारतीय कांग्रेस के कलकत्ता अधिवेशन में सहयोग।

दिसम्वर, १९०२—अफ्रीका के लिए पुन प्रस्थान।

१ जनवरी १९०३—प्रिटोरिया पहुँचे।

अप्रैल, १९०३—सुप्रीम कोर्ट नियुक्त।

१९०४—इण्डियन ओपीनियन का अंग्रेजी, हिन्दी, तामिल, गुजराती में सम्पादन।

अप्रैल, १९०६—जूलू विद्रोह में सेवाकार्य।

२२ अगस्त, १९०६—प्रवासी भारतीयो के प्रति ट्रान्सवाल सरकार के आर्डिनेन्स के मसविदे का प्रकाशन ।
११ सितम्बर, १९०६—जोहान्सवर्ग मे विरोव सभाएँ ।
१२ सितम्बर, १९०६—कानून स्वीकृत ।
२० अक्तूवर, १९०६—गाँधी और श्री अलीके प्रतिनिवि-मण्डल का लन्दन पहुँचना ।
१ जुलाई, १९०७—काला कानून व्यवहृत वकालत छोड़कर सार्वजनिक सेवा का सकल्प ।
जून, १९०९—इग्लैण्ड के लिए प्रस्थान ।
नवम्बर, १९०९—दक्षिण अफ्रीका की यात्रा और 'हिन्द-स्वराज्य' का प्रणयन ।
३० मई, १९१०—जोहान्सवर्ग में टाल्सटाय फर्म की स्थापना ।
१९१२—युरोपियन वेशभूपा का त्याग ।
जुलाई, १९१४—इग्लैण्ड-यात्रा ।
जनवरी, १९१५—भारत आगमन ।
२५ मई, १९१५—सावरमती में सत्याग्रह आश्रम की स्थापना ।
१९१५-१६—भारत और वर्मा की यात्रा ।
२७ अप्रैल, १९१८—वायसराय की युद्धसमिति मे उपस्थित रगरूटों की भर्ती के लिए १३ जिलो का दौरा ।
सितम्बर, १९१९—गुजराती मासिक 'नव-जीवन' का सम्पादन आरम्भ। वाद में साप्ताहिक रूप में ।
अक्तूवर, १९१९—अग्रेजी साप्ताहिक 'यग इण्डिया' का सम्पादन ।
२४ नवम्वर, १९१९—दिल्ली मे खिलाफत सम्मेलन की अध्यक्षता ।
सितम्वर, १९२०—कांग्रेस के विशेप अधिवेशन में असहयोग का कार्यक्रम स्वीकृत
नवम्वर, १९२०—गुजरात विद्यापीठ की स्थापना ।
दिसम्वर, १९२०—नागपुर कांग्रेस मे कांग्रेस उद्देश्य स्वराज्य स्वीकृत ।
जुलाई, १९२१—विदेशी वस्त्र वहिष्कार ।
१२ जनवरी, १९२४—एपेण्डेसाइटिस का आपरेशन ।
दिसम्वर, १९२४—वेलगाव काग्रेस की अध्यक्षता ।
सितम्वर, १९२५—अखिल भारतीय चर्खा सघ की स्थापना ।

फरवरी, १९३०—सत्याग्रह सचालन के लिए काग्रेस के अधिनायक।

१२ मार्च, १९३०—दण्डी यात्रारम्भ।

फरवरी-मार्च, १९३१—गाँधी-इरविन समझौता।

२९ अगस्त, १९३१—द्वितीय गोलमेज के लिए लन्दन यात्रा।

सितम्बर-दिसम्बर, १९३१—गोलमेज सम्मेलन।

११ फरवरी, १९३३—'हरिजन' साप्ताहिक की स्थापना।

२६ जुलाई, १९३३—सत्याग्रह विघटन।

७ नवम्बर, १९३३—हरिजनो के लिए दौरा।

१४ दिसम्बर, १९३४—अखिल भारतीय ग्रामोद्योग की स्थापना।

३० अप्रैल, १९३६—सेवाग्राम मे निवास का निश्चय।

२२ अक्टूबर, १९३७—वर्धा में शिक्षा-सम्मेलन के अध्यक्ष।

३० दिसम्बर, १९४१—काँग्रेस के नेतृत्व से मुक्ति।

८ अगस्त, १९४२—बम्बई के काँग्रेस अधिवेशन मे 'भारत छोडो' प्रस्ताव पर भाषण

२२ फरवरी १९४४—कस्तूर बा का निधन।

२ अक्तूबर, १९४४—कस्तूरबा स्मारकके लिए १ करोड १० लाखकी थैली भेंट।

१९४५—नेताओ की रिहाई।

२ सितम्बर, १९४६—प्रथम राष्ट्रीय सरकार की स्थापना।

२२ जनवरी, १९४७—विधान परिषद् का श्रीगणेश।

जनवरी, १९४७—गाँधीजी की नोआखाली की ऐतिहासिक पैदल यात्रा।

२५ फरवरी, १९४७—एटली की घोषणा पर गाँधीजी का वक्तव्य।

२६ मार्च, १९४७—लार्ड माउण्टबेटन का गाँधीजी को निमन्त्रण।

१३ मार्च, १९४७—गांधी-जिन्ना द्वारा शान्ति की सयुक्त अपील।

२७ अक्तूबर, १९४७—एशियाई सम्मेलन।

हत्याके प्रयत्न

(१) ८ फरवरी, १९०८ समझौते के विरोध में पठानो द्वारा आक्रमण।

(२) १९३४ ई० में पूना में गांधीजी की ट्रेन उलटने की असफल चेष्टा।

(३) २० जनवरी, १९४८ को बम द्वारा हत्या की असफल चेष्टा।

(४) ३० जनवरी १९४८ को गोली द्वारा घायल और महाप्रयाण।

गांधीजी की जेल यात्राएँ

दक्षिणी अफ्रीका में

१० जनवरी, १९०८—जोहान्सवर्ग में दो मास, ३० जनवरी १९०८ को रिहाई।
१५ अक्तूवर, १९०८—वोलक्रूस्ट और प्रीटोरिया की विभिन्न जेलो में दो मास।
६ नवम्वर, १९१३—पाम फोर्ड मे गिरफ्तारी और जमानत पर रिहाई।
८ नवम्वर, १९१३—स्टेंडर्टन मे गिरफ्तारी और जमानत पर रिहाई।
९ नवम्वर, १९१३—टिकवर्थ मे गिरफ्तार हो डण्डी प्रवास।
११ नवम्वर, १९१३—डण्डी मे नौ मास के लिए कडी कैद की सजा।
१७ नवम्वर, १९१३—वोलक्रस्ट मे तीन मास कडी कैद।
नवम्वर, १९१३—व्लूम कोनटीन से वोलक्रस्ट मे तवादला और १८ दिसम्वर १९१३ को रिहाई।

भारत मे

१७ अप्रैल, १९१७—मोतीहारी मे नोटिस, गिरफ्तारी नही।
१० अप्रैल, १९१९—कोशी मे गिरफ्तारी और वम्वई ले जाकर रिहा।
१० मार्च, १९२२—सावरमती मे राजद्रोह के लिए गिरफ्तार।
१८ मार्च, १९२२—यरवदा मे ६ वर्ष कैद, ७ फरवरी १९२४ को रिहाई।
५ मई, १९३०—गिरफ्तार कर यरवदा जेल में।
४ जनवरी, १९३१—वम्वई मे गिरफ्तार हो यरवदा जेल में, ८ मई १९३३ को रिहाई।
३१ जुलाई, १९३३—यरवदा में नजरवन्दी, ४ अगस्त को रिहाई।
४ अगस्त, १९३३—पूना मे एक वर्ष की सजा, २३ अगस्त १९३३ को रिहाई।
९ अगस्त, १९४२—वम्वई में गिरफ्तार हो पूना के निकट आगाखाँ महल मे नजरवन्द, ६ मई १९४४ को वीमारी के कारण रिहा।

सत्याग्रह आन्दोलन

दक्षिणी अफ्रीका मे

(१) ११ सितम्बर, १९०६—जोहान्सवर्ग मे आरम्भ गाँधीजी तथा दो सौ व्यक्तियो को सजा ।

(२) ३० जनवरी, १९०७ को स्मट्स से समझौता, १६ अगस्त, १९०८ में जोहान्सवर्ग मे स्मट्स की वादाखिलाफी के कारण पुन. सत्याग्रह, गोलीकाण्ड, गिरफ्तारियाँ आदि ।

(३) २८ अक्तूबर, १९१३ न्यू कासेल से वोलक्रस्ट की यात्रा, २१ जनवरी, १९१४ को स्मट्स से पत्र-व्यवहार के वाद स्थगित, १९१४ जुलाई में भारतीयो की विजय ।

भारत में

१९१५, वीरमगांव, गुजरात मे, जकात के विरोध मे, १९१७ में जकात हटी ।

अप्रैल, १९१७—चम्पारन-विहार में नीलहे गोरो के दमन के खिलाफ ६ माह मे शिकायतें दूर हुईं ।

मई, १९१७—वम्वई में भारतीय प्रवास कानून के विरोध में ।

२६ फरवरी, १९१८—अहमदावाद, मजदूरो की हडताल के सम्वन्ध में ।

मार्च, १९१८—खेडा, गुजरात-लगान में छूट के लिए ।

६ अप्रैल, १९१९—रौलेट ऐक्ट सत्याग्रह १८ अगस्त, १९१९ को स्थगित, प्रथम देशव्यापी आन्दोलन ।

१ अगस्त, १९२०—असहयोग आन्दोलन, जिसमें ३० हजार व्यक्तियो की जेल-यात्रा—नवम्वर १९२२ मे स्थगित–द्वितीय देशव्यापी आन्दोलन ।

१९२४, वैकोम ट्रैवनकोर मे—हरिजनो के लिए ।

अगस्त, १९२७—मद्रास मे नील की मूर्ति हटाने के सम्वन्ध मे ।

१२ फरवरी, १९२८—वारडोली, गुजरात–लगानवन्दी आन्दोलन ।

१२ मार्च, १९३०—असहयोग-आन्दोलन, ततीय देशव्यापी आन्दोलन ।

मार्च, १९३१—सिरसी कर्नाटक में लगान मे छूट के लिए ।

३१ दिसम्बर, १९३१—देशव्यापी आन्दोलन, एक वर्ष मे एक लाख व्यक्ति जेल मे, मई १९३३ मे असहयोग-आन्दोलन स्थगित और व्यक्तिगत आन्दोलन शुरू जो जुलाई १९३४ तक चालू रहा ।

अक्तूबर, १९४०—व्यक्तिगत सत्याग्रह लगभग ३० हजार व्यक्ति गिरफ्तार, दिसम्बर १९४१ मे रिहाई । ८ अगस्त, १९४२—'भारत छोडो' आन्दोलन ।

बापू के उपवास

(१) १९१३—दक्षिण अफीका मे अपने आश्रमवासियो के आचरण से क्षुब्ध होकर ।

(२) १९१४ में १४ दिन, उन्ही कारणो से ।

(३) १९१८ (फरवरी) अहमदावाद मे तीन दिन का, मजदूरो की माग की पूर्ति के लिये ।

(४) १९२१ (नवम्बर) ४ दिन का प्रिंस आफ वेल्स के भारत आगमन के समय घटित दगो और अशान्ति के विरोध में ।

(५) १९२२ मे एक मित्र की सुपुत्री के आचरण से क्षुब्ध होकर ।

(६) १९२४ मे हिन्दू मुस्लिम ऐक्य के लिए दिल्ली में २१ दिन का ।

(७) १९२४ मे साबरमती आश्रमवासियो की करतूत पर ७ दिन का ।

(८) १९३३ यरवदा जेल मे अछूतोद्धार के लिये ८ दिन का ।

(९) १९३३ मे ८ मई से आत्मशुद्धि के लिए २१ दिन का अनशन ।

(१०) १९३३ मे अछूतोद्धार के कार्य का अधिकार जेल में ही प्राप्त करने के लिए ।

(११) १९३४ में पुन हरिजनो के लिये ७ दिन का ।

(१२) १९४७ मे राजकोट काण्ड पर व्रत ।

(१३) १९४९ मे आगाखां महल मे २१ दिन का व्रत, जिसने ब्रिटिश साम्राज्य की नीव हिल गयी ।

(१४) १९४७–४ सितम्बर को कलकत्ता में साम्प्रदायिक एकता के लिये ।

(१५) १९४८–१२ जनवरी ने १८ जनवरी तक दिल्ली मे शान्ति और साम्प्रदायिक एकता के लिए ।

२०

बापू को श्रद्धाञ्जलियाँ

श्री प्यारेलाल, सेक्रेटरी बापू

"इन्साफपसन्द दैव हर एक इन्सान को उसका कर्त्तव्य और उसका यश देता है।

जो कोई दुनिया की जिन्दगी की हिफाजत अपने ऊपर लेता है और उसके लिए अपने जीवन की आहुति देता है, वह इस तरह मरकर भी जीता है।

जो कोई सताई हुई दुनिया का पूरा बोझ उठाता है और उसकी हिफाजत करता है, उसे तकलीफे सहना अच्छा ही लगता है, और अगरचे वह इन्सान के ही भाग्य का सामना करता है, फिर भी वह मर कैसे सकता है?

यह देखते हुए कि मौत का उसमे अब कोई अश नही रहा, उस पर मौत का कोई अधिकार नही रहा, उसने अपनी अनन्तता को अपनी छोटी-सी जिन्दगी से खरीद लिया है, और वह मरता नही है।

घटे भर तक तुम उसे ढूंढो, मगर वह तुमको नही मिलेगा।

तब तुम अपनी आँखें ऊपर की ओर उठाओ और उसके ताजपोश अमर चेहरे को देखो।

याद के शिखरो पर, दुनियाँ की गहरी भावनाओ के झरनो में, सब लोगो की आँखो में जहाँ उसके जीवन का प्रकाश सभी पुरानी चीजो पर छाया हुआ है, वहाँ सिर्फ मौत ही मरती है।"

—ए० सी० स्विनबर्न

२९ जनवरी को सारे दिन गांधीजी को इतना ज्यादा काम रहा कि दिन के आखिर में उन्हें खूब थकान मालूम होने लगी। कांग्रेस-विधान के मसविदे की तरफ इशारा करते हुए, जिसे तैयार करने की जिम्मेदारी उन्होंने ली थी, उन्होंने

आभा मे कहा—"मेरा सिर घूम रहा है । फिर भी मुझे इसे पूरा करना ही होगा। मुझे डर है कि रात को देर तक जगना होगा ।"

आखिरकार वे ६। वजे रात को सोने के लिए उठे । एक लडकी ने उन्हें याद दिलाया कि आपने हमेशा की कसरत नही की है । "अच्छा, तुम कहती हो तो मैं कसरत करूँगा"—गाँधीजी ने कहा और वे दोनो लडकियो के कधो पर, जिमनाशियम के पेरेलल-वार की तरह, शरीर को तीन वार उठाने की कसरत करने के लिए वढे ।

हमेशा की तरह काम—

विस्तर मे लेटने के वाद गाँधीजी आम तौर पर अपने हाथ-पाँव और दूसरे अग सेवा करने वालो से दववाते थे—ऐसा करवाने मे उन्हे अपना नही वल्कि सेवा करने वालो की भावनाओ का ही ज्यादा खयाल रहता था । मन से तो उन्होने अपने आपको इस वात से एक अरसे से उदासीन वना लिया था, हालाकि मै जानता हूँ कि उनके शरीर को इन छोटी-मोटी सेवाओ की जरूरत थी । इससे उन्हे दिन भर के कुचल डालने वाले काम के वोझ के वाद मन को हलका करने वाली वातचीत और हँसी-मजाक का थोडा-सा मौका मिलता था । अपने मजाक मे भी वे हिदायते जोड देते थे । गुरुवार की रात को वे आश्रम की एक महिला से वातचीत करने लगे, जो सयोग से मिलने आ गई थी । उन्होने उसकी तन्दुरस्ती अच्छी न होने के कारण उसे डाटा और कहा कि अगर 'रामनाम' तुम्हारे मन-मन्दिर में प्रतिष्ठित होता तो तुम वीमार नही पडती । उन्होने आगे कहा—"लेकिन उसके लिए श्रद्धा की जरूरत है ।"

उसी शाम को प्रार्थना के वाद प्रार्थना-सभा मे आये हुए लोगोमे से एक भाई उनके पास दौडता हुआ आया और कहने लगा कि आप २ फरवरी को वर्धा जा रहे है, इसलिए मुझे अपने हस्ताक्षर दे दीजिए । गाँधीजी ने पूछा—"यह कौन कहता है ?" हस्ताक्षर मागने वाले हठी भाई ने कहा । "अखवारो मे यह छपा है ।" गाँधीजी ने हँसते हुए कहा—"मैने भी गाँधी के वारे में वह खवर देखी है, लेकिन मै नही जानता, वह 'गाधी' कौन है ।"

एक दूसरे आश्रमवासी भाई से वात करते हुए गाधीजी ने वह राय फिर

दोहराई, जो उन्होने प्रार्थना के वाद अपने भाषण मे जाहिर की थी। "मुझे गडवडी के वीच शान्ति, अधेरे मे प्रकाश और निराशा मे आशा पैदा करनी होगी।" वातचीत के दौरान मे "चलती लकडियो" का जिक्र आने पर गाँधीजी ने कहा— "मै लडकियो को अपनी चलती लकडियाँ वनने देता हूँ, लेकिन दरअसल मुझे उनकी जरूरत नही है। मैने लम्बे समय से अपने आपको इस वात का आदी वना लिया है कि किसी वात के लिए किसी पर निर्भर न रहा जाय। लडकियाँ अपना पिता समझकर मेरे पास आती है और मुझे घेर लेती है। मुझे यह अच्छा लगता है। लेकिन सच पूछा जाय तो मै इस वारे में विलकुल उदासीन हूँ।" इस तरह यह छोटी-सी वातचीत तव तक चलती रही जवतक गाँधी जी सो न गये।

३० जनवरी को सुवह गाँधीजी हमेशा की तरह ३।। वजे प्रात स्मरणीय प्रार्थना के लिए उठे। प्रार्थना के वाद वे काम करने वैठे और थोडी देर वाद दूसरी वार थोडी-सी नीद लेने के लिए लेटे।

आठ वजे उनका मालिश का वक्त था। मेरे कमरे मे से गुजरते हुए उन्होने काँग्रेस के नये विधान का मसविदा मुझे दिया, जो देश के लिए उनका आखिरी वसीयतनामा था। इसका कुछ हिस्सा उन्होने पिछली रात को तैयार किया था। मुझसे उन्होने कहा—"इसे पूरी तरह दोहरा लो। इसमे कोई विचार छूट गया हो तो उसे लिख डालो, क्योकि मैने इसे वहुत थकावट की हालत मे लिखा है।"

मालिश के वाद मेरे कमरे मे से निकलते हुए उन्होने पूछा कि मैने उसे पूरा पढ लिया या नही और मुझसे कहा कि नोआखाली के अपने अनुभव और प्रयोग के आधार पर मै इस विषय मे एक टिप्पणी लिखूँ कि मद्रास के सिर पर झूमते हुए अन्न-सकट का किस तरह सामना किया जा सकता है। उन्होने कहा— "वहा का खाद्य-विभाग हिम्मत छोड रहा है। मगर मेरा ख्याल है कि मद्रास ऐसे प्रान्त में, जिसे कुदरत ने नारियल, ताड, मूंगफली और केला इतनी ज्यादा तादाद मे दिये है—कई किस्म की जडो और कन्दो की तो वात ही जाने दो— अगर लोग सिर्फ अपनी खाद्य सामग्री का सम्भाल कर उपयोग करना जाने, तो उन्हें भूखो मरने की जरूरत नही है।" मैने उनकी इच्छा के अनुसार टिप्पणी तैयार करने का वचन दिया। इसके वाद वे नहाने चले गये। जव वे नहाकर लौटे तो उनके वदन पर काफी ताजगी नजर आती थी। पिछली रात की थकावट

मिट गई थी और हमेशा की तरह प्रसन्नता उनके चेहरे पर चमक रही थी। उन्होंने आश्रम की लडकियो को उनकी कमजोर शारीरिक बनावट के लिए डाँटा। जब किसी ने उनसे कहा कि वाहन न मिलने के कारण अमुक जगह नही गई, तो उन्होंने तुरन्त कडाई से कहा—"वह पैदल क्यो न चली गई ?" गाँधीजी की यह कडाई कोरी कडाई ही नही थी, क्योकि, मुझे याद है कि एक बार जब आध्र देश के अपने एक दौरे में हमे ले जानेवाली मोटरो का पेट्रोल खत्म हो गया तो उन्होंने सारे कागजात और लकडी की हलकी नाद लेकर वहा से १२ मील दूर दूसरे स्टेशन तक उनके साथ पैदल जाने के लिए तैयार होने को हममे कहा था।

उनका आखिरी वसीयतनामा—

बगाली लिखने के अपने रोजाना के अभ्यास को पूरा करने के बाद गाँधीजी ने साढे नौ बजे अपना सवेरे का भोजन किया। अपनी पार्टी को तितर-बितर करने के बाद जब वे पूर्वी बगाल के गाँवो मे अपनी "करो या मरो" की प्रतिज्ञा पूरी करने के लिए नगे पावो श्रीरामपुर गये तब से वे नियमित रूप से बगाली भाषा का अभ्यास करते रहे है। जब मै विधान के मसविदे को दोहराने के बाद उनके पास ले गया, तब वे अभी भोजन ही कर रहे थे। उनके भोजन मे ये-ये चीजे शामिल थी। बकरी का दूध, पकाई हुई और कच्ची भाजियाँ, सन्तरे और अदरख का काढा, खट्टे नीबू और 'घृत कुमारी'। उन्होंने अपनी विशेष सतर्कता से मसविदे मे बढाई हुई और बदली हुई बातो को एक-एक करके देखा और पचायती नेताओ की सख्या के बारे मे जो गलती रह गई थी उसे सुधारा।

इसके बाद मैंने गाँधीजी को डा० राजेन्द्रप्रसाद से हुई अपनी मुलाकात की विस्तृत रिपोर्ट दी। डा० राजेन्द्रप्रसाद की तबीयत अच्छी नही थी। इसलिए गाँधीजी ने कल उनके स्वास्थ्य के बारे में पूछने के लिए मुझे उनके पास भेजा था। मैंने गाँधीजी को पूर्व बगाल के बारे मे ताजी से ताजी खबर भी सुनाई, जो मुझे डा० श्यामाप्रसाद मुखर्जी ने कल शाम को उनसे मिलने पर बताई थी। इसपर से नोआखाली के बारे में चर्चा चली। मैंने उनके सामने व्यवस्थित रीति से नोआखाली छोडने की बात रखी। लेकिन गाँधीजी का दृष्टिकोण साफ और मजबूत था। उन्होंने कहा। "जैसे हम कार्यकर्ताओ को 'करना या मरना' है,

उसी तरह हमे अपने लोगो को भी आत्म-सम्मान, इज्जत और मजहवी आजादी के हक को वचाने के लिए 'करने या मरने' को तैयार करना है। हो सकता है कि आखिर मे थोड़े ही लोग वचे , लेकिन कमजोरी से ताकत पैदा करने का इसके सिवा दूसरा कोई रास्ता नही है। क्या हथियारो की लडाई मे भी वलवा करने वाले या कम सिपाहियो की कतारे मार नही दी जाती ? तव अहिंसाकी लड़ाई मे इससे दूसरा कैसे हो सकता है ?" उन्होने आगे कहा—"तुम नोआखाली मे जो कुछ कर रहे हो वही सही रास्ता है। तुमने मौत का डर भगा दिया है और लोगो के दिलो मे अपना स्थान वनाकर उनका प्यार पा लिया है। प्यार और परिश्रम के साथ ज्ञान को जोडना जरूरी है। तुमने यही किया है। अगर तुम अकेले भी अपना काम पूरी तरह और अच्छी तरह करो, तो तुम्ही सवके लिए काफी हो। तुम जानते हो कि यहाँ मुझे तुम्हारी वडी जरूरत है। मुझपर काम का इतना वोझ है और मै दुनिया को वहुत कुछ देना चाहता हूँ, लेकिन तुम्हारे वाहर रहने से मै ऐसा नही कर सकता। लेकिन मैंने अपने आपको इसके लिए कडा वना लिया है। नोआखाली का तुम्हारा काम इससे ज्यादा महत्त्व का है।" इसके वाद उन्होने मुझे वताया कि अगर सरकार अपना फर्ज पूरा करने मे चूके, तो गुण्डो के साथ कैसे निपटना चाहिए।

उनकी अन्तिम चिन्ता—

दोपहर को थोडी झपकी लेने के वाद गाँधी जी श्रीसुधीर घोष से मिले। श्रीघोष ने और-और वातो के अलावा 'लदन टाइम्स' की कतरन और एक अग्रेज दोस्त के खत के कुछ हिस्से पढकर उन्हे सुनाये। इनमें लिखा था कि किस तरह कुछ लोग वडी तपस्या के साथ पडित नेहरू और सरदार पटेल के वीच फूट डालने की कोशिश कर रहे है। वे सरदार पटेल पर फिरका-परस्त होने का दोष लगाते है और पडित नेहरू की तारीफकरने का दिखावा करते है। गाधीजी ने कहा कि वे इस तरह की हलचल से वाकिफ है और उसपर गहराई से विचार कर रहे है। वे वोले—"अपने एक प्रार्थना-सभा के भाषण मे मै पहले ही इसके वारे में कह चुका हूँ, जो 'हरिजन' मे छप गया है। मगर मुझे लगता है कि इसके लिए कुछ और ज्यादा करने की जरूरत है। मै सोच रहा हूँ कि मुझे क्या करना चाहिए।"

सारे दिन लोग लगातार मुलाकात करने के लिए आते रहे। उनमें दिल्ली

के मौलाना लोग भी थे। उन्होने गाँधीजी के वर्धा जाने के बारे मे अपनी सम्मति दे दी। गाँधीजी ने उनसे कहा—"मै सिर्फ थोडे दिनो के लिए ही यहा से गैर-हाजिर रहूँगा और अगर भगवान की कुछ और ही मर्जी न हुई और कोई आकस्मिक घटना न घटी, तो ११ तारीख को वर्धा में स्वर्गीय सेठ जमनालाल की पुण्य-तिथि मनाने के बाद बहुत करके १४वी तारीख तक मै लौट आऊँगा।"

एक बात और थी, जिसके बारे मे मुझे गाँधी जी से सलाह लेनी थी। मैंने उनसे पूछा—"बापू, मुसलमान औरतो मे अपने काम को आसानी से चलाने के लिए अगर ज्यादा नही तो थोडे ही वक्त के लिए मै को नोआखाली ले जाऊ? जरूरी छुट्टी के लिए मैं . से प्रार्थना करूगा।" "खुशी से"—उन्होने जवाब दिया। आखिरी शब्द थे जो मुझे सुनने थे।

साढे चार बजे आभा उनका शाम का खाना लाई। इस धरती पर उनका यह आखिरी भोजन था, जिसमें करीब-करीब सवेरे की ही सब चीजें शामिल थी। उनकी आखिरी बैठक सरदार पटेल के साथ हुई। जिन विषयो पर चर्चा हुई, उनमे से एक कैबिनेट की एकता को तोडने के लिए सरदार के खिलाफ किया जानेवाला गन्दा प्रचार था। गाँधी जी की यह साफ राय थी कि हिन्दुस्तान के इतिहास मे ऐसे नाजुक मौके पर कैबिनेट मे किसी तरह की फूट पैदा होना बडी दु खपूर्ण बात होगी। सरदार से उन्होने कहा—"मैं इसी को अपनी प्रार्थना-सभा के भाषण का विषय बनाऊगा। प्रार्थना के बाद पडित जी मुझसे मिलेगे, मै उनसे भी इसके बारे में चर्चा करूगा।" आगे चलकर उन्होने कहा "अगर जरूरी हुआ, तो मैं २ तारीख को अपना वर्धा जाना मुल्तवी कर दूँगा और तब तक दिल्ली नही छोड़ूगा जब तक दोनो के बीच फूट डालने की कोशिश के इस भूत का पूरी तरह खातमा न कर दूँ।"

प्रार्थना-सभा को—

और इस तरह चर्चा चलती रही। बेचारी आभा अभी भी बाधा देने का साहस नही कर रही थी। इस बात को जानते हुए कि बापू वक्त की पाबन्दी को और खासकर प्रार्थना के बारे मे उसकी पाबन्दी को, कितना महत्व देते है, उसने

आखिर मे निराश होकर उनकी घडी उठाई और जैसे इस बात का इशारा करते हुए उनके सामने रख दी कि प्रार्थना को देर हो रही है ।

प्रार्थना-स्थल की ओर जानेके पहले ज्यो ही गाँधी जी गुसलखाने में जाने के लिए उठे, वे बोले—"अब मुझे आप से अलग होना पडेगा ।" रास्ते में वे उस शाम को अपनी "चलती लकडियो" आभा और मनु के साथ तब तक हसते और मजाक करते रहे, जब तक वे उठकर प्रार्थना-स्थलकी सीढियो पर नही पहुच गये ।

अचानक एक आदमी तेजी से बापू के सामने आकर झुका । मनुने रास्ते मे आनेवाले आदमी का हाथ पकडकर उसे रोकने की कोशिश की । लेकिन उसने जोर से मनु को धक्का दिया, जिससे उसके हाथ की आश्रम-भजनावलि, माला और बापू का पीकदान नीचे गिर गये । ज्यो ही वह बिखरी हुई चीजो को उठानेके लिए झुकी, वह आदमी बापूके सामने खडा हो गया । वह इतना नजदीक खडा था कि पिस्तौल से निकली हुई गोली का खोल बाद मे बापू के कपडो की पर्त मे उलझा हुआ मिला । सात कारतूसो वाली आटोमेटिक पिस्तौल से जल्दी-जल्दी तीन गोलिया छूटी । पहली गोली नाभी से ढाई इच ऊपर और मध्य-रेखा से साढे तीन इच दाहिनी तरफ पेट की दाहिनी बाजू मे लगी । दूसरी गोली मध्य-रेखा से एक इच की दूरी पर दाहिनी तरफ घुसी और तीसरी गोली छाती के दाहिनी तरफ लगी । पहली और दूसरी गोली शरीर को पार कर पीठ पर बाहर निकल आई । तीसरी गोली उनके फेफडेमे ही रुकी रही । पहले बारमें उनका पाव, जो गोली लगनेके वक्त आगे बढ रहा था, नीचे आ गया । दूसरी गोली छोडी गई तब तक वे अपने पावो पर ही खडे थे और उसके बाद वे गिर गये । उनके मुह से आखिरी शब्द "राम-राम" निकले । उनका चेहरा राख की तरह सफेद पड गया । उनके सफेद कपडो पर गहरा सुर्ख धब्बा फैलता हुआ दिखाई पडा । उनके हाथ, जो सभा को नमस्कार करने के लिए उठे थे, धीरे-धीरे नीचे आ गये, एक हाथ आभा के गले मे अपनी स्वाभाविक जगह पर गिरा । उनका लडखडाता हुआ शरीर धीरे-से ढुलक गया । सिर्फ तभी घबडाई हुई मनु और आभा ने महसूस किया कि क्या हो गया है !

मैं दूसरे दिन नोआखाली जाने की अपनी तैयारी पूरी करने के लिए शहर गया था और वहा से हाल में ही लौटा था । प्रार्थना-सभा के मैदान तक बनी हुई पत्थर

की कमानी के नीचे भी मै नही पहुच पाया था कि श्री चन्दवानी सामने मे दौडते हुए आये। उन्होने चिल्लाकर कहा—"डाक्टर को फोन करो। बापू को गोली मार दी गई है।" मै पत्थर की तरह जहा का तहा खडा रह गया, जैसे कोई बुरा सपना देखा हो। मशीन की तरह मैने किसीके द्वारा डाक्टर को फोन करवाया।

अवसान—

हर एक को इस घटना से एक धक्का लगा। डा० राज सभरवाल ने, जो उनके पीछे आई, गाँधी जी के सिर को धीरे से अपनी गोद में रख लिया। उनका कापता हुआ शरीर डाक्टर के सामने औंधा लेटा हुआ था और आंखे अवमुदी थी। हत्यारे को बिडला-भवन के माली ने मजबूती से पकड लिया था। दूसरो ने भी उसका साथ दिया और थोडी खीचतान के बाद उसे काबू में कर लिया गया। बापू का गात और ढीला पडा हुआ शरीर दोस्तो के द्वारा अन्दर ले जाया गया और उस चटाई पर उसे रखा गया, जिसपर बैठकर वे काम किया करते थे। मगर कुछ इलाज करने से पहले ही घडी की आवाज बन्द हो चुकी थी। उन्हें भीतर लाने के बाद उनको जो छोटा चम्मच भर शहद और गरम पानी पिलाया गया, उसे भी वे पूरी तरह निगल न सके। करीब-करीब फौरन ही उनका अवसान हो गया।

डा० सुशीला बहावलपुर गई हुई थी, जहाँ बापू ने उसे सद्भावना मिशन पर भेजा था। डा० भार्गव, जिन्हे बुलावा भेजा था, आये और 'एड्रेलिन' के लिए डा०सुशीला की सकट के समय काम मे आने वाली दवाइयो की सदूक पागल की तरह तलाश करने लगे। मैने उनसे दलील की कि वे उस दवाई को ढूंढने की मेहनत न उठाये, क्योकि गाधी जी ने कई बार हमसे कहा है कि उनकी जान बचाने के लिए भी कोई निषिद्ध दवाई उनको न दी जाय। जैसे-जैसे बरस बीतते गये, उन्हें ज्यादा-ज्यादा विश्वास होता गया कि सिर्फ राम-नाम ही उनकी और दूसरो की सारी बीमारियो को दूर कर सकता है। थोडे ही दिनो पहले अपने उपवास के दरमियान उन्होने यह सवाल पूछकर साइन्स की कमियो के बारे में अपने मत को पक्का कर दिया था कि गीता में जो यह कहा गया है कि 'एकांशेन स्थितो जगत्'—अर्थात उनके एक अश ने सारा ससार टिका हुआ है। उसका क्या मतलब है? रामनाम की सब बीमारियो को दूर करने की शक्ति पर अपने विश्वास के बारे में बोलते हुए एक आह

के साथ गाधी जी ने घनश्यामदासजी से कहा था—"अगर इसे मैं अपने जीते जी साबित नही कर सकता, तो वह मेरी मौत के साथ ही खत्म हो जायगा।" जैसा कि आखिर मे हुआ, डा० सुशीला की सकटकालीन दवाइयो की पेटी मे एड्रेलिन नही मिला, सयोगिक एड्रेलिन की जो एकमात्र शीशी सुशीला ने कभी ली थी वह नोआखाली के काजिरखेल कैम्प मे छूट गई थी। गाधी जी उसकी बहुत कम परवा करते थे।

उनके साथियो मे सबसे पहले सरदार वल्लभभाई पटेल आये। वे गाधी जी के पास बैठे और नाडी देखकर उन्होने खयाल कर लिया कि वह अभी भी धीरे-धीरे चल रही है। डा० जीवराज मेहता कुछ मिनट बाद पहुचे। उन्होने नाडी और आखो की परीक्षा की और उदास और दु खी होकर सिर हिलाया। लडकियाँ सिसक उठी। लेकिन उन्होने तुरन्त दिल को बडा किया और राम-नाम बोलने लगी। मृत शरीर के पास सरदार चट्टान की तरह अचल बैठे थे। उनका चेहरा उदास और पीला पड गया था। इसके बाद पडित नेहरू आये और बापू के कपडो में अपना मुह छिपाकर बच्चे की तरह सिसकने लगे। इसके बाद देवदास और डा० राजेन्द्र प्रसाद आये। तब बापू के पुराने रक्षको मे से बचे हुए श्री जयरामदास, राजकुमारी अमृतकुवर और आचार्य कृपलानी आये। जब कुछ देर बाद लार्ड माउण्टबेटन आये, उस समय बाहर लोगो की भीड इतनी बढ गई थी कि वे बडे मुश्किल से अन्दर आ सके। कडे दिल के योद्धा होने के कारण उन्होने एक पल भी नही गवाया और वे पडित नेहरू तथा मौलाना आजाद साहब को दूसरे कमरे में ले गये और महान् दुर्घटना से पैदा होने वाली समस्याओ पर अपने राजनीतिक दिमाग से विचार करने लगे। एक सुझाव यह रखा गया कि मृत शरीर को मसाला देकर कुछ समय के लिए सुरक्षित रखा जाय। लेकिन इस बारे में गाधी जी के विचार इतने साफ और मजबूत थे कि बीच मे पडना मेरे लिए जरूरी और पवित्र फर्ज हो गया। मैंने उनसे कहा कि बापू मरने के बाद पार्थिव शरीर को पूजने का कडा विरोध करते थे। उन्होने मुझे कई बार कहा था—"अगर तुम मेरे बारे मे ऐसा होने दोगे, तो मैं मौत में भी तुम्हें कोसूंगा। मैं जहा कही मरू, मेरी यह इच्छा है कि बिना किसी दिखावे या झमेले के मेरा दाह-सस्कार किया जाय।" डा० राजेन्द्र-

प्रसाद, श्री जयरामदास और डा० जीवराज मेहता ने मेरी वात का समर्थन किया। इसलिए मृत शरीर को मसाला देकर रखने का विचार छोड दिया गया। बाकी की रात में गीता के श्लोक और सुखमणि साहव के भजन मीठी राग मे गाये जाते रहे, और वाहर दु ख से पागल वने लोगो की भीड दर्शन के लिए कमरे के चारो तरफ इकट्ठी होती रही। आखिरकार मृत शरीर को ऊपर ले जाकर विडला-भवनके छज्जे पर रखना पडा, ताकि सब लोग दर्शन कर सकें।

अलविदा—

सुबह जल्दी ही शरीर को हिंदू विधि के अनुसार नहलाया गया और कमरे के वीच मे फूलो से ढककर रख दिया गया। विदेशी राजदूत सुबह थोडी देर वाद आये और उन्होंने वापू के चरणो पर फूलो की मालाएँ रखकर अपनी मौन श्रद्धांजलि अर्पण की।

अवसान के दो दिन पहले ही गाँधी जी ने कहा था—"मेरे लिए इससे प्यारी चीज क्या हो सकती है कि मै हसते-हसते गोलियो की बौछार का सामना कर सकूँ ?" और मालूम होता है, भगवान ने उन्हें यह वरदान दे दिया।

११ बजे दिन को हमारे सबके अंतिम प्रणाम करने के बाद मृत शरीर अर्थी पर रखा गया। उस समय तक रामदास गाँधी हवाई जहाज मे नागपुर से आ पहुँचे थे। डा० सुशीला नय्यर सबसे आखिर में पहुँची, जब अर्थी रवाना होनेवाली ही थी। उसे इस वात का वडा दु ख था कि वापू के आखिरी समय में वह उनके पास नही रह सकी। लेकिन इस वात के लिए उसने ईश्वर को धन्यवाद दिया कि वह अंतिम दर्शन के समय पहुँच गई।

उस रात डा० सुशीला वार-वार वहुत दु खी होकर चिल्लाती रही—"आखिर मुझे यह सजा क्यो ?" देवदास ने उसे आश्वासन देने की कोशिश की—"यह सजा नही है। वापू के आखिरी मिशन को पूरा करने में जुटे रहना वडे गौरव की वात है—यह वापू का किसी को सौंपा हुआ आखिरी काम था।" यह वापू की एक विशेषता थी कि जिनको उन्होंने वहुत दिया था, उनसे वे ज्यादा से ज्यादा की आशा रखते थे।

जव मै वापू का अपार शान्ति, क्षमा और सहिष्णुता और दया से भरा अचल

और उदास चेहरा ध्यान से देखने लगा, तो मेरे दिमाग मे उस समय से लेकर—जब मैं कालेज के विद्यार्थी के रूप मे चौंधियाने वाले सपनो और उज्ज्वल आशाओ से भरा बापू के पास आकर उनके चरणो मे बैठा था—आज तक के २८ लम्बे बरसो के निकटतम और अटूट सम्बन्ध का पूरा दृश्य बिजली की गति से घूम गया। और वे बरस काम के बोझ से कितने लदे हुए थे !

जो कुछ हुआ था, उसके अर्थ पर मै विचार करने लगा। पहले मै घबराहट महसूस करने लगा, लेकिन बाद में धीरे-धीरे यह पहेली अपने आप सुलझने लगी। उस दिन जब बापू ने एक आदमी को भी अपना फर्ज पूरी और अच्छी तरह अदा करने के बारे मे कहा था, तो मुझे ताज्जुब हुआ था कि आखिर उनके कहने का ठीक-ठीक मतलब क्या है ? उनकी मृत्यु ने उसका जवाब दे दिया। पहले जब गाँधी जी उपवास करते, तो वे दूसरो से देखने और प्रार्थना करने के लिए कहते थे। वे कहा करते थे—"जब तक पिता बच्चो के बीच है, तब तक उन्हे खेलना और खुशी से उछलना-कूदना चाहिए। जब मै चला जाऊँगा, तब आज मै जो कुछ कर रहा हूँ वे सब वही करेगे।" अगर आज आग की जो लपटे देश को निगल जाने की धमकी दे रही है, उन्हें शान्त करना है, और बापूने जो आजादी हमारे लिए जीती है उसका फल हमे भोगना है तो उनकी मौत ने हमे वह रास्ता दिखा दिया है, जिस पर हमे चलना है।

श्री जवाहिरलाल नेहरू

१९१६ का साल था। कोई ३२ साल पहले की बात है, तब मैंने बापू को पहलेपहल देखा था और तब से तो एक पूरा युग बीत गया है। लाजमी तौर पर हम बीते हुए जमाने की तरफ देखते हैं और बेशुमार यादे ताजा हो जाती है। हिन्दुस्तान के इतिहास मे यह कितना अनोखा जमाना रहा है। सारे उतार-चढाव और हार-जीत वाली इस सच्ची कहानी ने वीर-रस के काव्य का अनोखा रूप ले लिया है। हमारी मामूली जिन्दगियो को भी रोमाचक कल्पना के प्रकाश ने छुआ, क्योंकि हम इस जमाने मे जिये और हिन्दुस्तान के महान नाटक मे कम या ज्यादा हमने अपना पार्ट अदा किया।

यह जमाना सारी दुनिया मे लडाइयो, क्रातियो और दिल हिलानेवाली घटनाओ का जमाना रहा है। फिर भी हिन्दुस्तान की घटनाए उनसे बिल्कुल अलग और साफ दिखाई देती है, क्योकि वे बिल्कुल दूसरी ही तरह पर हुई थी। अगर कोई बापू के बारे में काफी जाने बिना इस जमाने का अध्ययन करे, तो उसे ताज्जुब होगा कि हिन्दुस्तान मे यह सब कैसे और क्यो हुआ! इसे समझाना कठिन है। बुद्धि के ठण्डे प्रकाश की मदद से यह समझना भी कठिन है कि हममे से हरएक औरत या मर्द ने जो कुछ किया, वह क्यो किया? कभी-कभी यह होता है कि एक व्यक्ति या एक राष्ट्र किसी भावना या जोश मे बहकर एक खास ढग का काम करता है—कभी-कभी ऊचा और तारीफ के लायक काम करता है, अक्सर नीचा और बुरा काम करता है। लेकिन वह जोश और वह भावना थोडे समय बाद खतम हो जाती है और व्यक्ति जल्दी ही कर्म और अकर्म की अपनी मामूली सतह पर लौट आता है।

इस जमाने मे हिन्दुस्तान के बारे मे सिर्फ यही ताज्जुब की बात नही थी कि सारे देश ने एक ऊची सतह पर काम किया, बल्कि यह भी थी कि उसने इतने लम्बे अरसे मे लगातार कम या ज्यादा उसी सतह पर काम किया। वह सचमुच तारीफ के लायक काम था। इसे तबतक आसानी से समझाया या समझा नही जा सकता, जब तक हम उस अचरज मे डालनेवाले व्यक्ति की तरफ नही देखते जिसने इस जमाने को बनाया है। एक बडी भारी मूर्ति की तरह बापू हिन्दुस्तान के इतिहास की आधी सदी मे पाव फैलाकर खडे है। वह बडी भारी मूर्ति शरीर की नही, बल्कि मन और आत्मा की है।

हम बापू के लिए शोक करते है और अपने को अनाथ महसूस करते है, लेकिन उनके तेजस्वी जीवन को देखते हुए शोक मनाने को है ही क्या? सचमुच दुनिया के इतिहास मे विरले ही मनुष्यो के भाग मे यह बदा होगा कि वे अपने ही जीवन मे इतनी बडी कामयाबी देख सके। बापू हमारी कमजोरियो और त्रुटियो के लिए दु खी थे और हिन्दुस्तान को और ज्यादा ऊचाई पर न ले जाने का उन्हे अफसोस था। उस दु ख और अफसोस को हम आसानी से समझ सकते है। फिर भी कौन कह सकता है कि उनका जीवन असफल रहा? जिस चीज को उन्होने छुआ, उसे कीमती और गुण वाली बना दिया। जो काम उन्होने किया उसका काफी अच्छा नतीजा निकला, हालाकी शायद उतना बडा नही जितने कि वे आशा करते थे।

हम पर यही छाप पडती थी कि वे जो कोई काम हाथ मे लेगे,उसमे सचमुच असफल हो ही नही सकते । गीता के उपदेश के मुताबिक वे फल की इच्छा न रखते हुए स्थितप्रज्ञ की तरह उदासीन रहकर काम करते थे, इसलिए काम का फल उन्हे मिलता ही था । कठिन कामो, हलचलो और एक-सी प्रवृत्तिवाले सामान्य जीवन से भिन्न अनेक साहसो से भरी हुई उनकी लम्बी जिन्दगी मे वेसुरा राग शायद ही कभी सुनाई पडता था । उनकी सारी विविध प्रवृत्तियो मे ज्यादा-ज्यादा मात्रा मे एक रसता आती गई और उनके मुह से निकलने वाला हर एक शब्द और हर एक चेष्टा इसमे ठीक तरह से जम गई थी और इस तरह वेजाने ही वे पूरे कलाकार वन गये, क्योकि उन्होने जीने की कला सीखी थी । यद्यपि जीवन का जो ढग उन्होने अख्तियार किया था वह दुनिया के ढग से वहुत विभिन्न था । इससे यह वात साफ हो गई कि सत्य और अच्छाई की लगन, दूसरी चीजो के अलावा, जीवन मे ऐसी कलात्मकता प्रदान करती है ।

जैसे-जैसे वे वृढे होते गये, उनका शरीर भीतर की शक्तिशाली आत्मा का सिर्फ एक वाहन जैसा दिखाई पडने लगा । उनकी वात सुनते हुए या उनको देखते हुए लोग उनके शरीर को भूल जाते थे और इसलिए वे जहा वैठते थे वह जगह मन्दिर वन जाती थी और वे जहा चलते थे वह पूजाका स्थान वन जाता था ।

उनके अवसान मे भी एक अनोखी भव्यता और कलापूर्णता थी । उन जैसे व्यक्ति के लिए और उनके जैसी जिन्दगी के लिए हर दृष्टिकोण से वह एक योग्य अन्त था । सचमुच उस मृत्यु से उनके जीवन का सवक ऊचा उठ गया । मौत के समय वे अपनी शक्तियो से भरपूर थे और प्रार्थना के वक्त उनकी मृत्यु हुई, जब कि वेशक वे मरना पसन्द करते । दो फिरको के वीच एकता कायम करने के लिए वे शहीद हुए । इसके लिए उन्होने हमेशा काम किया था और खास करके पिछले एक या ज्यादा वरसो से तो उन्होने उसके लिए लगातार मेहनत की थी । वे अचानक मर गये, जिस तरह कि सभी लोग मरना चाहेंगे । उनके वारे में शरीर के घुलते जाने या लम्वे अरसे तक वीमार रहने जैसी कोई वात ही पैदा नही हुई । ज्यादा उम्रमें इन्सानकी याददाश्तमें जो कमी आ जाती है, वह भी उनमे नही आई । तव हम क्यो उनके लिए शोक करें ? हमारी याद में वे उस 'गुरु' की तरह हमेशा रहेंगे जिनके डग अन्त तक फुर्तीले रहे, जिनकी मुस्कान दूसरो के ओठो पर भी

मुस्कान ला देती थी और और जिनकी आखो से हसी छलक पडती थी। उनकी शारीरिक और मानसिक शक्तिया अचूक थी। अपने जीवन और मृत्यु दोनो में उनकी शक्तिया अपनी चरम सीमापर पहुची हुई थी। वे हमारे मन में और जिस युग मे हम रहते है उसके मन में अपनी ऐसी तस्वीर छोड गये है जो कभी मिट नही सकती।

वह तस्वीर कभी धुधली नही होगी। मगर उसकी सिद्धि इससे बहुत ज्यादा है। उन्होने हमारे मन और आत्मा के तत्वो में प्रवेश करके उन्हे बदला है और उनको नये ढग से तैयार किया है। गाँधी-युग की पीढी का तो अन्त हो जायगा, मगर गाधी का वह असर बना रहेगा और हर आनेवाली पीढी को प्रभावित करता रहेगा, क्योकि वह हिन्दुस्तान की आत्मा का एक अग बन गया है। जब इस देश मे हम रूहानी तौर पर कगाल होते जा रहे थे, बापू हमे समृद्ध और बलवान बनाने के लिए हमारे बीच मे आये। और जो ताकत उन्होने हमें दी, वह एक दिन या एक बरस की नही है बल्कि उससे हमारी राष्ट्रीय विरासत मे हमेशा के लिए भारी वृद्धि होगई है।

बापू ने हिन्दुस्तान के लिए, दुनिया के लिए और हम गरीबो के लिए भी बहुत बड़ा काम किया है, और उन्होने उसे आश्चर्यजनक रीति से अच्छा किया है। अब हमारी बारी है कि हम उन्हे या उनकी याद को धोखा न दे, बल्कि अपनी पूरी योग्यता के साथ उनके काम को आगे बढाते रहे और और जो प्रतिज्ञाए हमने इतनी बार ली है उन्हें पूरा करे।

राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद

महात्मा जी के निधन से ससार को और भारत को विशेष रूपसे क्षति पहुँची है, जिसकी कल्पना नही है। काग्रेसजनो को महात्माजी के न केवल जीवन वरन् उनकी मृत्यु से बहुत कुछ सीखना है। गाधीजी ने सदा न्याय के लिए ही सघर्ष किया है और उन्होने उसके उद्देश्यो की पूर्ति के लिये अपने प्राण भी उत्सर्ग कर दिये। महात्मा जी का यह उद्देश्य साम्प्रदायिकता का अत और शान्ति था, जिसपर देश का भविष्य निर्भर है। हमे अब समस्त काग्रेसजनो और जनता मे साम्प्रदायिकतके अत के लिये सामूहिक प्रयत्न करने और देश को इस बुराई से बचाने की चेष्टा करनी चाहिए।

मीराबहन

जब मैंने बापू की मृत्यु की खबर सुनी, तो मेरे अन्तर की गहराई की आत्मा को बन्दी बनानेवाले दरवाजे खुले और बापू की आत्मा ने उसमे प्रवेश किया। उस पल से शाश्वतता की नई भावना मुझमे रहने लगी है।

यह सच है कि प्रिय बापू जीते-जागते रूप मे हमारे बीच नही रहे, लेकिन उनकी पवित्र आत्मा तो आज हमारे ज्यादा नजदीक है। एक समय बापू ने मुझसे कहा था—"जब मेरा यह शरीर नही रहेगा, तब भी हम एक दूसरे से जुदा नही होगे। तब मै तुम्हारे ज्यादा नजदीक आ जाऊगा। यह शरीर तो बाधा रूप है।" ये शब्द मैंने श्रद्धा से सुने थे। अब मैं अपने अनुभव से बापू के उन शब्दो का दिव्य सत्य जान पाई हूँ।

क्या बापू को आगे होनेवाली घटना का ज्ञान था? मेरे दिल्ली से ऋषीकेश जाने से पहले, दिसम्बर महीने की एक शाम को बापू से मैंने कहा था—"बापू जब मार्च मे गोशाला तैयार हो जायगी और सारा काम व्यवस्थित हो जायगा, तब क्या आप गोशाला का उद्घाटन करने और हिन्दुस्तान की गरीब दु खी गाय को आशीर्वाद देने का समय निकाल सकेंगे?" बापू ने जवाब दिया—"मेरे आने का खयाल मत रखो" और फिर मानो अपने आपसे कुछ कह रहे हो इस तरह उन्होंने आगे कहा—"मुर्दे से किसी तरह की मदद की आशा रखने से क्या फायदा होगा?" ये शब्द इतने भयानक थे कि मैंने किसी के सामने उन्हे नही दोहराया और ईश्वर की प्रार्थना के साथ उन्हें अपने दिल में रख लिया। उपवास आया और चला गया और मुझे आशा हो गई कि बापू के उन शब्दो का मतलब उपवास के साथ खतम हो गया। लेकिन वे शब्द तो भविष्यवाणी की तरह थे और वह भविष्यवाणी पूरी हुई।

उस विधिनिर्मित शाम को जब मैं ध्यान मे अचल बन कर बैठी थी, मैंने सारी दुनिया में से गुजरनेवाली सताप की कपकपी का अनुभव किया। मनुष्य-जाति की मुक्ति के लिए एक बार फिर अवतार का खून बहा और धरती इस भयानक पाप के डर और बोझ से कराह उठी।

वह पाप एक आदमी का नही है। वह युग-युग में सारी दुनिया को ढक लेने वाला पाप है। उसे एकमात्र ईश्वर के भक्तो का बलिदान ही रोक सकता है।

अब बापू हमारे लिए जो काम छोड गये है, उसे पूरा करने में हमें जमीन-आसमान एक कर देने चाहिए। बापू हम सब के लिए—हर मर्द, औरत और बच्चे के लिए—जिये और मरे। वे लगातार काम करते-करते जिये और इसलिए शहीद की मौत मरे कि हम नफरत, लालच, हिंसा और झूठे रास्ते से पीछे लौटे। अगर हमें अपने पापो का प्रायश्चित्त करना है और बापू के पवित्र मकसद को आगे बढाने मे हिस्सा लेना है, तो हर तरह की साम्प्रदायिकता और दूसरी बहुत-सी बाते खतम होनी चाहिएँ। काला बाजार, रिश्वतखोरी, तरफदारी, आपसी जलन और उसी तरह हिंसा और असत्य के दूसरे काले रूप जडमूल से मिट जाने चाहिएँ। इन सब के साथ मजबूती से और बिना हिचकिचाहट के काम लेना होगा। बापू प्रेम और दया के सागर थे, लेकिन बुराई के खिलाफ लडने मे वे बडे कठोर थे।

बापू ने भीतरी बुराई पर विजय पा ली थी, इसीलिए बाहर की बुराईके सामने वे लड सके थे। भगवान हमें इस तरह पवित्र बनायें कि हम अपने सामने पडे हुए बडे भारी काम के लायक बन सकें।

जयप्रकाश नारायण

अब हमें अपने समस्त मतभेदोको तथा अलगावकी नीतिका चाहे वह भाषाके आधार पर प्रान्तोके निर्माण, साम्प्रदायिक सघटनो अथवा विशेष सुविधाओंकी मागके रूपमे हो, परित्याग कर दें और महात्मा गाधीके सिद्धान्तोके अनुसार चलना चाहिए।

गाधी जी हमारे प्रकाश-स्तम्भ थे और हमारी पतित मानवता के निम्न स्तरको उपर उठाने के लिए उत्तरदायी थी। यह बडे दु खकी बात है कि हमने अपने उस बडे नेता को ऐसे समय मे खो दिया जब उसकी हमे विशेष आवश्यकता थी। उनकी इस असामयिक मृत्युसे हमारे देश की ही नही प्रत्युत समस्त विश्वकी क्षति हुई है। सबसे अधिक दु खकी बात यह है कि उनकी हत्या एक हिन्दू द्वारा की गयी है, जो उन्हीके सम्प्रदायका एक व्यक्ति है। इसका देशकी साम्प्रदायिक भावनासे कोई सम्बन्ध नही है। यह राजो, जमीदारो, पूंजीपतियो तथा प्रतिक्रियावादियो के कुकृत्यका परिणाम है, जो अंग्रेजो से फूट डालो और

शासन करो की नीति सौपने के वाद अव उसका प्रयोग स्वतन्त्र भारतके नवजात राज्यके विरुद्ध करना चाहते है ।

श्री जे० सी० कुमारप्पा

अशोक ने अपने राज्य मे वौद्ध तत्वज्ञान के प्रचार के लिए और खास-खास मौको की यादगार के सिलसिले मे वहुत-से स्तम्भ खडे किये थे । उसी की नकल मे गाँधी जी के वहुत से प्रशसक ऐसे ही स्तम्भ कन्याकुमारी से काश्मीर तक खडे करने की वात सोचते है । उनका सुझाव है कि इन स्तम्भो मे तीन तरफ गाँधीजी के लेख या वाणी के नमूने रहेगे और एक तरफ गाँधी जी का चित्र वना रहेगा । ऐसे एक-एक स्तम्भ की कीमत रु० ३०,००० आकी जाती है । इस सुझाव के पीछे जो भावना है उसकी हम कद्र करते है । आम तौर पर महापुरुषो की यादगार मनाने का जो तरीका है उसी ढर्रे पर यह भी है । इस योजना मे खटकने वाली वात सिर्फ इतनी ही है कि गाँधी जी के वारे मे यह सोची जा रही है । और सव तरह से—खर्चे को छोडकर—यह स्कीम काविले तारीफ है ।

जीवन-स्तम्भ चाहिये—

रुपया चाहे गाँधीजी जैसा चाहते थे, वैसे कामो को चलाने मे ही क्यो न लगाया जाय, पर यादगार कायम करने के लिए ऐसे मौके पर फन्ड इकट्ठा करने की वात हमे नही जचती । हमारी सरकार जनप्रिय सरकार है, इसलिए जो भी योजनाएँ जनता सामने रक्खेगी सरकार उनको चला सकती है । निजी तौर पर फन्ड इकट्ठा करना एक जवरदस्त काम है और वड़ी भारी जिम्मेदारी है । जव सरकार उसी काम को अपनी राजस्व की राह से वडी आसानी से कर के धन जुटा सकती है, तो उसकी जरूरत पैदा नही होनी चाहिये । फन्ड इकट्ठा करने मे जितनी ताकत खर्च होगी उसे रचनात्मक कामो मे लगाना कही अधिक अच्छा होगा । गाँधीजी का कोई भी कार्यक्रम पैसे की कमी से कभी रुका नही रहा है । वस एक ही वडी कमी रही है और वह है कार्यकर्ताओ की । इसलिए सवसे वडा फन्ड जो इकट्ठा किया जा सकता है वह है मानवीय व्यक्तित्व का, इन्सानी शख्सियत का, और जव ऐसा फन्ड इकट्ठा हो जायगा, जव लगन और त्याग वाले लोग सामने आयेंगे, तव हमारे पास

जीते जागते 'गांधीजी-स्तम्भ' होंगे। ऐसे स्तम्भ जमीन के कोने-कोने में पहुँच सकेंगे और घूम-घूम कर गाँधीजी की सीखों की घोषणा करेंगे। एक जगह गढे रहकर दो-चार ही मनुष्यों को—चाहे वे पत्थर में ही खुदे क्यों न हों—नहीं बतायेंगे। ये चलते फिरते गांधी-स्तम्भ ऐसी रोशनी फैलायेंगे जो गांधीजी की विशेषता थी और ऐसा करने में वे उन पत्थर की मूरतों से कहीं ज्यादा गाँधीजी की नुमाइन्दगी करेंगे।

इसलिए हमारी कोशिशें, आमतौर पर अमल किये जानेवाले चालू ढर्रों पर ही नहीं लगानी चाहिये, बल्कि हमें नये रास्ते ढूंढ निकालने चाहियें और इन्सानी शख्सियतों को गाँधी जी की सच्ची यादगार के रूप में खड़ा करना चाहिये।

गाँधीजी की सच्ची यादगार यही होगी कि मानवीय व्यक्तित्व की इस जबरदस्त ताकत को साथ लेकर उसे ऐसे रास्तों पर लगाना, जिससे दुनिया में अमन और चैन कायम हो।

ऐसा करने के लिए पैसे के फण्ड कितने ही काम के क्यों न हों, पर वह बिल्कुल जरूरी कभी नहीं है। जरूरत है तो ऐसे मर्द और औरतों की जो गाँधीजी के सिखाये सच्चाई और अहिंसा के आदर्शों से सराबोर हों और दुनियाँ में जाकर इन सिद्धान्तों का सिर्फ जबान से ही नहीं बल्कि अपनी जिन्दगी और चलन में प्रचार करें। ऐसे ही गांधी-स्तम्भ हमारे स्वर्गीय नेता की यादगार को कायम बनाये रखने में कारगर होंगे।

अन्य सुझाव—

मृत व्यक्तियों की यादगार मनाने के बहुत से तरीकों का रिवाज पड़ गया है। अधिकतर ये यादगारें प्रबन्धकों के मनमुताबिक शक्लें अख्तियार करती हैं। स्वभावतः बहुत से लोग गाँधीजी की यादगारें खड़ी करना चाहते हैं, लेकिन गड़बड़ इसी में है कि ये यादगारें किस किस्म की बनें? लोग उनके नाम को अमर बनाने के लिए भौगोलिक स्थलों को उनके नाम पर पुकारने की बात उठाते हैं। जैसे माउण्ट एवरेस्ट को माउण्ट गांधी का नाम दे देना या शहरों के नाम बदल कर गाँधीनगर, गांधीपुर, गाँधी ग्राम, आदि कर देना है। अपना काम निकालने वाले इस मौके से फायदा उठाकर ऐसी चीज बनवाना चाहते हैं, जिनसे उनका अपना

उल्लू सीधा होता हो। क्लब के खिलाडियो की तरफ से तजवीज आयी है कि गाधीजी की यादगार मे एक खेल का मैदान बनाया जाय। कुछ लोग जो और तटस्थ से देखते है डाक के टिकटो पर गाँधीजी का तस्वीर छपवाने को कहते है। दूसरे कुछ मन्दिर बनाने का सुझाव पेश करते है।

गाधीजी जैसे व्यक्ति के लिए कोई दुनियावी यादगार खडी करने की जरूरत नही है। जो लोग यादगारे बनाने की ख्वाहिश रखते है, उनके सामने यह साफ हो जाना चाहिए कि इन्सानमात्र के लिए गाँधीजी की खास देन क्या रही है? और जो यादगार उस देन को कायम रखने का काम करे, वही सही ढग की यादगार कहलायेगी। अगर कोई एक चीज गाँधीजी के नाप के पैमानो का पथ-प्रदर्शन करती थी, तो वह थी आदमी के व्यक्तित्व के विकास पर वातावरण का प्रभाव। सच्चाई और अहिंसा उनके जीवन की जडे थी। इसलिए ऐसी कोई भी यादगार, जो उनकी याद प्रतिष्ठित करना चाहती है, उनका इन दोनो अगो से सीधा सम्बन्ध होना चाहिये। इसलिये हमे यकीन है कि गाँधीजी की याद कायम रखने का जबरदस्त जोश कोई वाहयात सूरत धारण नही करेगा, जो बिल्कुल बेमौका हो बलिक ऐसा रूप लेगा जो गाधीजी को सबसे अधिक पसन्द होता।

साम्प्रदायिकता मिटाएं—

कमेटी वगैरह बनाने मे भी साम्प्रदायिक विष, जो आखिरकार गाँधीजी के खून का सबब हुआ, घुसने न देना चाहिये। गाँधीजी ने दुहरा-दुहराकर कहा था कि जनता के कामो मे लोगो का चुनाव उनकी योग्यता पर ही होना चाहिये। हमारा सारा सार्वजनिक जीवन ही साम्प्रदायिक नुमाइन्दगी की वजह से भद्दा बन गया है। यहाँ तक कि हमारी कांग्रेसी सरकारे भी उसको प्रदर्शित करती है। कोई भी सिर्फ इसलिए ही कभी मन्त्री नही बनाया जाना चाहिये कि वह किसी खास जाति का है। यह आशा रखनी चाहिये कि गाँधीजी की यादगार बनाने के लिए जो कमेटियाँ कायम की जायेंगी कम से कम वे इस फिरकेदाराना धब्बे से बरी होगी।

इसके पूर्व कि उनके शरीर की हरारत भी गायब हुई हो, उनके शव को हथियारबन्द मोटरो, तोप ढोने वाली गाडियो, हवाई जहाजो, सिपाहियों और नाविकों के

साथ सरकार की तरफ से अन्तिम-यात्रा का प्रबन्ध और बन्दूको से सलामी दागने का कार्यक्रम निहित हो गया था। ऐसा मालूम होता था मानो व्यवस्थित हिंसा, जिसे खत्म करना उनकी जिन्दगी का मक्सद रहा था, अपने जानी दुश्मन के मरने पर खुशी मना रही हो। क्या हमने गाँधीजीका क, ख, ग, भी नही समझा है? हम उनकी याद की कद्र उनके सिद्धान्तो पर अमल करके ही कर सकते हैं।

डा० श्यामप्रसाद मुखर्जी

जिस ज्योति ने हमारी मातृभूमि को और सारे विश्व को अधकार में प्रकाश दिया, दुर्भाग्यवश वह एकाएक विलीन हो गई। गाँधीजी का निधन भारत के ऊपर भयकर आघात है। जिस महापुरुष ने भारत को आजाद किया, स्वावलम्बी बनाया, जो सबका मित्र और किसी का शत्रु न था और जिसे करोडो लोग स्नेह और आदर की दृष्टि से देखते थे, उसका अन्त एक हत्यारे के द्वारा हो और वह भी उसी जाति और देश के व्यक्ति द्वारा, यह सबसे बडी शर्म और दुर्भाग्य की बात है। गाधीजी वह पुरुष थे जिसका प्रभाव किसी काल में क्षीण नही होता। हत्यारे की गोलियोने न केवल उनके नश्वर देह का छेदन किया है बल्कि हिन्दुत्व अथवा हिन्द के हृदय का छेदन किया है। देश इस सकट से तभी मुक्त हो सकता है जब कि इस प्रकार के कुकृत्यो के कारणो को समूल नष्ट कर दे। हर समझदार व्यक्ति और राजनीतिक दल को इस कुकृत्य की निन्दा करनी चाहिये।

आचार्य कृपलानी

महात्मा गाधी शरीर के रूप मे हमारे साथ नही है, किन्तु यदि हम उनके बताए हुए मार्ग पर चले और उस प्रकार के कार्य करें जिनने हमारे मार्ग को उन्होने प्रकाशित कर दिया है, तो वे सदैव आत्मा के रूप में हमारे साथ रहेगे।

डा० पट्टाभि सीतारामैय्या

महात्मा गाधी ने अपना काम खत्म कर लिया है। हमें यह मान लेना चाहिए कि जो अवतार अपना काम समाप्त कर लेता है, उनका इहलोक में कोई

स्थान नही रहता। कलियुग मे वे १०वे अवतार थे। कम से-कम दो उपनिवेशो मे तो धर्म का राज्य स्थापित करना चाहते थे।

नि.सन्देह विगत जून से उनका यह महसूस करना सकारण था कि अव उनकी कोई जरूरत नही रही। वर्तमान समाज और उनके अर्थात् दोनो के वीच काफी चौडी खाई वन ही चुकी थी। उनकी सवसे अन्तिम नसीहत यह थी कि भारत अभी तक आजाद नही हुआ, वह तो सिर्फ आत्म-निर्भर हुआ है। हिन्दुओ और मुसलमानोको एक करने का महान कार्य अभी तक अधूरा है, हमे क्या यह आशा नही करनी चाहिये?

राजकुमारी अमृतकौर

आज हम गाधी जी को खोकर अनाथ हो गये है। वे अपने असीम प्रेम से उस क्रोध की प्यास को वुझाने का प्रयत्न कर रहे थे, जो वहुत से नर-पशुओ मे फैला हुआ था। एक पागल मनुष्य के क्रोध के कारण उनका दुर्वल शरीर हमारे वीच नही रहा परन्तु उनकी शक्ति का कोई अन्त नही कर सकता। गाधी जी हमारे लिये सदा अमर रहेगे।

इस शोक के समय हमे शपथ लेनी चाहिये कि हम अपने रास्ते से न चूकें। हम मे सत्य तथा प्रेम के पथ पर चलने की शक्ति होनी चाहिये। भगवान हम पर दया करें और वापू के प्रति सच्चा वनने की शक्ति दें, जिससे हम उनके सिद्धान्तो पर भारत का निर्माण कर सके।

श्रीमती सरोजनी नायडू

कैसा दु खान्त नाटक देखते-देखते घट गया! खप्पर हाथ मे लिये, जो विकराल दानवी सूरतें एकाएक रचमच पर आई। वे अन्त मे हमारी सर्वोत्तम विभूति की वलि लेकर ही रही।

आज हम स्तव्ध है, मूक है, वक्ष ऊचा उठाते हुए भी नतशिर है। तिल-तिल जल रहे है। यदि सहस्रो, करोडो, नहीं-नहीं अनगिनत करुण राग और स्वर एक साथ वज उठें, तो भी उस घनीभूत व्यथा को व्यक्त नहीं कर सकते। परिताप के इन आसुओ की निरन्तर नदिया वहकर भी उस जघन्य कार्य का

प्रायश्चित नही कर सकती। सदिया बीत जायँगी, युग-परिवर्तन होगे, पर क्या आने वाली सन्ताने हमें क्षमा करेगी ?

सर तेजबहादुर सप्रू

इस दुर्घटना की खबर सुनकर मैं सन्न रह गया हूँ। सब से नेक पुरुष, सबसे बडा देशभक्त और भारतीय स्वतन्त्रता का जनक आज भारतीय ऐक्य के लिये बलिदान हो गया। मुझे आशा है महात्मा गाधीजी के अनुयायी काग्रेसवादी अपने को उनके और उनकी परम्परा के अनुरूप सिद्ध होगे। सारा देश शोक निमग्न है लेकिन अब भी हमे उनका सच्चा अनुयायी बनना चाहिये।

श्री शरच्चन्द्र बोस

राष्ट्रपिता गाधी जी की हत्या के दु:खद समाचार से जो असीम वेदना हुई, उसे शब्दो में व्यक्त नही किया जा सकता। अब अनाथ राष्ट्र की रक्षा का समस्त भार उस परमब्रह्म परमेश्वर पर है।

नवाब साहब भोपाल

मेरा २५ साल का अनुभव बतलाता है कि गान्धीजी नन्हे अबोध बच्चे की भाति सत्य प्रकाश से परिपूर्ण थे और अपने ईश्वर पर ऐसा अटल विश्वास रखते थे, जो पहाडो को हिला दे। वह महान त्यागी थे। उनके पास जो कुछ था उसको उन्होने दूसरो को भेट कर दिया, किन्तु अपने लिये कुछ भी पारिश्रमिक नहीं लिया। उनका तपस्वी जीवन और आत्म-ज्ञान तथा नैतिक शिक्षा केवल हिन्द के लिये ही नही थी, वरन् सारे विश्व के लिये थी। प्रकृति की यह अनूठी देन है कि उनका बलिदान हमको शोक-समुद्र मे न डाले रखकर अपना प्रभाव दिखलायेगा। यदि हम मौखिक ही उनके सद्‌गुणो का वर्णन करते रहे और उन्ही दुर्गणो मे फँसे रहें जिनसे कि वे हमें निकालना चाहते थे तो कुछ भी न होगा। कुरान-शरीफ में आया है, कि—सब चीजें अल्लाह की है और सब अल्लाह ही की तरफ लौट कर जाने वाली है। इसलिये प्रेम, शान्ति, सत्यता का यह सदेशवाहक अपना काम पूर्ण करके वही पहुँच गया, जहा से वह

आया था। मोहनदास, करमचन्द गान्धी प्रेम के पथ और कर्त्तव्य परायणता के लिये वलि हो चुके हैं। उन्हे हमारा विलाप वापिस नही ला सकता, परन्तु हम उनकी आत्मा को शान्ति इस भाति पहुचा सकते है कि हम उदारता के साथ उनकी वाणी का प्रचार करें। एक चीज हमको सदा स्मरण रखनी चाहिये कि हत्यारे की गोली ने तो महात्मा जी को कत्ल किया है किन्तु हम उनको दैनिक कत्ल करते रहेंगे, यदि हम उन सारी शक्तियो को (जो खुदाने दी है) मानव जाति के हितार्थ न लगायें। महात्मा जी की मृत्यु ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि ससार के कई महापुरुष अपने वनाये पथ और आदर्श शिक्षा के प्रभाव को जीते-जागते नही देख सकते।

विश्वविख्यात लेखिका श्रीमती पर्लवक

अमेरिका में पेंसिलवेनिया के निकट देहाती क्षेत्र मे एक गाव है पेरेक्सर। वही हमारी शातिमयी झोपडी है। ३१ जनवरी को वह दिन पिछले दिनोकी तरह ही प्रारंभ हुआ। हम सवेरे ही उठने के अभ्यासी है, क्योकि वच्चोको कुछ दूर स्कूल जाना पडता है। नित्य की तरह ही आज भी हम जलपान के लिए मेज के चारो ओर इकट्ठे हुए और साधारण वातचीत करने लगे। खिडकियो से वाहर घने हिमपात का दृश्य दिखलाई दे रहा था और आकाश की आभा भूरे रग की हो रही थी। हमारे वच्चो को शका हो रही थी कि कही और अधिक हिमपात न हो। एकाएक गृहपति कमरे में आये। उनकी मुखमुद्रा गभीर थी। उन्होने कहा—"रेडियो पर अभी एक अत्यन्त भयानक समाचार आया है।"

यह सुनकर हम सव उनकी ओर देखने लगे और तुरत ही हृदय-विदारक शब्द सुनाई पडे—"गाधीजी का देहावसान हो गया!"

मेरी इच्छा है कि भारत से हजारो मील दूर स्थित अमेरिका-निवासियो पर गाधीजी की मृत्यु से जो प्रतिक्रिया हुई, उसे भारतवासी जाने। हमलोगो ने हृदय को दहला देनेवाला यह सवाद सुना। यह साधारण मृत्यु नही है। गाधीजी शाति की प्रतिमूर्ति थे और उन्होने अपना सारा जीवन अपने देश की जनता की सेवा के लिये लगा दिया था। ऐसे शातिप्रिय व्यक्ति की हत्या कर दी गई। मेरे दस वर्ष के छोटे वच्चे की आख में आंसू छलकने लगे और उसने कहा—"मैं

चाहता हूँ कि यदि बदूक बनाने का आविष्कार ही न हुआ होता, तो बडा ही अच्छा था।"

हम लोगो मे से किसी ने भी कभी गाधीजी को नही देखा था, क्योकि जब हम लोग भारतवर्ष मे थे, तब गाधीजी सदा जेल में ही थे। फिर भी हम सभी उन्हे जानते थे। हमारे बच्चे गाधीजी की आकृति से इतने परिचित थे, मानो गाधीजी स्वय हमारे साथ घर में ही रहते थे। हमारे लिए गाधी जी ससार के इने-गिने महात्माओ में से एक महात्मा थे। पृथ्वी के उन गिने-चुने वीरो मे से वे एक थे, जो अपने विश्वास पर हिमालय की तरह अटल और दृढ रहते थे। उनके सम्बध में हमारी धारणा भी वैसी ही अटल है।

उनकी मृत्यु का समाचार सुनने के बाद हम परस्पर गाधीजी के जीवन और उनकी मृत्युसे होनेवाले सभावित परिणामो के सम्बन्ध मे बात-चीत करने लगे।

हमे भारतवर्ष पर गर्व है कि महात्मा गाधी जैसे महान् व्यक्ति भारतके अधिवासी थे, पर साथ ही हमे खेद भी है कि भारत के ही एक अधिवासी ने उनकी हत्या की। इस प्रकार दु खी और सतप्त हमलोग चुपचाप अपने दैनिक कार्यों में लग गए।

भारतवासी सभवत यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि हमारे देश मे गाधी जी का यश कितने व्यापक रूप में फैला था, वे यह जानकर आश्चर्यान्वित होगे ! मैं उनकी मृत्यु के एक घटे बाद सडक से होकर कही जा रही थी कि एक किसान ने मुझे रोका और पूछा—"संसार का प्रत्येक व्यक्ति सोचता था कि कि गाधीजी एक उत्तम व्यक्ति थे, तो फिर लोगो ने उन्हे मार क्यो डाला ?"

मैंने अपना सिर धुना और कुछ बोल न सकी। उसने सकेत से कहा—"जिस तरह लोगो ने महात्मा ईसा को मारा था, उसी तरह लोगो ने महात्मा गाधी को मार डाला !"

उस किसान ने ठीक ही कहा था कि महात्मा ईसा की सूली के अतिरिक्त ससार की किसी भी घटना की महात्मा गाधी की गौरवपूर्ण मृत्यु से तुलना नही हो सकती। गाधीजी की मृत्यु उन्ही के देशवासी द्वारा हुई। यह ईसा के सूली पर चढाए जाने के बाद दूसरी ही वैसी घटना है। ससार के वे लोग जिन्होंने गाधीजी को कभी नहीं देखा था, आज उनकी मृत्यु से शोक-सतप्त हो रहे है। वे ऐसे समय में मरे, जब उनका प्रभाव दुनियाँ के कोने-कोने में व्याप्त हो चुका था।

कुछ दिनो से अमेरिका-निवासियो मे महात्मा गाधी के प्रति वढती हुई श्रद्धा का अनुभव हम कर रहे थे। महात्मा गाधी के प्रति लोगो मे अगाध श्रद्धा थी।

महात्मा गाधी के प्रति जनता मे वास्तविक आदर था और हम लोगो को यह प्रतीत होने लगा था कि वे जो कुछ कह रहे थे, वही ठीक था।

आज अपने देश के अति उन्नत सैनिकीकरणके मध्य हमारी दृष्टि गाधी की ओर थी और यह प्रतीत होता था कि (युद्ध का नही वल्कि शाति का) गाधी का मार्ग ही ठीक है। हमारे समाचारपत्रो ने गाधी की इस नई शक्ति को पहचाना। इस महान् व्यक्ति के कारण भारत की अन्य देशो मे प्रतिष्ठा वढी। महात्मा गाधी के नेतृत्व मे होने वाले भारतीय स्वातत्र्य युद्ध की ओर हमारी दृष्टि गई, क्योकि उनका ढग राष्ट्रो के वीच के मतभेदो को शातिपूर्ण ढंगसे तय करने का था।

मै चाहती हूँ कि भारत के प्रत्येक नर-नारी के हृदय मे विश्वास करा दूँ कि उनके देश को अव अन्य देशवासी क्या समझते हैं। आज भारत केवल भारत ही नहीं है, वरन् वह ससार की मानव-जाति का प्रतीक है।

डाक्टर होम्स

कुछ लोगोने गाधीजीको गौतम वुद्धके वाद सवसे वडा महापुरुष वताया है। कुछ लोगोने ईसाके वाद सवसे वडा महापुरुप माना है, लेकिन मै वर्षो से गाधीजी को अव तक सृष्टिमे सवसे महान व्यक्ति और सवसे योग्य आध्यात्मिक देवदूत मानता हूँ। वे केवल मानवो मे सव से महान ही नही वल्कि सव से प्रिय भी थे। उनकी मृत्यु से मुझे व्यक्तिगत दुख का अनुभव हो रहा है, जिसमे मेरा हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा है। मै जानता हू कि जो कोई उन्हे जानता होगा या उन्हें देखा ही होगा, इसी प्रकार दुख का अनुभव करता होगा। मनुष्य की आत्मा पर उनका सिक्का विना जमे नही रहता था, अत उनकी शक्ति अपार थी। मुझे पूर्ण विश्वास है कि मृत्यु के वाद उन का प्रभाव जीवन से अधिक होगा। भ्रातृभाव और प्रेम के लिए उन्होने मृत्यु का आलिगन किया है। सभी मनुष्यो में उन्हो ने महत्तम कार्य के लिए अपने को निछावर कर दिया है, अत पृथ्वी पर जव तक एक भी मनुष्य जीवित रहेगा गाधी जी की स्मृति रहेगी।

रेजिनाल्ड सोरेन

लेनिन और महात्मा गाँधीको मैं विश्वमे बीसवी शताब्दिका सबसे महान् व्यक्ति मानता हू, यद्यपि दोनो एक-दूसरेके एकदम विपरीत है। इन दोनोमे श्री मोहनदास करमचद गान्धी वास्तवमे अत्यधिक प्रभावान्वित करनेवाले महा-पुरुष है। मै गान्धीजीसे प्रतिनिधि-मण्डलके साथ दो अवसरोपर मिला हू। उस समय वे मद्रासकी उस इमारतमे निवास कर रहे थे जो वहाकी एक विशाल सस्था मे ही थी। उनके द्वार पर सदा ही भीड लगी रहती थी। सवेरे नित्य ही गान्धीजी प्रार्थना करते थे, जिसमे सहस्रोकी सख्यामे लोग एकत्र होते थे।

हमलोग अर्धवृत्ताकारमे बैठे थे। गाँधीजी भूमिपर मध्यमे शुभ्र गद्देपर बैठे थे। बिजली जल रही थी। प्रथम दिन सन्ध्याके अनन्तर दो घन्टे तक हम पारस्परिक विचार-विनिमय तथा प्रश्नादि करते रहे। उस समय हमारे तथा महात्माजीके अतिरिक्त और कोई न था। वह अत्यन्त कुशल और विनोदी थे, किन्तु कभी-कभी गम्भीर रूपसे अपने पक्षके लिए दृढ हो जाते। विचार-विनिमय के अवसरपर प्रश्नपर उनका मस्तिष्क सदा कार्य करता रहता था, किन्तु उनके अपने विशेष ढङ्गसे। लेकिन उनकी उदारताकी पृष्ठभूमिमे अभेद्य दृढताकी भावना विद्यमान रहती थी। कभी-कभी उनके तर्क मे अप्रासगिकता एव परस्पर विरोधी बातें भी मालूम पडती है, किन्तु वह अपने आलोचकोके सुधारका सदा स्वागत करते थे। व्यक्तिगत रूपमे अप्रासगिकताके होते हुए भी महात्माजी को अपनी आत्मामे इस बातका विश्वास रहता था कि विषयके आग्रह एव हितकी दृष्टिसे उनमे साम्यमूलक सम्बन्ध रहता है। धार्मिक कर्त्तव्य-शास्त्रकी दृष्टिसे महात्माजीकी पहुच अत्यन्त गहराई तक थी, लेकिन साधारण राजनीतिज्ञको सकटमे डाल देती थी। वाद-विवादमे जो लोग प्रतिशोध एव शत्रुताकी भावना पैदा कर लेते है उन्हे यह बात अत्यन्त विचित्र प्रतीत होगी कि गान्धीजीने 'भारत छोडो' प्रश्नसे सम्बद्ध जब समस्त तर्क उपस्थित किया तो वह पूर्णत न्याययुक्त प्रतीत होता था। महात्माजी ने स्पष्ट शब्दो मे कहा—'भारत छोडो' योजनामे अगरेजोके प्रति तनिक भी घृणाका भाव नही। यदि हम उनसे डरते है तो घृणाकी भावना उत्पन्न होती

हैं। यदि भय के भाव का लोप हो जाता है तो घृणाका कही अस्तित्व ही नही रहता।

महात्माजी जो कुछ कहते थे वह शुद्ध और सच्चे अर्थमे। वह अपने देशवासियो को सत्य और स्वातन्त्र्यके लिए विना किसी विरोधी भावनासे युक्त हुए आगे कदम वढानेके लिए कहते थे। विरोधियोके लिए हृदयमे भ्रातृ-भावनासे युक्त होनेका सदा उनका आदेश रहता था। यह एक ऐसी असाधारण वस्तु है जो विरले राजनीतिक नेतामे पायी जाती है।

महात्मा गॉधीजीका व्यक्तित्व हम ब्रिटेनवासियोको कुछ विचित्र और चुनौती देनेवाला भले ही प्रतीत हो, किन्तु इस वातमें तनिक सन्देह नही किया जा सकता कि करोडो भारतीयोकी आवश्यकताओ एव आशाओके वे मूर्ति रूप थे। भारतीय जनताके लिए वह राजनीतिक नेता मात्र नही अपितु आराध्यदेव 'महात्मा' थे। प्राय. सभी प्रमुख ब्रिटिश नेताओने इस वातको स्वीकार किया है कि महात्माजी-सा प्रभावशाली अन्य कोई नही। विरोवी आलोचना तथा विपरीत विकासके लक्षणोके वावजूद वे पूर्ववत् शान्ति एव साम्यकी स्थितिमे रहते थे।

विविध

महात्मा गान्धी की शहादत को जल्द न भूलना चाहिये। उन्होने अल्प सख्यो और लाचारो के साथ इंसाफ करने की खातिर अपनी जान दे दी है। उन लोगो का, जो उनकी भक्ति पर गर्व करते है, कर्त्तव्य है, महात्मा जी के अधूरे काम को शीघ्र पूरा कर दिखाये। अगर हमने एकता, प्रेम और शान्ति का झडा लहरा दिया तो यह स्मृति इतिहास में हमारी देशभक्ति की अमर यादगार होगी।

—निजाम हैदराबाद

हिन्दुस्थान से और दुनियाँकी जिस ज्योति से सत्य, न्याय और मानवता का प्रकाश मिलता था वह बुझ गया है तथा असहाय का सहारा टूट गया है। इस निराशा और अधकार के समय हम उनके आदर्श को ग्रहण करे और उन्होने जो शान्ति, अहिंसा और मनुष्यमात्र को प्रेम की शिक्षा दी उसे अपने जीवन मे उतारे।

—श्री हसन शहीद सुहरावर्दी

यह कितना बडा दुर्भाग्य है कि महात्मा गान्धी की जिस समय सब से अधिक जरूरत थी, वह हमसे छीन लिये गये। भारत ने अपना सब से महान पुत्र खो दिया और उनकी मृत्यु इतिहास का सब से भीषण पाप समझा जायेगा।

—ख्वाजा नाजिमुद्दीन गर्वनर जनरल पाकिस्तान

वे हमारे युग के सब से महान व्यक्ति थे। जो व्यक्ति जीवन भर हिंसा का विरोध करता रहा हो, वही हिंसा का शिकार हो गया, यह एक अत्यन्त दु खद घटना है। उनके उठ जाने से ऐसी हानि हुई है, जिसकी पूर्ति नही हो सकती।

—मि० लियाकत अली खाँ

महात्माजी के निधन से भारत व पाकिस्तान दोनो उपनिवेशो को नुकसान पहुँचा है।

—सर जफरुल्ला

शान्ति के अग्रदूत की हत्या के पश्चात् भारत की पवित्र भूमि पर आततायियो का जोर न बढ सका।

—फिरोजखाँ नून

शताब्दियो के बाद ऐसे महापुरुष का प्रादुर्भाव हुआ था।

—डॉ इफ्तिखार हुसैन

राष्ट्र के पिता की मृत्यु से अपूर्णनीय क्षति हुई है, किन्तु उन्होने जो उदाहरण पेश किया है, उससे सदा हमारा नेतृत्व होता रहेगा। —सर अकबर हैदरी

हमे महात्मा जी की 'नृशस हत्या' की खबर असत्य प्रतीत हुई। गाधी जी ससार के सर्वश्रेष्ठ मानव थे। हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए वे शहीद हो गये। मानव का महान व्यक्तित्व खो गया। —खाँ अब्दुल कयूम खाँ

गाधी ससार के एक महान व्यक्ति थे, जिन्होने इतिहास की गति ही बदल दी।
—आई० आई० चुन्द्रीगर

गाधी जी जीवित अवस्था मे महान थे, किन्तु शहीद होने के बाद उनकी महानता और अधिक बढेगी। —बेगम शाहनवाज

शान्ति के राजकुमार महात्मा जो ईसा की तरह मर गये। —श्री आसफअली

गाधी जी अन्धकार मे प्रकाश थे। —खान अब्दुल गफ्फार खाँ

महात्मा गाधी की मृत्यु से एक महान पथ-प्रदर्शक उठ गया।
—डाक्टर खान साहब

विश्व का एक महापुरुष खो गया। —पीर मनकी शरीफ

गाधीजी चले गये लेकिन हम सब पर अपनी हत्या का प्रायश्चित्त छोड गये। विश्वभर मे उनकी कीर्ति अमर हो गई। —डा० सैयद महमूद

राष्ट्रीय भारत का वह मल्लाह किनारे पर नाव को लगाकर चला गया।
—रफी अहमद किदवाई

वह एक महान विभूति थे। उन्होने सच्चे सिपाही की डयूटी की और दुनियाँ की तारीख को सुनहरी कामयाबी कर दिखलाई। —मौलाना आजाद

मुझे और ईरानी हुकूमत को इन कामिल बुजुर्ग की जुदाई से बहुत सदमा है। खुदा, हिन्द पर रहम करे। —शाह रजाशाह पहलवी, (ईरान)

भारतीयो का वह नेता खो गया जिसने उन्हें स्वतन्त्रता दी, हमे भारतीयो के दुःख के साथ दुःख है। —डी वेलरा

शब्दो मे सामर्थ्य नही कि वे इस भयकर कृत्यजन्य भावना को व्यक्त कर सके—हमे भारत के साथ पूर्ण सहानुभूति है। —बेदिन

260